

ଶ୍ରୀମଦ୍ଭଗବତ୍

अनुक्रमणिका

१ मूलम्

| | | |
|--|--|----|
| न्यासः | | ix |
| ध्यानम् | | 1 |
| प्रथमोऽध्यायः—अर्जुनविषादयोगः | | 4 |
| द्वितीयोऽध्यायः—साङ्ख्ययोगः | | 8 |
| तृतीयोऽध्यायः—कर्मयोगः | | 14 |
| चतुर्थोऽध्यायः—ज्ञानकर्मसञ्च्यासयोगः | | 17 |
| पञ्चमोऽध्यायः—कर्मसञ्च्यासयोगः | | 21 |
| षष्ठोऽध्यायः—आत्मसंयमयोगः | | 23 |
| सप्तमोऽध्यायः—ज्ञानविज्ञानयोगः | | 27 |
| अष्टमोऽध्यायः—अक्षरब्रह्मयोगः | | 30 |
| नवमोऽध्यायः—राजविद्याराजगुह्ययोगः | | 32 |
| दशमोऽध्यायः—विभूतियोगः | | 35 |
| एकादशोऽध्यायः—विश्वरूपदर्शनयोगः | | 39 |
| द्वादशोऽध्यायः—भक्तियोगः | | 46 |
| त्रयोदशोऽध्यायः—क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगः | | 47 |
| चतुर्दशोऽध्यायः—गुणत्रयविभागयोगः | | 50 |
| पञ्चदशोऽध्यायः—पुरुषोत्तमयोगः | | 52 |
| षोडशोऽध्यायः—दैवासुरसम्पद्विभागयोगः | | 54 |
| सप्तदशोऽध्यायः—श्रद्धात्रयविभागयोगः | | 57 |

| | |
|--|-----------|
| अष्टादशोऽध्यायः—मोक्षसन्ध्यासयोगः | 59 |
| गीतामाहात्म्यम् | 66 |
| २ पदच्छेदः | 70 |
| न्यासः | 71 |
| ध्यानम् | 72 |
| प्रथमोऽध्यायः—अर्जुनविषादयोगः | 74 |
| द्वितीयोऽध्यायः—साङ्ख्ययोगः | 78 |
| तृतीयोऽध्यायः—कर्मयोगः | 84 |
| चतुर्थोऽध्यायः—ज्ञानकर्मसन्ध्यासयोगः | 87 |
| पञ्चमोऽध्यायः—कर्मसन्ध्यासयोगः | 91 |
| षष्ठोऽध्यायः—आत्मसंयमयोगः | 93 |
| सप्तमोऽध्यायः—ज्ञानविज्ञानयोगः | 97 |
| अष्टमोऽध्यायः—अक्षरब्रह्मयोगः | 100 |
| नवमोऽध्यायः—राजविद्याराजगुह्ययोगः | 102 |
| दशमोऽध्यायः—विभूतियोगः | 105 |
| एकादशोऽध्यायः—विश्वरूपदर्शनयोगः | 109 |
| द्वादशोऽध्यायः—भक्तियोगः | 116 |
| त्रयोदशोऽध्यायः—क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगः | 117 |
| चतुर्दशोऽध्यायः—गुणत्रयविभागयोगः | 120 |
| पञ्चदशोऽध्यायः—पुरुषोत्तमयोगः | 122 |
| षोडशोऽध्यायः—दैवासुरसम्पद्विभागयोगः | 124 |

| | |
|---|-----|
| सप्तदशोऽध्यायः—श्रद्धात्रयविभागयोगः | 127 |
| अष्टादशोऽध्यायः—मोक्षसन्ध्यासंयोगः | 129 |
| गीतामाहात्म्यम् | 136 |

३ श्लोकानुक्रमणिका

| | |
|-------------|-----|
| अ | 141 |
| आ | 142 |
| इ | 143 |
| ई | 144 |
| ऐ | 144 |
| उ | 144 |
| ऋ | 144 |
| ए | 144 |
| ओ | 145 |
| क | 145 |
| ग | 146 |
| च | 146 |
| ज | 146 |
| त | 146 |
| द | 147 |
| घ | 148 |
| न | 148 |
| प | 149 |
| ब | 150 |
| भ | 150 |

| | |
|---|-----|
| म | 150 |
| य | 151 |
| र | 153 |
| ल | 153 |
| व | 153 |
| श | 153 |
| स | 154 |
| ह | 155 |
| ॐ | 155 |

४ पदानुक्रमणिका

| | |
|---|-----|
| अ | 156 |
| आ | 157 |
| इ | 168 |
| ई | 171 |
| उ | 173 |
| ऊ | 173 |
| ऋ | 175 |
| ए | 175 |
| ऐ | 175 |
| ओ | 176 |
| औ | 176 |
| क | 177 |
| ख | 177 |
| ग | 182 |

| | |
|---|-----|
| घ | 184 |
| च | 184 |
| छ | 186 |
| ज | 186 |
| झ | 188 |
| त | 189 |
| द | 192 |
| ध | 196 |
| न | 197 |
| प | 200 |
| फ | 208 |
| ब | 208 |
| भ | 210 |
| म | 213 |
| य | 218 |
| र | 222 |
| ल | 223 |
| व | 224 |
| श | 230 |
| ष | 232 |
| स | 233 |
| ह | 242 |

॥श्री-गणेशाय नमः ॥
॥श्री-गुरुभ्यो नमः ॥
॥कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

प्रस्तावना

सदाशिवसमारभां शङ्कराचार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥

सर्वोपनिषदो गावः दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीर्भेक्ता दुर्धं गीतामृतं महत् ॥

कृष्णावतारः लीलावतारः इति प्रसिद्धः । रामावतारः मर्यादावतारः (गुणावतारः) । रामावतारात् धर्माचरणं ज्ञायते । किन्तु रामस्य वचनानि रामायणे (उपदेशरूपेण) विरलानि । यद्यपि रामः तत्र तत्र वदति, तथाऽपि सः आत्मानं मानुषं मत्वा अतिविनयेन क्रषि-महात्मनां वचनानि एव प्रकटीकरोति । अतः उपदेश-रूपेण यत्किञ्चिदेव लभ्यते । परन्तु कृष्णावतारे जगद्गुरुः कृष्णः स्वयमेव पुनः पुनः उपदेशं करोति । भगवान् व्यासः अस्मभ्यं महाभारतम् अनुगृहीतवान् । तत्र उपनिषद्-रूपेण भगवद्गीता वर्तते ।

श्रीमदाचार्यः शङ्करः अपि “मोह-मुद्रे (भज-गोविन्दम्)” इत्यस्मिन् स्तोले भगवद्गीतायाः महत्त्वं निर्दिशति—

भगवद्गीता किञ्चिदधीता
गङ्गाजललव-कणिका पीता ।
सकृदपि येन मुरारि समर्चा
क्रियते तस्य यमेन न चर्चा ॥

महाभारतेऽपि भगवद्गीतायाः महत्त्वं दृश्यते । “यत्र योगेश्वरः कृष्णः” इति गीतायाः प्रसिद्धः अन्तिमः श्लोकः । तत्पश्चाद् अग्रे (गीता-पर्वणि)—

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः ।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्माद् विनिःसृता ॥६-४३-१॥

सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वदेवमयो हरिः ।
सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो मनुः ॥६-४३-२॥

गीता गङ्गा च गायत्री गोविन्देति हृदि स्थिते ।
चतुर्गकारसंयुक्ते पुनर्जन्म न विद्यते ॥६-४३-३॥

इति श्लोकलयेण सङ्क्षिप्तेन गीतामाहात्यं वर्णितम् ।

यथा भगवद्गीतायां अर्जुनः वदति, “भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥१०-१८॥” ! तथैव वयमपि भगवद्गीतां पुनः पुनः पठित्वा आनन्दम् लभामहे । भगवद्गीतायाः माहात्म्यम् अन्यपुराणेषु अपि वर्ण्यते । वराहपुराणतः

भगवद्गीतायाः माहात्म्यम् अत प्रस्तुतम् । पद्मपुराणेऽपि भगवद्गीतायाः प्रत्येकस्य अध्यायस्य पठनस्य माहात्म्यं वर्णितम् । विशेषतः भगवद्गीतायाः पारायणं वैशाख-कार्तिक-मासयोः अन्तिम-लय-तिथि-पुण्यकालेषु अश्वमेधफलदायकम् इति प्रसिद्धम्—

गीतापाठं तु यः कुर्यादन्तिमे च दिनतये ।
दिनेदिनेऽश्वमेधानां फलमेति न संशयः ॥

—स्कान्द-महापुराणे वैष्णवखण्डे वैशाखमाहात्म्ये पञ्चविंशोऽध्याये श्लोकः २०/कार्तिकमाहात्म्ये षड्लिंशोऽध्याये श्लोकः ९

शिष्टाचारे मार्गशीर्ष-शुक्ल-एकादशी ‘गीता-जयन्ती’ इति अनुसियते । अस्यां तिथावपि भगवद्गीतायाः पारायणं कुर्मः ।

अध्येष्ठते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः ।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥१८-७०॥

इति भगवतः योगेश्वरस्य श्रीकृष्णस्य वचनं स्मृत्वा तस्य पादारविन्दयोः प्रणमामः ॥

सर्वम् श्री-कृष्णार्पणमस्तु ॥

पौष-शुक्ल-पूर्णिमा

कार्तिकः रामसूनूः

विश्वावसु-संवत्सरः ५१२७ धनुः १८

सर्वज्ञात्म-प्रतिष्ठानम्

January 2, 2026

Colophon

This document is organised into four parts: (1) मूलम् (*Bhagavadgītā Mūlam*), (2) पदच्छेदः (Word Splits), (3) श्लोकानुक्रमणिका (Index of Verses), and (4) पदानुक्रमणिका (Word Index). The indices (3) and (4) were generated using a custom Python script co-developed with Gemini 3.0 Pro. All source materials are available at <http://github.com/Stotrasamhita/gita/>) for adaptation and re-use. Key features include:

- 1. Bidirectional Linking:** The मूलम् and पदच्छेदः are hyperlinked to each other. Clicking on any shloka **number** in the मूलम् takes you ‘forward’ to the corresponding split in the पदच्छेदः, while clicking the number in the पदच्छेदः brings you back to the मूलम्.
- 2. Visual Continuity:** The two parts are typeset in sync to minimise visual disturbance during this back-and-forth navigation, allowing the splits to *appear* seamlessly!

3. **Verse Index:** The **श्लोकानुक्रमणिका** features a lexically ordered list of *shloka-pāda-s* (similar to the format seen in certain *Purāṇa-s* published by Nag Publishers). Chapter and verse numbers are listed adjacently, with direct hyperlinks to the verse in the **मूलम्**.
4. **Word Index:** The **पदानुक्रमणिका** presents a lexically ordered concordance of individual *pada-s* (words) across all eighteen chapters, comprising over 3,800 unique entries. Listed against each *pada* are the corresponding verse numbers, which are also hyperlinked.
5. **Editorial Choices:** I have worked to ensure consistent hyphenation in the **मूलम्** and logical word splits to facilitate easier reading. I have also employed *avagraha-s* (s) carefully—following the convention of several older texts—to indicate *akāra-s* in *dīrgha sandhi-s*.

The Bhagavad Gītā is exceptional in many ways, not least for its simple, accessible language. It is a boon for learners too—I hope that this rendition will help students of *Samskṛtam* delve deeper, both into the language and into the depths of *Vedānta* in the Bhagavad Gītā!

Acknowledgments

Really grateful to all the selfless volunteers who have proofread various texts of Gita, and some excellent resources on archive.org, including Shankara Bhashyam, Gita Press Padachcheda and so on. Special thanks to Arindam Saha for a high quality CSV with pada splits, which I have been correcting and improving. Ever grateful to H. L. Prasad for the core shloka typesetting macros, a gift that keeps on giving! After all these years, I still cannot fathom the brilliance of Knuth in conceiving TeX, which seems to have gone way beyond its original mandate and delivering high-quality unicode documents! Krishna Krishna Krishna!

Last updated: January 14, 2026

विभागः १

मूलम्

॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

॥न्यासः॥

॥करन्यासः॥

ॐ अस्य श्रीमद्भगवद्गीतामालामन्त्रस्य।

भगवान्वेदव्यास ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः।

श्रीकृष्ण परमात्मा देवता।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे इति बीजम्।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज इति शक्तिः।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच इति कीलकम्।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत इति तर्जनीभ्यां नमः।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च इति मध्यमाभ्यां नमः। नित्यः सर्वगतः

स्थाणुरचलोऽयं सनातन इत्यनामिकाभ्यां नमः। पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश

इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णकृतीनि

च इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

॥इति करन्यासः॥

॥हृदयादि न्यासः॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इति हृदयाय नमः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत इति शिरसे स्वाहा।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव चेति शिखायै वषट्।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातन इति कवचाय हुम्।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश इति नेत्रत्रयाय वौषट्।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णकृतीनि चेति अस्त्राय फट्।

॥श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः॥

॥ध्यानम्॥

ॐ पार्थाय प्रतिबोधितां भगवता नारायणेन स्वयं
व्यासेन ग्रथितां पुराणमुनिना मध्ये महाभारतम्।
अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीमष्टादशाध्यायिनीम्
अम्ब त्वामनुसन्दधामि भगवद्गीते भवद्वेषिणीम्॥१॥

नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुलारविन्दायतपत्रनेत्र।
येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥२॥

प्रपन्नपारिजाताय तोत्रवेत्रैकपाणये।
ज्ञानमुद्राय कृष्णाय गीतामृतदुहे नमः॥३॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भेत्का दुग्धं गीतामृतं महत्॥४॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्माद्-विनिःसृता॥५॥

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम्।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥६॥

भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोपला
शल्यग्राहवती कृपेण वहनी कर्णेन वेलाकुला।
अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा दुर्योधनावर्तिनी
सोत्तीर्णा खलु पाण्डवै रणनदी कैवर्तकः केशवः॥७॥

पाराशर्यवचः सरोजममलं गीतार्थगन्धोत्कटं
नानाख्यानककेसरं हरिकथासम्बोधनाबोधितम्।
लोके सञ्जनषद्वैरहरहः पेपीयमानं मुदा
भूयाद्भारतपङ्कजं कलिमलप्रध्वंसि नः श्रेयसे॥८॥

मूकं करोति वाचालं पङ्कुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्॥९॥

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र-रुद्र-मरुतः स्तुवन्ति दिव्यैः स्तवैः
वेदैः साङ्ग-पद-ऋगोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित-तद्वतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनः
यस्यान्तं न विदुः सुरासुर-गणा देवाय तस्मै नमः॥१०॥

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥११॥

॥ प्रथमोऽध्यायः—अर्जुनविषादयोगः ॥

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्वैव किमकुर्वत सञ्जय॥१॥

सञ्जय उवाच

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत्॥२॥

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम्।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता॥३॥

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः॥४॥

धृष्टकेतुश्वेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित् कुन्तिभोजश्च शैव्यश्च नरपुङ्गवः॥५॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः॥६॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते॥७॥

भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च॥८॥

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थं त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः॥९॥

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्॥१०॥

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि॥११॥

तस्य सञ्जनयन् हर्ष कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान्॥१२॥

ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्॥१३॥

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महीति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः॥१४॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः॥१५॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ॥१६॥

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः॥१७॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान् दध्मुः पृथक् पृथक्॥१८॥

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन्॥१९॥

अथ व्यवस्थितान् दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्घम्य पाण्डवः॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।

अर्जुन उवाच

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत॥२१॥

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्घमे॥२२॥

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः॥२३॥

सञ्जय उवाच

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम्॥२४॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थं पश्यैतान् समवेतान् कुरुनिति॥२५॥

तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः पितृनथं पितामहान्।
आचार्यान् मातुलान् भ्रातृन् पुत्रान् पौत्रान् सर्खींस्तथा॥२६॥

श्वशुरान् सुहृदश्वैव सेनयोरुभयोरपि।
तान् समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान् बन्धूनवस्थितान्॥२७॥

कृपया परयाऽऽविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्।

अर्जुन उवाच

दृष्टेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्॥२८॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते॥२९॥

गाण्डीवं स्नासते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते।
न च शक्रोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः॥३०॥

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे॥३१॥

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नो राज्येन गोविन्दं किं भोगैर्जीवितेन वा॥३२॥

येषामर्थं काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्षा धनानि च॥३३॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा॥३४॥

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्रतोऽपि मधुसूदन।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते॥३५॥

निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याङ्गनार्दन।
पापमेवाऽश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः॥३६॥

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव॥३७॥

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम्॥३८॥

कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्विर्जनार्दन॥३९॥

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत॥४०॥

अधर्माभिभवात् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्ण्यं जायते वर्णसङ्करः॥४१॥

सङ्करो नरकायैव कुलघ्रानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुतपिण्डोदकक्रियाः॥४२॥

दोषैरेतैः कुलघ्रानां वर्णसङ्करकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्मश्च शाश्वताः॥४३॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरकेऽनियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम॥४४॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद् राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः॥४५॥

यदि मामप्रतीकारम् अशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्र रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत्॥४६॥

सङ्ख्य उवाच

एवमुक्ताऽर्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्रमानसः॥४७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
अर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः—साङ्ख्योगः ॥

सङ्ख्य उवाच

तं तथा कृपयाऽविष्टम् अश्रुपूर्णकुलेक्षणम्।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुनं ॥२॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत् त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्तोत्तिष्ठ परन्तप॥३॥

अर्जुन उवाच

कथं भीष्ममहं सङ्ख्ये द्रोणं च मधुसूदन।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन॥४॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावान्
श्रेयो भोक्तुं भैश्यमपीह लोके।
हत्वाऽर्थकामांस्तु गुरूनिहैव
भुञ्जीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान्॥५॥

न चैतद् विद्यः कतरन्नो गरीयो
यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः।
यानेव हत्वा न जिजीविषामः
तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः॥६॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥७॥

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्
यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् ।
अवाप्य भूमावसपलमृद्धं
राज्यं सुराणामपि चाऽऽधिपत्यम्॥८॥

सङ्ख्य उवाच

एवमुखा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तपः।
न योत्स्य इति गोविन्दमुखा तूष्णीं बभूव ह॥१॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः॥१०॥

श्रीभगवानुवाच

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः॥११॥

न त्वेवाहं जातु नाऽऽसं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्॥१२॥

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥१३॥

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णासुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत॥१४॥

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते॥१५॥

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥१६॥

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित् कर्तुमर्हति॥१७॥

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद् युध्यस्व भारत॥१८॥

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते॥१९॥

न जायते म्रियते वा कदाचित्
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥२०॥

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्॥२१॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि
अन्यानि संयाति नवानि देही॥२२॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥२३॥

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥२४॥

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥२५॥

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्।
तथाऽपि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि॥२६॥

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्धुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थं न त्वं शोचितुमर्हसि॥२७॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना॥२८॥

आश्र्यवत् पश्यति कश्चिदेनम्
आश्र्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्र्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाऽप्येनं वेद न चैव कश्चित्॥२९॥

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात् सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि॥३०॥

स्वर्धर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्वि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते॥३१॥

यदच्छ्रया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदशम्॥३२॥

अथ चेत्त्वमिमं धर्मं सङ्ग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥३३॥

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्याम्।
सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते॥३४॥

भयाद् रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्॥३५॥

अवाच्यवादांश्च बहून् वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम्॥३६॥

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥३७॥

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥३८॥

एषा तेऽभिहिता साङ्घे बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु।
बुद्ध्या युक्तो यया पार्थं कर्मबन्धं प्रहास्यसि॥३९॥

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥४०॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्ध्योऽव्यवसायिनाम्॥४१॥

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः।
वेदवादरताः पार्थं नान्यदस्तीति वादिनः॥४२॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्।
क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति॥४३॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयाऽपहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते॥४४॥

त्रैगुण्यविषया वेदा निरैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्॥४५॥

यावानर्थं उदपाने सर्वतः सम्पूतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥४६॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥४७॥

योगस्थः कुरु कर्मणि सङ्गं त्यक्ता धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥४८॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद् धनञ्जय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः॥४९॥

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद् योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्॥५०॥

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्ता मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम्॥५१॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च॥५२॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्यसि॥५३॥

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत ब्रजेत किम्॥५४॥

श्रीभगवानुवाच

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थं मनोगतान्।
आत्मन्येवाऽऽत्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥५५॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥५६॥

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत् तत् प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५७॥

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेऽभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५८॥

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं द्वचा निवर्तते॥५९॥

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपक्षितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसर्वं मनः॥६०॥

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६१॥

ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते॥६२॥

क्रोधाद् भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥६३॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्वरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति॥६४॥

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥६५॥

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्॥६६॥

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाभ्यसि॥६७॥

तस्माद् यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेऽभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६८॥

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥६९॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥७०॥

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति॥७१॥

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥७२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
साङ्घ्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥

॥तृतीयोऽध्यायः—कर्मयोगः ॥

अर्जुन उवाच

ज्यायसी चेत् कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन।
तत् किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव॥१॥

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे।
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमप्युयाम्॥२॥

श्रीभगवानुवाच

लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयाऽनघ।
ज्ञानयोगेन साङ्घानां कर्मयोगेन योगिनाम्॥३॥

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्रुते।
न च सन्ध्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति॥४॥

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥५॥

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥६॥

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्याऽरभतेऽर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते॥७॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः॥८॥

यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्खः समाचर॥९॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥१०॥

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥११॥

इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्गे स्तेन एव सः॥१२॥

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥१३॥

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥१४॥

कर्म ब्रह्मोद्भवं विष्णि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥१५॥

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥१६॥

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृपत्त्वं मानवः।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते॥१७॥

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कक्षन्।
न चास्य सर्वभूतेषु कक्षिदर्थव्यपाश्रयः॥१८॥

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥१९॥

कर्मणैव हि संसिद्धिम् आस्थिता जनकादयः।
लोकसङ्घंहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि॥२०॥

यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत् तदेवेतरो जनः।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥२१॥

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन।
नानवासमवासव्यं वर्त एव च कर्मणि॥२२॥

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वत्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥२३॥

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्।
सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः॥२४॥

सत्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद् विद्वांस्तथाऽसत्तश्चिकीर्षुर्लोकसङ्ग्रहम्॥२५॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्ग्निनाम्।
जोषयेत् सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन्॥२६॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताॽहमिति मन्यते॥२७॥

तत्त्ववित् तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणा गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सञ्चते॥२८॥

प्रकृतेर्गुणसमूढाः सञ्चन्ते गुणकर्मसु।
तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्न विचालयेत्॥२९॥

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्ध्यस्याध्यात्मचेतसा।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः॥३०॥

ये मे मतमिदं नित्यम् अनुतिष्ठन्ति मानवाः।
श्रद्धावन्तोॽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः॥३१॥

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्।
सर्वज्ञानविमूढांस्तान् विद्धि नष्टानचेतसः॥३२॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥३३॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थं रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोर्न वशमागच्छेत् तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ॥३४॥

श्रेयान् स्वर्घर्मा विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वर्घर्मे निधनं श्रेयः परधर्मे भयावहः॥३५॥

अर्जुन उवाच

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः॥३६॥

श्रीभगवानुवाच

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्॥३७॥

धूमेनाऽऽत्रियते वहिर्यथाऽऽदर्शो मलेन च।
यथोल्बेनाऽऽवृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्॥३८॥

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिण।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च॥३९॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते।
एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम्॥४०॥

तस्मात् त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभा।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्॥४१॥

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः॥४२॥

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तम्याऽत्मानमात्मना।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्॥४३॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
कर्मयोगो नाम तृतीयोऽध्यायः॥

॥ चतुर्थोऽध्यायः—ज्ञानकर्मसन्ध्यासयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥१॥

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप॥२॥

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्॥३॥

अर्जुन उवाच

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः।
कथमेतद् विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति॥४॥

श्रीभगवानुवाच

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥५॥

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥६॥

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽत्मानं सृजाम्यहम्॥७॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥८॥

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्ता देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥९॥

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥१०॥

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥११॥

काङ्क्षान्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा॥१२॥

चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विदध्यकर्तारमव्ययम्॥१३॥

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते॥१४॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वेणपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्मेव तस्मात् त्वं पूर्वेः पूर्वतरं कृतम्॥१५॥

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥१६॥

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥१७॥

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥१८॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः॥१९॥

त्यक्ता कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित् करोति सः॥२०॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाऽप्नोति किल्बिषम्॥२१॥

यद्यच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वाऽपि न निबध्यते॥२२॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाऽचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥२३॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हर्विर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना॥२४॥

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति॥२५॥

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति।
शब्दादीन् विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति॥२६॥

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते॥२७॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथाऽपरे।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः॥२८॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथाऽपरे।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः॥२९॥

अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः॥३०॥

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम॥३१॥

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे।
कर्मजान् विद्धि तान् सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे॥३२॥

श्रेयान् द्रव्यमयाद् यज्ञाज्ञानयज्ञः परन्तप।
सर्वं कर्माखिलं पार्थं ज्ञाने परिसमाप्यते॥३३॥

तद् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥३४॥

यज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव।
येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि॥३५॥

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानपूर्वेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि॥३६॥

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा॥३७॥

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।
तत् स्वयं योगसंसिद्धः कालेनाऽत्मनि विन्दति॥३८॥

श्रद्धावॉल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति॥३९॥

अज्ञश्चाश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः॥४०॥

योगसन्ध्यस्तकर्मणं ज्ञानसञ्छिन्नसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय॥४१॥

तस्मादज्ञानसमूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनाऽत्मनः।
छित्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत॥४२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
ज्ञानकर्मसन्ध्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः॥

॥पञ्चमोऽध्यायः—कर्मसन्ध्यासयोगः ॥

अर्जुन उवाच

सन्ध्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्॥१॥

श्रीभगवानुवाच

सन्ध्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसन्ध्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते॥२॥

ज्ञेयः स नित्यसन्ध्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात् प्रमुच्यते॥३॥

साङ्घ्ययोगौ पृथग् बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम्॥४॥

यत् साङ्घ्यैः प्राप्यते स्थानं तद् योगैरपि गम्यते।
एकं साङ्घं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥५॥

सन्ध्यासस्तु महाबाहो दुःखमासुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति॥६॥

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥७॥

नैव किञ्चित् करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्चृणवन् स्पृशञ्चिप्रनश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन्॥८॥

प्रलपन् विसृजन् गृह्णन्नमिषन्नमिषन्नपि।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्॥९॥

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्ता करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाभ्वसा॥१०॥

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्ताऽऽत्मशुद्धये॥११॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्ता शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते॥१२॥

सर्वकर्माणि मनसा सन्ध्यस्याऽस्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्ते कारयन्॥१३॥

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते॥१४॥

नाऽऽदत्ते कस्यचित् पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनाऽवृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः॥१५॥

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यवज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्॥१६॥

तद् बुद्ध्यस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत् परायणाः।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्पषाः॥१७॥

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥१८॥

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः॥१९॥

न प्रहृष्टेत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत् प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः॥२०॥

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत् सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमक्षुते॥२१॥

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥२२॥

शक्रोतीहैव यः सोदुं प्राक् शरीरविमोक्षणात्।
कामक्रोधोऽद्ववं वेगं स युक्तः स सुखी नरः॥२३॥

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथाऽन्तज्योतिरेव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति॥२४॥

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्पषाः।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः॥२५॥

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम्।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम्॥२६॥

स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बह्यांश्वक्षुश्वैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ॥२७॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिमुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः॥२८॥

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति॥२९॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
कर्मसन्ध्यासयोगो नाम पञ्चमोऽध्यायः॥

॥षष्ठोऽध्यायः—आत्मसंयमयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स सन्ध्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥१॥

यं सन्ध्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
न ह्यसन्ध्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन॥२॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते॥३॥

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषङ्गते।
सर्वसङ्कल्पसन्ध्यासी योगारूढस्तदोच्यते॥४॥

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नाऽऽत्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥५॥

बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनाऽऽत्मैवाऽऽत्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेताऽऽत्मैव शत्रुवत्॥६॥

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णासुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः॥७॥

ज्ञानविज्ञानतृपात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाशमकाश्चनः॥८॥

सुहन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥९॥

योगी युज्ञीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥१०॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्॥११॥

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्याऽऽसने युञ्ज्याद् योगमात्मविशुद्धये॥१२॥

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्॥१३॥

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः॥१४॥

युञ्जन्नेवं सदाऽऽत्मानं योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति॥१५॥

नात्यश्रतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्रतः।
न चातिस्वप्रशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन॥१६॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्रावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥१७॥

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा॥१८॥

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः॥१९॥

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवाऽऽत्मनाऽऽत्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्ट्यति॥२०॥

सुखमात्यन्तिकं यत् तद् बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वैति यत्र न चैवायं स्थितश्वलति तत्त्वतः॥२१॥

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणाऽपि विचाल्यते॥२२॥

तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा॥२३॥

सङ्कल्पप्रभवान् कामांस्त्यक्ता सर्वानशेषतः।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः॥२४॥

शनैः शनैरुपरमेद् बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत्॥२५॥

यतो यतो निश्चरति मनश्वलमस्थिरम्।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्॥२६॥

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मणम्॥२७॥

युञ्जन्नेवं सदाऽऽत्मानं योगी विगतकल्मणः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्रुते॥२८॥

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चाऽऽत्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥२९॥

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥३०॥

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥३१॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥३२॥

अर्जुन उवाच

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि चश्वलत्वात् स्थितिं स्थिराम्॥३३॥

चश्वलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥३४॥

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥३५॥

असंयतात्मना योगो दुष्ट्राप इति मे मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवासुमुपायतः॥३६॥

अर्जुन उवाच

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति॥३७॥

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छन्नाभ्रमिव नश्यति।
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि॥३८॥

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः।
त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते॥३९॥

श्रीभगवानुवाच

पर्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत् कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति॥४०॥

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥४१॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम्।
एतद्वि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम्॥४२॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥४३॥

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिर्वर्तते॥४४॥

प्रयत्नाद् यत्मानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्॥४५॥

तपस्मिन्योऽधिको योगी ज्ञानिन्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिन्यश्चाधिको योगी तस्माद् योगी भवार्जुन॥४६॥

योगिनामपि सर्वेषां मद्भतेनान्तरात्मना।
श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥४७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
आत्मसंयमयोगो नाम पष्ठोऽध्यायः॥

॥ सप्तमोऽध्यायः—ज्ञानविज्ञानयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु॥१॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ञातव्यमवशिष्यते॥२॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥३॥

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥४॥

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभृतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥५॥

एतद् योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा॥६॥

मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदिस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥७॥

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभाऽस्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु॥८॥

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्त्विषु॥९॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्त्विनामहम्॥१०॥

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ॥११॥

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान् विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि॥१२॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्॥१३॥

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥१४॥

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययाऽपहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥१५॥

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥१६॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः॥१७॥

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्॥१८॥

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥१९॥

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥२०॥

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयाऽर्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्॥२१॥

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्या राधनमीहते।
लभते च ततः कामान् मयैव विहितान् हि तान्॥२२॥

अन्तवत् तु फलं तेषां तद् भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान् देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥२३॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥२४॥

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढौऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्॥२५॥

वेदाहं समर्तीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥२६॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गं यान्ति परन्तप॥२७॥

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः॥२८॥

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद् विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम्॥२९॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः॥३०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः॥

॥ अष्टमोऽध्यायः—अक्षरब्रह्मयोगः ॥

अर्जुन उवाच

किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते॥१॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन् मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः॥२॥

श्रीभगवानुवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः॥३॥

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर॥४॥

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुख्या कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥५॥

यं यं वाऽपि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद् भावभावितः॥६॥

तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मर्यपितमनोबुद्धिर्ममैवैष्यस्यसंशयः॥७॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्॥८॥

कविं पुराणम् अनुशासितारम्
अनोरणीयांसम् अनुस्मरेद् यः।
सर्वस्य धातारम् अचिन्त्यरूपम्
आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्॥९॥

प्रयाणकाले मनसाऽचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्॥१०॥

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद् यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत् ते पदं सङ्घेण प्रवक्ष्ये॥११॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुद्ध्य च।
मूर्ध्याधायाऽऽत्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्॥१२॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम्॥१३॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥१४॥

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाऽप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥१५॥

आब्रह्मभुवनालोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥१६॥

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः॥१७॥

अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके॥१८॥

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थं प्रभवत्यहरागमे॥१९॥

परस्तस्मात् तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात् सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥२०॥

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद् धामं परमं मम॥२१॥

पुरुषः स परः पार्थं भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्॥२२॥

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभा॥२३॥

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः॥२४॥

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निर्वर्तते॥२५॥

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽवर्तते पुनः॥२६॥

नैते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कक्षन्।
तस्मात् सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन॥२७॥

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव
दानेषु यत् पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत् सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाऽऽद्यम्॥२८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
अक्षरब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः॥

॥नवमोऽध्यायः—राजविद्याराजगुह्ययोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ञात्वा मोक्षसेऽशुभात्॥१॥

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्॥२॥

अश्रद्धानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप।
अप्राप्य मां निर्वर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि॥३॥

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्वस्थितः॥४॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभूत्र च भूतस्थो ममाऽत्मा भूतभावनः॥५॥

यथाऽकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय॥६॥

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम्॥७॥

प्रकृतिं स्वामवष्टम्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्॥८॥

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु॥९॥

मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनाऽनेन कौन्तेय जगद् विपरिवर्तते॥१०॥

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥११॥

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥१२॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैर्वीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम्॥१३॥

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढब्रताः।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥१४॥

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्केन बहुधा विश्वतोमुखम्॥१५॥

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाऽहमहमौषधम्।
मत्रोऽहमहमेवाऽज्यमहमग्निरहं हुतम्॥१६॥

पिताऽहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक् साम यजुरेव च॥१७॥

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्॥१८॥

तपाम्यहमहं वर्षं निगृण्हाम्युत्सूजामि च।
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन॥१९॥

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापाः
यज्ञेरिष्टा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकम्
अश्रन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान्॥२०॥

ते तं भुक्षा स्वर्गलोकं विशालं
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्नाः
गतागतं कामकामा लभन्ते॥२१॥

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥२२॥

ये ऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयाऽन्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥२३॥

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते॥२४॥

यान्ति देवब्रता देवान् पितृन् यान्ति पितृब्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्॥२५॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥२६॥

यत् करोषि यदश्नासि यज्ञुहोषि ददासि यत्।
यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम्॥२७॥

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्ध्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि॥२८॥

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥२९॥

अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हि सः॥३०॥

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्ति निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥३१॥

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्॥३२॥

किं पुनर्ब्राह्मणः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्॥३३॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्तैवमात्मानं मत्परायणः॥३४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः॥

॥दशमोऽध्यायः—विभूतियोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
यत् तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया॥१॥

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः॥२॥

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३॥

बुद्धिर्ज्ञनमसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च॥४॥

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः।
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः॥५॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा।
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥६॥

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः॥७॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥८॥

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥९॥

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥१०॥

तेषामेवानुकम्पार्थम् अहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥११॥

अर्जुन उवाच

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम्॥१२॥

आहस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिनारदस्तथा।
अस्मितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे॥१३॥

सर्वमेतद्वतं मन्ये यन्मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः॥१४॥

स्वयमेवाऽत्मनाऽत्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥१५॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥१६॥

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन् मया॥१७॥

विस्तरेणाऽत्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृसिर्हि शृण्वतो नास्ति मे ऽमृतम्॥१८॥

श्रीभगवानुवाच

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥१९॥

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥२०॥

आदित्यानामहं विष्णुज्योतिषां रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी॥२१॥

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना॥२२॥

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्॥२३॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विष्णि पार्थ बृहस्पतिम्।
सैनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः॥२४॥

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्येकमक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः॥२६॥

उच्चैःश्रवसमधानां विष्णि माममृतोद्भवम्।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम्॥२७॥

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पणामस्मि वासुकिः॥२८॥

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्।
पितृणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम्॥२९॥

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम्।
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम्॥३०॥

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभूतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्वी॥३१॥

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम्॥३२॥

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः कालो धाताऽहं विश्वतोमुखः॥३३॥

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीर्वाक् च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा॥३४॥

बृहत्साम तथा साम्रां गायत्री छन्दसामहम्।
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः॥३५॥

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्॥३६॥

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः।
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः॥३७॥

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम्॥३८॥

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत् स्यान्मया भूतं चराचरम्॥३९॥

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एष तूदेशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥४०॥

यद् यद् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत् तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंशसम्भवम्॥४१॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्मेकांशेन स्थितो जगत्॥४२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः॥

॥ एकादशोऽध्यायः—विश्वरूपदर्शनयोगः ॥

अर्जुन उवाच

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम्।
यत् त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम॥१॥

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वतः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम्॥२॥

एवमेतद् यथाऽऽत्थ त्वमात्मानं परमेश्वर।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम॥३॥

मन्यसे यदि तच्छकं मया द्रष्टुमिति प्रभो।
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयाऽऽत्मानमव्ययम्॥४॥

श्रीभगवानुवाच

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च॥५॥

पश्याऽऽदित्यान् वसून् रुद्रानश्चिनो मरुतस्तथा।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याऽश्चर्याणि भारत॥६॥

इहैकस्थं जगत् कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम्।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमिच्छसि॥७॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम्॥८॥

सञ्जय उवाच

एवमुक्ता ततो राजन् महायोगेश्वरो हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम्॥९॥

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्युतदर्शनम् ।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्॥१०॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्र्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम्॥११॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद् युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद् भासस्तस्य महात्मनः॥१२॥

तत्रैकस्थं जगत् कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद् देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा॥१३॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत॥१४॥

अर्जुन उवाच

पश्यामि देवांस्तव देव देहे
सर्वास्तथा भूतविशेषसङ्घान्।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थम्
ऋषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्॥१५॥

अनेकबाहूदरवक्रनेत्रं
पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम्।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवाऽऽदिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥१६॥

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम्।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्
दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥१७॥

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं
त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता
सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥१८॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यम्
अनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम्।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्रं
स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम्॥१९॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि
व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।
दृष्टाऽङ्गुतं रूपमुग्रं तवेदं
लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन्॥२०॥

अमी हि त्वां सुरसङ्घां विशन्ति
केचिद् भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति।
स्वस्तीत्युक्ता महर्षिसिद्धसङ्घाः
स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः॥२१॥

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्याः
विश्वेश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च।
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घाः
वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे॥२२॥

रूपं महत् ते बहुवक्त्रनेत्रं
महाबाहो बहुबाहूरूपादम्।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं
दृष्टा लोकाः प्रव्यथितास्तथाऽहम्॥२३॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं
व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्टा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा
धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो॥२४॥

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि
दृष्टैव कालानलसन्निभानि।
दिशो न जाने न लभे च शर्म
प्रसीद देवेश जगन्निवास॥२५॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सहैवावनिपालसङ्घैः।
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथाऽसौ
सहास्मदीयेरपि योधमुख्यैः॥२६॥

वक्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति
 दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
 केचिद् विलग्ना दशनान्तरेषु
 सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः॥२७॥

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः
 समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
 तथा तवामी नरलोकवीरा
 विशन्ति वक्राण्यभिविज्वलन्ति॥२८॥

यथा प्रदीपं ज्वलनं पतञ्जाः
 विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
 तथैव नाशाय विशन्ति लोकाः
 तवापि वक्राणि समृद्धवेगाः॥२९॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्तात्
 लोकान् समग्रान् वदनैर्ज्वर्लद्धिः।
 तेजोभिरापूर्य जगत् समग्रं
 भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो॥३०॥

आख्याहि मे को भवानुग्रहूपो
 नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।
 विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं
 न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम्॥३१॥

श्रीभगवानुवाच

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धो
 लोकान् समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
 क्रतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
 येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥३२॥

तस्मात् त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व
 जित्वा शत्रून् भुङ्ग राज्यं समृद्धम्।
 मयैवैते निहताः पूर्वमेव
 निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्॥३३॥

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च
कर्णं तथाॽन्यानपि योधवीरान्।
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा
युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्॥३४॥

सञ्जय उवाच

एतच्छुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूय एवाऽऽह कृष्णं
सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य॥३५॥

अर्जुन उवाच

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या
जगत् प्रहृष्टत्यनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति
सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः॥३६॥

कस्माच्च ते न नमेरन् महात्मन्
गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रै।
अनन्त देवेश जगन्निवास
त्वमक्षरं सदसत् तत् परं यत्॥३७॥

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः
त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्ताऽसि वेद्यं च परं च धाम
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप॥३८॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः
प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः
पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते॥३९॥

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते
नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं
सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः॥४०॥

सखेति मत्वा प्रसर्म यदुक्तं
हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।
अजानता महिमानं तवेदं
मया प्रमादात् प्रणयेन वाऽपि॥४१॥

यच्चावहासार्थमसत् कृतोऽसि
विहारशश्यासनभोजनेषु ।
एकोऽथवाऽप्यच्युत तत् समक्षं
तत् क्षामये त्वामहमप्रमेयम्॥४२॥

पिताऽसि लोकस्य चराचरस्य
त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो
लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥४३॥

तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायं
प्रसादये त्वामहमीशमीङ्गम्।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः
प्रियः प्रियायाऽर्हसि देव सोदुम्॥४४॥

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्टा
भयैन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देव रूपं
प्रसीद देवेश जगन्निवास॥४५॥

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तम्
इच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन
सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥४६॥

श्रीभगवानुवाच

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं
रूपं परं दर्शितमात्मयोगात्।
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं
यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम्॥४७॥

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैः
न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः।
एवं रूपः शक्य अहं नृलोके
द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर॥४८॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो
दृष्ट्वा रूपं घोरमीदङ्गमेदम्।
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं
तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य॥४९॥

सञ्जय उवाच

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्ता
स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः।
आश्वासयामास च भीतमेन
भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा॥५०॥

अर्जुन उवाच

दृष्टेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः॥५१॥

श्रीभगवानुवाच

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः॥५२॥

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा॥५३॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥५४॥

मत्कर्मकृन्मत् परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव॥५५॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
विश्वरूपदर्शनयोगो नाम एकादशोऽध्यायः॥

॥ द्वादशोऽध्यायः—भक्तियोगः ॥

अर्जुन उवाच

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥१॥

श्रीभगवानुवाच

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥२॥

ये त्वक्षरमनिर्देश्यम् अव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थम् अचलं ध्रुवम् ॥३॥

सन्त्रियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥४॥

क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम् अव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्धिरवाप्यते ॥५॥

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सञ्च्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥६॥

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि न चिरात् पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥७॥

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥८॥

अथ चित्तं समाधातुं न शक्रोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाऽऽस्तुं धनञ्जय ॥९॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि ॥१०॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद् ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात् कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥१२॥

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी॥१३॥

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मर्यपूर्णितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥१४॥

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगौर्मुक्तो यः स च मे प्रियः॥१५॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥१६॥

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः॥१७॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः॥१८॥

तुल्यनिन्दास्तुतिमौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियो नरः॥१९॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्धाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥२०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः॥

॥त्रयोदशोऽध्यायः—क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥१॥

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत् तज्ज्ञानं मतं मम॥२॥

तत् क्षेत्रं यच्च यादृक् च यद् विकारि यतश्च यत्।
स च यो यत् प्रभावश्च तत् समासेन मे शृणु॥३॥

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्विर्विनिश्चितैः॥४॥

महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः॥५॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः।
एतत् क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्॥६॥

अमानित्वमदभित्वमहिंसा क्षान्तिराज्वरम्।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः॥७॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्॥८॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु॥९॥

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वम् अरतिर्जनसंसदिः॥१०॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा॥११॥

ज्ञेयं यत् तत् प्रवक्ष्यामि यज्ञात्वाऽमृतमश्रुते।
अनादिमत् परं ब्रह्म न सत् तत्रासदुच्यते॥१२॥

सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥१३॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च॥१४॥

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात् तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत्॥१५॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च॥१६॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्॥१७॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः।
मद्भक्त एतद् विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते॥१८॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्॥१९॥

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते॥२०॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्गे प्रकृतिजान् गुणान्।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद् योनिजन्मसु॥२१॥

उपद्रष्टाऽनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः॥२२॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते॥२३॥

ध्यानेनाऽऽत्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना।
अन्ये साङ्घेन योगेन कर्मयोगेन चापरे॥२४॥

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वाऽन्येभ्य उपासते।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥२५॥

यावत् सञ्जायते किञ्चित् सत्त्वं स्थावरजङ्गमम्।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् तद् विद्धि भरतर्षभा॥२६॥

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति॥२७॥

समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनाऽऽत्मानं ततो याति परां गतिम्॥२८॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथाऽऽत्मानमकर्तारं स पश्यति॥२९॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा॥३०॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात् परमात्माऽयमव्ययः।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते॥३१॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथाऽत्मा नोपलिप्यते॥३२॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥३३॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवम् अन्तरं ज्ञानचक्षुषा।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम्॥३४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥

॥चतुर्दशोऽध्यायः—गुणत्रयविभागयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः॥१॥

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च॥२॥

मम योनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत॥३॥

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद् योनिरहं बीजप्रदः पिता॥४॥

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्॥५॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बधाति ज्ञानसङ्गेन चानघ॥६॥

रजो रागात्मकं विष्णि तृष्णासङ्गसमुद्घवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्॥७॥

तमस्त्वज्ञानजं विष्णि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत॥८॥

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत॥९॥

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा॥१०॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद् विवृद्धं सत्त्वमित्युत॥११॥

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ॥१२॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन॥१३॥

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान् प्रतिपद्यते॥१४॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते॥१५॥

कर्मणः सुकृतस्याऽहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम्॥१६॥

सत्त्वात् सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च॥१७॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः॥१८॥

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टाऽनुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति॥१९॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन् देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्रुते ॥२०॥

अर्जुन उवाच

कैर्लिङ्गेस्त्रीन् गुणानेतानतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन् गुणानतिवर्तते॥२१॥

श्रीभगवानुवाच

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव।
न द्वैष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षाति॥२२॥

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते॥२३॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाशमकाश्वनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥२४॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते॥२५॥

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥२६॥

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाऽहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च॥२७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥

॥पञ्चदशोऽध्यायः—पुरुषोत्तमयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥१॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखाः
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके॥२॥

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चाऽऽदिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलम्
असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा॥३॥

ततः पदं तत् परिमार्गितव्यं
यस्मिन् गता न निर्वर्तन्ति भूयः।
तमेव चाऽऽद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी॥४॥

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषाः
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैः
गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्॥५॥

न तद् भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्वत्वा न निर्वर्तन्ते तद् धाम परमं मम॥६॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥७॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाऽशयात्॥८॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं द्वाणमेव च।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते॥९॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि भुज्ञानं वा गुणान्वितम्।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः॥१०॥

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः॥११॥

यदादित्यगतं तेजो जगद् भासयते ऽखिलम्।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत् तेजो विद्धि मामकम्॥१२॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा।
पुण्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः॥१३॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्॥१४॥

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टे
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वैदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद् वेदविदेव चाहम्॥१५॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरक्षाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥१६॥

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः॥१७॥

यस्मात् क्षरमतीतोऽहम् अक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥१८॥

यो मामेवमसमूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद् भजति मां सर्वभावेन भारत॥१९॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयाऽनघ।
एतद् बुद्ध्वा बुद्धिमान् स्यात् कृतकृत्यश्च भारत॥२०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
पुरुषोत्तमयोगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः॥

॥षोडशोऽध्यायः—दैवासुरसम्पद्विभागयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥१॥

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुत्खं मार्दवं हीरचापलम्॥२॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥३॥

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थं सम्पदमासुरीम्॥४॥

दैवी सम्पद् विमोक्षाय निबन्धायाऽसुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव॥५॥

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थं मे शृणु॥६॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापि चाऽचारो न सत्यं तेषु विद्यते॥७॥

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम्।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत् कामहैतुकम्॥८॥

एतां दृष्टिमवष्टम्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः।
प्रभवन्त्युग्रकर्मणः क्षयाय जगतोऽहिताः॥९॥

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद् गृहीत्वाऽसद् ग्राहान् प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥१०॥

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः॥११॥

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थम् अन्यायेनार्थसञ्चयान्॥१२॥

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम्।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम्॥१३॥

असौ मया हृतः शत्रुहनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोऽहमहं भौगी सिद्धोऽहं बलवान् सुखी॥१४॥

आद्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः॥१५॥

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ॥१६॥

आत्मसम्भाविताः स्तव्या धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्॥१७॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः॥१८॥

तानहं द्विषतः क्रूरान् संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाभ्यजस्तमशुभान् आसुरीष्वेव योनिषु॥१९॥

आसुरों योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्॥२०॥

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत्॥२१॥

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम्॥२२॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥२३॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥२४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
दैवासुरसम्पद्विभागयोगो नाम षोडशोऽध्यायः॥

॥ सप्तदशोऽध्यायः—श्रद्धात्रयविभागयोगः ॥

अर्जुन उवाच

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयोऽन्विताः।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु॥२॥

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥३॥

यजन्ते सात्त्विका देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान् भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः॥४॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः॥५॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान् विद्यासुरनिश्चयान्॥६॥

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु॥७॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः॥८॥

कद्बस्त्रलवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥९॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्॥१०॥

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिर्विष्टो य इज्यते।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः॥११॥

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत्।
इज्यते भरतश्रेष्ठं तं यज्ञं विद्धि राजसम्॥१२॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते॥१३॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते॥१४॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥१५॥

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते॥१६॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत् त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते॥१७॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमधुवम्॥१८॥

मूढग्राहेणाऽऽत्मनो यत् पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं वा तत् तामसमुदाहृतम्॥१९॥

दातव्यमिति यद् दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशो काले च पात्रे च तद् दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥२०॥

यत् तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तद् दानं राजसं स्मृतम्॥२१॥

अदेशकाले यद् दानम् अपात्रेभ्यश्च दीयते।
असत्कृतमवज्ञातं तत् तामसमुदाहृतम्॥२२॥

ॐ तत् सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥२३॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥२४॥

तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः॥२५॥

सद्ग्रावे साधुभावे च सदित्येतत् प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥२६॥

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते॥२७॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तसं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य नो इह॥२८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः॥

॥ अष्टादशोऽध्यायः—मोक्षसन्ध्यासयोगः ॥

अर्जुन उवाच

सन्ध्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक् केशनिषूदन॥१॥

श्रीभगवानुवाच

काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्ध्यासं कवयो विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः॥२॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे॥३॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तमा।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तिः॥४॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्॥५॥

एतान्यपि तु कर्मणि सङ्गं त्यक्ता फलानि च।
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम्॥६॥

नियतस्य तु सन्ध्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात् तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तिः॥७॥

दुःखमित्येव यत् कर्म कायक्लेशभयात् त्यजेत्।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत्॥८॥

कार्यमित्येव यत् कर्म नियतं क्रियतेर्जुन।
सङ्गं त्यक्ता फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः॥१॥

न द्वेष्यकुशलं कर्म कुशले नानुष्णते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः॥१०॥

न हि देहभूता शक्यं त्यक्तुं कर्मण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते॥११॥

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्ध्यासिनां क्वचित्॥१२॥

पश्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
साङ्घो कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्॥१३॥

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक् चेष्टा दैवं चैवात्र पश्चमम्॥१४॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत् कर्म प्रारभते नरः।
न्यायं वा विपरीतं वा पश्चैते तस्य हेतवः॥१५॥

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वात्र स पश्यति दुर्मतिः॥१६॥

यस्य नाहं कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वाऽपि स इमाँलोकात्र हन्ति न निबध्यते॥१७॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।
करणं कर्म कर्तृति त्रिविधः कर्मसङ्गंहः॥१८॥

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः।
प्रोच्यते गुणसङ्घाने यथावच्छृणु तान्यपि॥१९॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम्॥२०॥

पृथक्केन तु यज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान्।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम्॥२१॥

यत्तु कृत्स्ववदेकस्मिन् कार्ये सक्तमहैतुकम्।
अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम्॥२२॥

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम्।
अफलप्रेष्मुना कर्म यत् तत् सात्त्विकमुच्यते॥२३॥

यत् तु कामेष्मुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः।
क्रियते बहुलायासं तद् राजसमुदाहृतम्॥२४॥

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनपेक्ष्य च पौरुषम्।
मोहादारभ्यते कर्म यत् तत् तामसमुच्यते॥२५॥

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते॥२६॥

रागी कर्मफलप्रेष्मुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तिः॥२७॥

अयुक्तः प्राकृतः स्तव्यः शठो नैकृतिकोऽलसः।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते॥२८॥

बुद्धेर्भेदं धृतेश्वैव गुणतस्त्रिविधं शृणु।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्केन धनञ्जय॥२९॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३०॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत् प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी॥३१॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसाॽवृता।
सर्वार्थान् विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी॥३२॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३३॥

यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयतेॽर्जुन।
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी॥३४॥

यया स्वप्रं भयं शोकं विषादं मदमेव च।
न विमुश्ति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी॥३५॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभा।
अभ्यासाद् रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति॥३६॥

यत् तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत् सुखं सात्त्विकं प्रोक्तम् आत्मबुद्धिप्रसादजम्॥३७॥

विषयेन्द्रियसंयोगाद् यत् तदग्रेऽमृतोपमम्।
परिणामे विषमिव तत् सुखं राजसं स्मृतम्॥३८॥

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम्॥३९॥

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः।
सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात् त्रिभिर्गुणैः॥४०॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः॥४१॥

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥४२॥

शौर्यं तेजो धृतिर्दक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्॥४३॥

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्॥४४॥

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु॥४५॥

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाऽप्रोति किल्लिषम्॥४७॥

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवाऽवृताः॥४८॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्ध्यासेनाधिगच्छति॥४९॥

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाऽप्रोति निबोध मे।
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा॥५०॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्याऽत्मानं नियम्य च।
शब्दादीन् विषयांस्त्यक्षा रागद्वेषौ व्युदस्य च॥५१॥

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्षायमानसः।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥५२॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥५३॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्॥५४॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥५५॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्॥५६॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि सन्ध्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव॥५७॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यसि।
अथ चेत् त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्घ्यसि॥५८॥

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति॥५९॥

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा।
कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात् करिष्यस्यवशोऽपि तत्॥६०॥

ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशोऽर्जुन तिष्ठति।
प्रामयन् सर्वभूतानि यत्रारूढानि मायया॥६१॥

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत् प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥६२॥

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु॥६३॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम्॥६४॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥६५॥

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥६६॥

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति॥६७॥

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥६८॥

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥६९॥

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः॥७०॥

श्रद्धावाननसूयक्षं शृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभाँलोकान् प्राप्नुयात् पुण्यकर्मणाम्॥७१॥

कच्चिदेतच्छृतं पार्थं त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय॥७२॥

अर्जुन उवाच

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत् प्रसादान्मयाऽच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥७३॥

सङ्ख्य उवाच

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम्॥७४॥

व्यासप्रसादाच्छुतवान् एतद् गुह्यमहं परम्।
योगं योगेश्वरात् कृष्णात् साक्षात् कथयतः स्वयम्॥७५॥

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम्।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः॥७६॥

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः।
विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः॥७७॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥७८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
मोक्षसन्ध्यासयोगो नाम अष्टादशोऽध्यायः॥



॥माहात्म्यम्॥

गीताशास्त्रमिदं पुण्यं यः पठेत् प्रयतः पुमान्।
विष्णोः पदमवाप्नोति भय-शोकादि-वर्जितः॥१॥

गीताध्ययन-शीलस्य प्राणायाम-परस्य च।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्व-जन्म-कृतानि च॥२॥

मल-निर्मोचनं पुंसां जल-स्नानं दिने दिने।
सकृद् गीताभ्यसि स्नानं संसार-मल-नाशनम्॥३॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्माद् विनिःसृता॥४॥

भारतामृत-सर्वस्वं विष्णोर्वक्राद् विनिःसृतम्।
गीता-गङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥५॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भौक्ता दुर्गं गीतामृतं महत्॥६॥

एकं शास्त्रं देवकी-पुत्र-गीतम्
 एको देवो देवकी-पुत्र एव।
 एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि
 कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा॥७॥



॥ गीतामाहात्म्यम् ॥

॥ ध्यान-श्लोकाः ॥

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
 देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥१॥

नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम्।
 खुरमध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते॥२॥

दंष्ट्राग्रेणोद्धृता गौरुदधिपरिवृता पर्वतैर्निम्नगाभिः
 साकं मृत्यिष्ठवत् प्राग्बृहदुरुवपुषाऽनन्तरूपेण येन।
 सोऽयं कंसासुरारिमुरनरकदशास्यान्तकृत्सर्वसंस्थः
 कृष्णो विष्णुः सुरेशो नुदतु मम रिपूनादिदेवो वराहः॥३॥

यः संसारणवे नौरिव मरणजराव्याधिनक्रोर्मिभीमे
 भक्तानां भीतिहर्ता मुरनरकदशास्यान्तकृत् कोलरूपी।
 विष्णुः सर्वेश्वरोऽयं यमिह कृतधियो लीलया प्राप्नुवन्ति
 मुक्तात्मानो न पापं प्रभवमनुदिनारातिपक्षः क्षितीशः॥४॥



धरोवाच

भगवन् परमेशान भक्तिरव्यभिचारिणी।
 प्रारब्धं भुज्यमानस्य कथं भवति हे प्रभो॥१॥

श्री-विष्णुरुवाच

प्रारब्धं भुज्यमानो हि गीताभ्यासरतः सदा।
 स मुक्तः स सुखी लोके कर्मणा नोपलिप्यते॥२॥

महापापादिपापानि गीताध्यानं करोति चेत्।
क्वचित् स्पर्शं न कुर्वन्ति नलिनीदलमभ्युवत्॥३॥

गीतायाः पुस्तकं यत्र यत्र पाठः प्रवर्तते।
तत्र सर्वाणि तीर्थानि प्रयागादीनि तत्र वै॥४॥

सर्वे देवाश्च ऋषयो योगिनः पन्नगाश्च ये।
गोपाला गोपिका वाऽपि नारदोद्भवपार्षदैः।
सहायो जायते शीघ्रं यत्र गीता प्रवर्तते॥५॥

यत्र गीताविचारश्च पठनं पाठनं श्रुतम्।
तत्राहं निश्चितं पृथ्वि निवसामि सदैव हि॥६॥

गीताश्रयेऽहं तिष्ठामि गीता मे चोत्तमं गृहम्।
गीताज्ञानमुपाश्रित्य त्रैलोकान् पालयाम्यहम्॥७॥

गीता मे परमा विद्या ब्रह्मरूपा न संशयः।
अर्धमात्राक्षरा नित्या स्वानिर्वाच्यपदात्मिका॥८॥

चिदानन्देन कृष्णेन प्रोक्ता स्वमुखतोऽर्जुनम्।
वेदत्रयी परानन्दा तत्त्वार्थज्ञानसंयुता॥९॥

योऽष्टादशजपो नित्यं नरो निश्चलमानसः।
ज्ञानसिद्धिं स लभते ततो याति परं पदम्॥१०॥

पाठेऽस्मर्थः सम्पूर्णं ततोऽर्धं पाठमाचरेत्।
तदा गोदानजं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥११॥

त्रिभागं पठमानस्तु गङ्गास्नानफलं लभेत्।
षडंशं जपमानस्तु सोमयागफलं लभेत्॥१२॥

एकाध्यायं तु यो नित्यं पठते भक्तिसंयुतः।
रुद्रलोकमवाप्नोति गणो भूत्वा वसेच्चिरम्॥१३॥

अध्यायं क्षोकपादं वा नित्यं यः पठते नरः।
स याति नरतां यावन्मन्वन्तरं वसुन्धरे॥१४॥

गीतायाः क्षोकदशकं सप्त पञ्च चतुष्टयम्।
द्वौ त्रीनेकं तदर्थं वा क्षोकानां यः पठेन्नरः॥१५॥

चन्द्रलोकमवाप्नोति वर्षाणामयुतं ध्रुवम्।
गीतापाठसमायुक्तो मृतो मानुषतां ब्रजेत्॥१६॥

गीताभ्यासं पुनः कृत्वा लभते मुक्तिमुत्तमाम्।
गीतेत्युच्चारसंयुक्तो म्रियमाणो गतिं लभेत्॥१७॥

गीतार्थश्रवणासक्तो महापापयुतोऽपि वा।
वैकुण्ठं समवाप्नोति विष्णुना सह मोदते॥१८॥

गीतार्थ ध्यायते नित्यं कृत्वा कर्माणि भूरिशः।
जीवन्मुक्तः स विज्ञेयो देहान्ते परमं पदम्॥१९॥

गीतामाश्रित्य बहवो भूभुजो जनकादयः।
निर्धूतकल्मषा लोके गीतायाताः परं पदम्॥२०॥

गीतायाः पठनं कृत्वा माहात्म्यं नैव यः पठेत्।
वृथा पाठो भवेत्तस्य श्रम एव ह्युदाहृतः॥२१॥

एतन्माहात्म्यसंयुक्तं गीताभ्यासं करोति यः।
स तत् फलमवाप्नोति दुर्लभां गतिमाप्नुयात्॥२२॥

सूत उवाच

माहात्म्यमेतद्वीताया मया प्रोक्तं सनातनम्।
गीतान्ते च पठेद्यस्तु यदुक्तं तत्फलं लभेत्॥२३॥

॥इति श्रीवाराहपुराणे श्रीगीतामाहात्म्यं सम्पूर्णम्॥



॥मञ्जलश्लोकाः ॥

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्यायेन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥१॥

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः॥२॥

अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः।
अधनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्॥३॥



विभागः २

पदच्छेदः

॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

॥न्यासः॥

॥करन्यासः॥

ॐ अस्य श्रीमद्भगवद्गीतामालामन्त्रस्य।

भगवान्वेदव्यास ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः।

श्रीकृष्ण परमात्मा देवता।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे इति बीजम्।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज इति शक्तिः।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच इति कीलकम्।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इत्यङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत इति तर्जनीभ्यां नमः।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च इति मध्यमाभ्यां नमः। नित्यः सर्वगतः

स्थाणुरचलोऽयं सनातन इत्यनामिकाभ्यां नमः। पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश

इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णकृतीनि

च इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

॥इति करन्यासः॥

॥हृदयादि न्यासः॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक इति हृदयाय नमः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत इति शिरसे स्वाहा।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव चेति शिखायै वषट्।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातन इति कवचाय हुम्।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रश इति नेत्रत्रयाय वौषट्।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णकृतीनि चेति अस्त्राय फट्।

॥श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः॥

॥ध्यानम्॥

ॐ पार्थाय प्रतिबोधितां भगवता नारायणेन स्वयं
व्यासेन ग्रथितां पुराणमुनिना मध्ये महाभारतम्।
अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीमष्टादशाध्यायिनीम्
अम्ब त्वामनुसन्दधामि भगवद्गीते भवद्वेषिणीम्॥१॥

नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुलारविन्दायतपत्रनेत्र।
येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥२॥

प्रपन्नपारिजाताय तोत्रवेत्रैकपाणये।
ज्ञानमुद्राय कृष्णाय गीतामृतदुहे नमः॥३॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भेत्का दुग्धं गीतामृतं महत्॥४॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्माद्-विनिःसृता॥५॥

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम्।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥६॥

भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोपला
शल्यग्राहवती कृपेण वहनी कर्णेन वेलाकुला।
अश्वत्थामविकर्णघोरमकरा दुर्योधनावर्तिनी
सोत्तीर्णा खलु पाण्डवै रणनदी कैवर्तकः केशवः॥७॥

पाराशर्यवचः सरोजममलं गीतार्थगन्धोत्कटं
नानाख्यानककेसरं हरिकथासम्बोधनाबोधितम्।
लोके सञ्जनषद्वैरहरहः पेपीयमानं मुदा
भूयाद्भारतपङ्कजं कलिमलप्रध्वंसि नः श्रेयसे॥८॥

मूकं करोति वाचालं पङ्कुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्॥९॥

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र-रुद्र-मरुतः स्तुवन्ति दिव्यैः स्तवैः
वेदैः साङ्ग-पद-ऋगोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित-तद्वतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनः
यस्यान्तं न विदुः सुरासुर-गणा देवाय तस्मै नमः॥१०॥

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥११॥

॥ प्रथमोऽध्यायः—अर्जुनविषादयोगः ॥

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेताः युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाः च एव किम् अकुर्वत सञ्जय॥१॥

सञ्जय उवाच

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनः तदा।
आचार्यम् उपसङ्गम्य राजा वचनम् अब्रवीत्॥२॥

पश्य एतां पाण्डुपुत्राणाम् आचार्य महर्तीं चमूम्।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता॥३॥

अत्र शूराः महेष्वासाः भीमार्जुनसमाः युधि।
युयुधानः विराटः च द्रुपदः च महारथः॥४॥

धृष्टकेतुः चेकितानः काशिराजः च वीर्यवान्।
पुरुजित् कुन्तिभोजः च शैव्यः च नरपुङ्गवः॥५॥

युधामन्युः च विक्रान्तः उत्तमौजाः च वीर्यवान्।
सौभद्रः द्रौपदेयाः च सर्वे एव महारथाः॥६॥

अस्माकं तु विशिष्टाः ये तान् निबोध द्विजोत्तमा।
नायकाः मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते॥७॥

भवान् भीष्मः च कर्णः च कृपः च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णः च सौमदत्तिः तथा एव च॥८॥

अन्ये च बहवः शूराः मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः॥९॥

अपर्याप्तं तत् अस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं तु इदम् एतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्॥१०॥

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागम् अवस्थिताः।
भीष्मम् एव अभिरक्षन्तु भवन्तः सर्वे एव हि॥११॥

तस्य सञ्जनयन् हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्य उच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान्॥१२॥

ततः शङ्खाः च भेर्यः च पणवानकगोमुखाः।
सहसा एव अभ्यहन्यन्त सः शब्दः तुमुलः अभवत्॥१३॥

ततः श्वेतैः हयैः युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाण्डवः च एव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः॥१४॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशः देवदत्तं धनञ्जयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः॥१५॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रः युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवः च सुघोषमणिपुष्पकौ॥१६॥

काश्यः च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नः विराटः च सात्यकिः च अपराजितः॥१७॥

द्रुपदः द्रौपदेयाः च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रः च महाबाहुः शङ्खान् दध्मुः पृथक् पृथक्॥१८॥

सः घोषः धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभः च पृथिवीं च एव तुमुलः अभ्यनुनादयन्॥१९॥

अथ व्यवस्थितान् दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुः उद्यम्य पाण्डवः॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यम् इदम् आह महीपते।

अर्जुन उवाच

सेनयोः उभयोः मध्ये रथं स्थापय मे अच्युत॥२१॥

यावत् एतान् निरीक्षे अहं योद्धुकामान् अवस्थितान्।
कैः मया सह योद्धव्यम् अस्मिन् रणसमुद्यमे॥२२॥

योत्स्यमानान् अवेक्षे अहं ये एते अत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेः युद्धे प्रियचिकीर्षवः॥२३॥

सञ्जय उवाच

एवम् उक्तः हृषीकेशः गुडाकेशेन भारत।
सेनयोः उभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम्॥२४॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थं पश्य एतान् समवेतान् कुरुन् इति॥२५॥

तत्र अपश्यत् स्थितान् पार्थः पितृन् अथ पितामहान्।
आचार्यान् मातुलान् भ्रातृन् पुत्रान् पौत्रान् सखीन् तथा॥२६॥

श्वशुरान् सुहृदः च एव सेनयोः उभयोः अपि।
तान् समीक्ष्य सः कौन्तेयः सर्वान् बन्धून् अवस्थितान्॥२७॥

कृपया परया आविष्टः विषीदन् इदम् अब्रवीत्।

अर्जुन उवाच

दृष्ट्वा इमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्॥२८॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुः च शरीरे मे रोमहर्षः च जायते॥२९॥

गाण्डीवं स्नासते हस्तात् त्वक् च एव परिदह्यते।
न च शक्नोमि अवस्थातुं भ्रमति इव च मे मनः॥३०॥

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशवा।
न च श्रेयः अनुपश्यामि हत्वा स्वजनम् आहवे॥३१॥

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नः राज्येन गोविन्दं किं भोगैः जीवितेन वा॥३२॥

येषाम् अर्थे काङ्क्षितं नः राज्यं भोगाः सुखानि च।
ते इमे अवस्थिता युद्धे प्राणान् त्यक्ता धनानि च॥३३॥

आचार्याः पितरः पुत्राः तथा एव च पितामहाः।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनः तथा॥३४॥

एतान् न हन्तुम् इच्छामि घ्रतः अपि मधुसूदन।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते॥३५॥

निहत्य धार्तराष्ट्रान् नः का प्रीतिः स्यात् जनार्दन।
पापम् एव आश्रयेत् अस्मान् हत्वा एतान् आततायिनः॥३६॥

तस्मान् न अर्हाः वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव॥३७॥

यदि अपि एते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम्॥३८॥

कथं न ज्ञेयम् अस्माभिः पापात् अस्मान् निवर्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्धिः जनार्दन॥३९॥

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नम् अधर्मः अभिभवति उत॥४०॥

अधर्माभिभवात् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्ण्यं जायते वर्णसङ्करः॥४१॥

सङ्करः नरकाय एव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरः हि एषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः॥४२॥

दोषैः एतैः कुलघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माः च शाश्वताः॥४३॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरके अनियतं वासः भवति इति अनुशुश्रुमा॥४४॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिताः वयम्।
यत् राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनम् उद्यताः॥४५॥

यदि माम् अप्रतीकारम् अशास्त्रं शास्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्राः रणे हन्त्युः तत् मे क्षेमतरं भवेत्॥४६॥

सङ्ख्य उवाच

एवम् उक्ता अर्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थे उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्रमानसः॥४७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
अर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः—साङ्ख्योगः ॥

सङ्ख्य उवाच

तं तथा कृपया आविष्टम् अश्रुपूर्णकुलेक्षणम्।
विषीदन्तम् इदं वाक्यम् उवाच मधुसूदनः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

कुतः त्वा कश्मलम् इदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टम् अस्वर्ग्यम् अकीर्तिकरम् अर्जुन॥२॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ न एतत् त्वयि उपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्ता उत्तिष्ठ परन्तप॥३॥

अर्जुन उवाच

कथं भीष्मम् अहं सङ्घे द्रोणं च मधुसूदन।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजाहौं अरिसूदन॥४॥

गुरून् अहत्वा हि महानुभावान्
श्रेयः भोक्तुं भैक्ष्यम् अपि इह लोके।
हत्वा अर्थकामान् तु गुरून् इह एव
भुजीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान्॥५॥

न च एतत् विद्धः कतरत् नः गरीयः
यत् वा जयेम यदि वा नः जयेयुः।
यान् एव हत्वा न जिजीविषामः
ते अवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः॥६॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढेताः।
यत् श्रेयः स्यात् निश्चितं ब्रूहि तत् मे
शिष्यः ते अहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥७॥

न हि प्रपश्यामि मम अपनुद्यात्
यत् शोकम् उच्छ्रोषणम् इन्द्रियाणाम्।
अवाप्य भूमौ असपत्रम् ऋद्धं
राज्यं सुराणाम् अपि च आधिपत्यम्॥८॥

सङ्ख्य उवाच

एवम् उक्ता हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तपः।
न योत्स्ये इति गोविन्दम् उक्ता तूष्णीं बभूव ह॥१॥

तम् उवाच हृषीकेशः प्रहसन् इव भारत।
सेनयोः उभयोः मध्ये विषीदन्तम् इदं वचः॥१०॥

श्रीभगवानुवाच

अशोच्यान् अन्वशोचः त्वं प्रज्ञावादान् च भाषसे।
गतासून् अगतासून् च न अनुशोचन्ति पण्डिताः॥११॥

न तु एव अहं जातु न आसं न त्वं न इमे जनाधिपाः।
न च एव न भौविष्यामः सर्वे वयम् अतः परम्॥१२॥

देहिनः अस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिः धीरः तत्र न मुह्यति॥१३॥

मात्रास्पर्शाः तु कौन्तेय शीतोष्णासुखदुःखदाः।
आगमापायिनः अनित्याः तान् तितिक्षस्व भारत॥१४॥

यं हि न व्यथयन्ति एते पुरुषं पुरुषर्षभा।
समदुःखसुखं धीरं सः अमृतत्वाय कल्पते॥१५॥

न असतः विद्यते भावः न अभावः विद्यते सतः।
उभयोः अपि दृष्टः अन्तः तु अनयोः तत्त्वदर्शिभिः॥१६॥

अविनाशि तु तत् विद्धि येन सर्वम् इदं ततम्।
विनाशम् अव्ययस्य अस्य न कश्चित् कर्तुम् अर्हति॥१७॥

अन्तवन्तः इमे देहाः नित्यस्य उक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनः अप्रमेयस्य तस्मात् युध्यस्व भारत॥१८॥

यः एनं वेत्ति हन्तारं यः च एनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतः न अयं हन्ति न हन्यते॥१९॥

न जायते म्रियते वा कदाचित्
न अयं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजः नित्यः शाश्वतः अयं पुराणः
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥२०॥

वेद अविनाशिनं नित्यं यः एनम् अजम् अव्ययम्।
कथं सः पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्॥२१॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरः अपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि
अन्यानि संयाति नवानि देही॥२२॥

न एनं छिन्दन्ति शस्त्राणि न एनं दहति पावकः।
न च एनं क्लेदयन्ति आपः न शोषयति मारुतः॥२३॥

अच्छेद्यः अयम् अदाह्यः अयम् अक्षेद्यः अशोष्यः एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुः अचलः अयं सनातनः॥२४॥

अव्यक्तः अयम् अचिन्त्यः अयम् अविकार्यः अयम् उच्यते।
तस्मात् एवं विदित्वा एनं न अनुशोचितुम् अर्हसि॥२५॥

अथ च एनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्।
तथा अपि त्वं महाबाहो न एवं शोचितुमर्हसि॥२६॥

जातस्य हि ध्रुवः मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मात् अपरिहार्ये अर्थे न त्वं शोचितुम् अर्हसि॥२७॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनानि एव तत्र का परिदेवना॥२८॥

आश्वर्यवत् पश्यति कश्चित् एनम्
आश्वर्यवत् वदति तथा एव च अन्यः।
आश्वर्यवत् च एनम् अन्यः शृणोति
श्रुत्वा अपि एनं वेद न च एव कश्चित्॥२९॥

देही नित्यम् अवध्यः अयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात् सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुम् अर्हसि॥३०॥

स्वधर्मम् अपि च अवेक्ष्य न विकम्पितुम् अर्हसि।
धर्म्यत् हि युद्धात् श्रेयः अन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते॥३१॥

यदच्छया च उपपन्नं स्वर्गद्वारम् अपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धम् ईदृशम्॥३२॥

अथ चेत् त्वम् इमं धर्मं सङ्ग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापम् अवाप्स्यसि॥३३॥

अकीर्तिं च अपि भूतानि कथयिष्यन्ति ते अव्याम्।
सम्भावितस्य च अकीर्तिः मरणात् अतिरिच्यते॥३४॥

भयात् रणात् उपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतः भूत्वा यास्यसि लाघवम्॥३५॥

अवाच्यवादान् च बहून् वदिष्यन्ति तव अहिताः।
निन्दन्तः तव सामर्थ्यं ततः दुःखतरं नु किम्॥३६॥

हतः वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मात् उत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥३७॥

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततः युद्धाय युज्यस्व न एवं पापम् अवाप्स्यसि॥३८॥

एषा ते अभिहिता साङ्घे बुद्धिः योगे तु इमां शृणु।
बुद्ध्या युक्तः यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि॥३९॥

न इह अभिक्रमनाशः अस्ति प्रत्यवायः न विद्यते।
स्वल्पम् अपि अस्य धर्मस्य त्रायते महतः भयात्॥४०॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिः एक इह कुरुनन्दन।
बहुशाखाः हि अनन्ताः च बुद्धयः अव्यवसायिनाम्॥४१॥

याम् इमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्ति अविपश्चितः।
वेदवादरताः पार्थ न अन्यत् अस्ति इति वादिनः॥४२॥

कामात्मानः स्वर्गपराः जन्मकर्मफलप्रदाम्।
क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति॥४३॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तया अपहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते॥४४॥

त्रैगुण्यविषयाः वेदाः निश्चैगुण्यः भव अर्जुन।
निर्द्वन्द्वः नित्यसत्त्वस्थः निर्योगक्षेमः आत्मवान्॥४५॥

यावान् अर्थः उदपाने सर्वतः सम्पूतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥४६॥

कर्मणि एव अधिकारः ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुः भूः मा ते सङ्गः अस्तु अकर्मणि॥४७॥

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्ता धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समः भूत्वा समत्वं योगः उच्यते॥४८॥

दूरेण हि अवरं कर्म बुद्धियोगात् धनञ्जय।
बुद्धौ शरणम् अन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः॥४९॥

बुद्धियुक्तः जहाति इह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्मात् योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्॥५०॥

कर्मजं बुद्धियुक्ताः हि फलं त्यक्ता मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्ति अनामयम्॥५१॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिः व्यतितरिष्यति।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च॥५२॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधौ अचला बुद्धिः तदा योगम् अवाप्यसि॥५३॥

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किम् आसीत ब्रजेत किम्॥५४॥

श्रीभगवानुवाच

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान्।
आत्मनि एव आत्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञः तदा उच्यते॥५५॥

दुःखेषु अनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीः मुनिः उच्यते॥५६॥

यः सर्वत्र अनभिस्नेहः तत् तत् प्राप्य शुभाशुभम्।
न अभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५७॥

यदा संहरते च अयं कूर्मः अङ्गानि इव सर्वशः।
इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेभ्यः तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५८॥

विषयाः विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसः अप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥५९॥

यततः हि अपि कौन्तेय पुरुषस्य विपक्षितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः॥६०॥

तानि सर्वाणि संयम्य युक्तः आसीत मत्परः।
वशे हि यस्य इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६१॥

ध्यायतः विषयान् पुंसः सङ्गः तेषु उपजायते।
सङ्गात् सञ्चायते कामः कामात् क्रोधः अभिजायते॥६२॥

क्रोधात् भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशः बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥६३॥

रागद्वेषविमुक्तैः तु विषयान् इन्द्रियैः चरन्।
आत्मवश्यैः विधेयात्मा प्रसादम् अधिगच्छति॥६४॥

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिः अस्य उपजायते।
प्रसन्नचेतसः हि आशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥६५॥

न अस्ति बुद्धिः अयुक्तस्य न च अयुक्तस्य भावना।
न च अभावयतः शान्तिः अशान्तस्य कुतः सुखम्॥६६॥

इन्द्रियाणां हि चरतां यत् मनः अनुविधीयते।
तत् अस्य हरति प्रज्ञां वायुः नावम् इव अम्भसि॥६७॥

तस्मात् यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेभ्यः तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६८॥

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतः मुनेः॥६९॥

आपूर्यमाणम् अचलप्रतिष्ठं
समुद्रम् आपः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामाः यं प्रविशन्ति सर्वे
सः शान्तिम् आप्नोति न कामकामी॥७०॥

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमान् चरति निःस्पृहः।
निर्ममः निरहङ्कारः सः शान्तिम् अधिगच्छति॥७१॥

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ न एनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वा अस्याम् अन्तकाले अपि ब्रह्मनिर्वाणम् ऋच्छति॥७२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
साङ्ख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः॥

॥तृतीयोऽध्यायः—कर्मयोगः ॥

अर्जुन उवाच

ज्यायसी चेत् कर्मणः ते मता बुद्धिः जनार्दन।
तत् किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव॥१॥

व्यामिश्रेण इव वाक्येन बुद्धिं मोहयसि इव मे।
तत् एकं वद निश्चित्य येन श्रेयः अहम् आप्नुयाम्॥२॥

श्रीभगवानुवाच

लोके अस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मया अनघ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्॥३॥

न कर्मणाम् अनारम्भात् नैष्कर्म्यं पुरुषः अश्रुते।
न च सन्ध्यसनात् एव सिद्धिं समधिगच्छति॥४॥

न हि कश्चित् क्षणम् अपि जातु तिष्ठति अकर्मकृत्।
कार्यते हि अवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैः गुणैः॥५॥

कर्मन्द्रियाणि संयम्य यः आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः सः उच्यते॥६॥

यः तु इन्द्रियाणि मनसा नियम्य आरभते अर्जुन।
कर्मन्द्रियैः कर्मयोगम् असक्तः सः विशिष्यते॥७॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायः हि अकर्मणः।
शरीरयात्रा अपि च ते न प्रसिद्धेत् अकर्मणः॥८॥

यज्ञार्थात् कर्मणः अन्यत्र लोकः अयं कर्मबन्धनः।
तत् अर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर॥९॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टा पुरा उवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वम् एषः वः अस्तु इष्टकामधुक्॥१०॥

देवान् भावयत अनेन ते देवाः भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परम् अवाप्स्यथ॥११॥

इष्टान् भोगान् हि वः देवाः दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैः दत्तान् अप्रदाय एभ्यः यः भुङ्गे स्तेनः एव सः॥१२॥

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तः मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते तु अघं पापाः ये पचन्ति आत्मकारणात्॥१३॥

अन्नात् भवन्ति भूतानि पर्जन्यात् अन्नसम्भवः।
यज्ञात् भवति पर्जन्यः यज्ञः कर्मसमुद्घवः॥१४॥

कर्म ब्रह्मोद्घवं विद्धि ब्रह्म अक्षरसमुद्घवम्।
तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥१५॥

एवं प्रवर्तितं चक्रं न अनुवर्तयति इह यः।
अघायुः इन्द्रियारामः मोघं पार्थ सः जीवति॥१६॥

यः तु आत्मरतिः एव स्यात् आत्मतृप्तः च मानवः।
आत्मनि एव च सन्तुष्टः तस्य कार्यं न विद्यते॥१७॥

न एव तस्य कृतेन अर्थः न अकृतेन इह कक्षन्।
न च अस्य सर्वभूतेषु कक्षित् अर्थव्यपाश्रयः॥१८॥

तस्मात् असक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तः हि आचरन् कर्म परम् आप्नोति पूरुषः॥१९॥

कर्मणा एव हि संसिद्धिम् आस्थिताः जनकादयः।
लोकसङ्ग्रहम् एव अपि सम्पश्यन् कर्तुम् अर्हसि॥२०॥

यत् यत् आचरति श्रेष्ठः तत् तत् एव इतरः जनः।
सः यत् प्रमाणं कुरुते लोकः तत् अनुवर्तते॥२१॥

न मे पार्थ अस्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन।
न अनवासम् अवासव्यं वर्ते एव च कर्मणि॥२२॥

यदि हि अहं न वर्तेयं जातु कर्मणि अतन्द्रितः।
मम वर्त्म अनुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥२३॥

उत्सीदेयुः इमे लोकाः न कुर्या कर्म चेत् अहम्।
सङ्करस्य च कर्ता स्याम् उपहन्याम् इमाः प्रजाः॥२४॥

सक्ताः कर्मणि अविद्वांसः यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्यात् विद्वान् तथा असक्तः चिकीर्षुः लोकसङ्ग्रहम्॥२५॥

न बुद्धिभेदं जनयेत् अज्ञानां कर्मसङ्ग्निनाम्।
जोषयेत् सर्वकर्मणि विद्वान् युक्तः समाचरन्॥२६॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ता अहम् इति मन्यते॥२७॥

तत्त्ववित् तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणाः गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सञ्जते॥२८॥

प्रकृतेः गुणसम्मूढाः सञ्जन्ते गुणकर्मसु।
तान् अकृत्स्विदः मन्दान् कृत्स्ववित् न विचालयेत्॥२९॥

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्ध्यस्य अध्यात्मचेतसा।
निराशीः निर्ममः भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः॥३०॥

ये मे मतम् इदं नित्यम् अनुतिष्ठन्ति मानवाः।
श्रद्धावन्तः अनसूयन्तः मुच्यन्ते ते अपि कर्मभिः॥३१॥

ये तु एतत् अभ्यसूयन्तः न अनुतिष्ठन्ति मे मतम्।
सर्वज्ञानविमूढान् तान् विद्धि नष्टान् अचेतसः॥३२॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेः ज्ञानवान् अपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥३३॥

इन्द्रियस्य इन्द्रियस्य अर्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोः न वशम् आगच्छेत् तौ हि अस्य परिपन्थिनौ॥३४॥

श्रेयान् स्वधर्मः विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मः भयावहः॥३५॥

अर्जुन उवाच

अथ केन प्रयुक्तः अयं पापं चरति पूरुषः।
अनिच्छन् अपि वार्ष्णेय बलात् इव नियोजितः॥३६॥

श्रीभगवानुवाच

कामः एषः क्रोधः एषः रजः गुणसमुद्भवः।
महाशनः महापाप्मा विद्धि एनम् इह वैरिणम्॥३७॥

धूमेन आत्रियते वह्निः यथा आदर्शः मलेन च।
यथा उल्बेन आवृतः गर्भः तथा तेन इदम् आवृतम्॥३८॥

आवृतं ज्ञानम् एतेन ज्ञानिनः नित्यवैरिणा।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेण अनलेन च॥३९॥

इन्द्रियाणि मनः बुद्धिः अस्य अधिष्ठानम् उच्यते।
एतैः विमोहयति एषः ज्ञानम् आवृत्य देहिनम्॥४०॥

तस्मात् त्वम् इन्द्रियाणि आदौ नियम्य भरतर्षभा।
पाप्मानं प्रजहि हि एनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्॥४१॥

इन्द्रियाणि पराणि आहुः इन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसः तु परा बुद्धिः यः बुद्धेः परतः तु सः॥४२॥

एवं बुद्धेः परं बुद्धा संस्तम्य आत्मानम् आत्मना।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्॥४३॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
कर्मयोगो नाम तृतीयोऽध्यायः॥

॥ चतुर्थोऽध्यायः—ज्ञानकर्मसन्ध्यासयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवान् अहम् अव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुः इक्ष्वाकवे अब्रवीत्॥१॥

एवं परम्पराप्राप्तम् इमं राजर्षयः विदुः।
सः कालेन इह महता योगः नष्टः परन्तप॥२॥

सः एव अयं मया ते अद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तः असि मे सखा च इति रहस्यं हि एतत् उत्तमम्॥३॥

अर्जुन उवाच

अपरं भवतः जन्म परं जन्म विवस्वतः।
कथम् एतत् विजानीयां त्वम् आदौ प्रोक्तवान् इति॥४॥

श्रीभगवानुवाच

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव च अर्जुन।
तानै अहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥५॥

अजः अपि सन् अव्ययात्मा भूतानाम् ईश्वरः अपि सन्।
प्रकृतिं स्वाम् अधिष्ठाय सम्भवामि आत्ममायया॥६॥

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिः भवति भारत।
अभ्युत्थानम् अधर्मस्य तदा आत्मानं सृजामि अहम्॥७॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥८॥

जन्म कर्म च मे दिव्यम् एवं यः वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्ता देहं पुनः जन्म न एति माम् एति सः अर्जुन॥९॥

वीतरागभयक्रोधाः मन्मयाः माम् उपाश्रिताः।
बहवः ज्ञानतपसा पूताः मद्भावम् आगताः॥१०॥

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तान् तथा एव भजामि अहम्।
मम वर्त्म अनुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥११॥

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्ते इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिः भवति कर्मजा॥१२॥

चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारम् अपि मां विद्धि अकर्तारम् अव्ययम्॥१३॥

न मां कर्मणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां यः अभिजानाति कर्मभिः न सः बध्यते॥१४॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैः अपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्म एव तस्मात् त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्॥१५॥

किं कर्म किम् अकर्म इति कवयः अपि अत्र मोहिताः।
तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यत् ज्ञात्वा मोक्ष्यसे अशुभात्॥१६॥

कर्मणः हि अपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणः च बोद्धव्यं गहना कर्मणः गतिः॥१७॥

कर्मणि अकर्म यः पश्येत् अकर्मणि च कर्म यः।
सः बुद्धिमान् मनुष्येषु सः युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥१८॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तम् आहुः पण्डितं बुधाः॥१९॥

त्यक्ता कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तः निराश्रयः।
कर्मणि अभिप्रवृत्तः अपि न एव किञ्चित् करोति सः॥२०॥

निराशीः यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषम्॥२१॥

यद्वच्छालाभसन्तुष्टः द्वन्द्वातीतः विमत्सरः।
समः सिद्धौ असिद्धौ च कृत्वा अपि न निबध्यते॥२२॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञाय आचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥२३॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।
ब्रह्म एव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधैना॥२४॥

दैवम् एव अपरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्माग्नौ अपरे यज्ञं यज्ञेन एव उपजुह्वति॥२५॥

श्रोत्रादीनि इन्द्रियाणि अन्ये संयमाग्निषु जुह्वति।
शब्दादीन् विषयान् अन्ये इन्द्रियाग्निषु जुह्वति॥२६॥

सर्वाणि इन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि च अपरे।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते॥२७॥

द्रव्ययज्ञाः तपोयज्ञाः योगयज्ञाः तथा अपरे।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः च यतयः संशितव्रताः॥२८॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणे अपानं तथा अपरे।
प्राणापानगती रुद्धा प्राणायामपरायणाः॥२९॥

अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति।
सर्वे अपि एते यज्ञविदः यज्ञक्षपितकल्मषाः॥३०॥

यज्ञशिष्टामृतभुजः यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकः अस्ति अयज्ञस्य कुतः अन्यः कुरुसत्तम॥३१॥

एवं बहुविधाः यज्ञाः वितताः ब्रह्मणः मुखे।
कर्मजान् विद्धि तान् सर्वान् एवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे॥३२॥

श्रेयान् द्रव्यमयात् यज्ञात् ज्ञानयज्ञः परन्तप।
सर्वं कर्माखिलं पार्थं ज्ञाने परिसमाप्तते॥३३॥

तत् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेश्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनः तत्त्वदर्शिनः॥३४॥

यत् ज्ञात्वा न पुनः मोहम् एवं यास्यसि पाण्डव।
येन भूतानि अशेषेण द्रक्ष्यसि आत्मनि अथो मयि॥३५॥

अपि चेत् असि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानपूर्वेन एव वृजिनं सन्तरिष्यसि॥३६॥

यथा एधांसि समिद्धः अग्निः भस्मसात् कुरुते अर्जुन।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा॥३७॥

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रम् इह विद्यते।
तत् स्वयं योगसंसिद्धः कालेन आत्मनि विन्दति॥३८॥

श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिम् अचिरेण अधिगच्छति॥३९॥

अज्ञः च अश्रद्धानः च संशयात्मा विनश्यति।
न अयं लोकः अस्ति न परः न सुखं संशयात्मनः॥४०॥

योगसन्ध्यस्तकर्मणं ज्ञानसञ्छिन्नसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय॥४१॥

तस्मात् अज्ञानसमूतं हृत्स्थं ज्ञानासिना आत्मनः।
छित्वा एनं संशयं योगम् आतिष्ठ उत्तिष्ठ भारत॥४२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
ज्ञानकर्मसन्ध्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः॥

॥पञ्चमोऽध्यायः—कर्मसन्ध्यासयोगः ॥

अर्जुन उवाच

सन्ध्यासं कर्मणां कृष्ण पुनः योगं च शंससि।
यत् श्रेयः एतयोः एकं तत् मे ब्रूहि सुनिश्चितम्॥१॥

श्रीभगवानुवाच

सन्ध्यासः कर्मयोगः च निःश्रेयसकरौ उभौ।
तयोः तु कर्मसन्ध्यासात् कर्मयोगः विशिष्यते॥२॥

ज्ञेयः सः नित्यसन्ध्यासी यः न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वः हि महाबाहो सुखं बन्धात् प्रमुच्यते॥३॥

साङ्घ्ययोगौ पृथक् बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकम् अपि आस्थितः सम्यक् उभयोः विन्दते फलम्॥४॥

यत् साङ्घ्यैः प्राप्यते स्थानं तत् योगैः अपि गम्यते।
एकं साङ्घ्यं च योगं च यः पश्यति सः पश्यति॥५॥

सन्ध्यासः तु महाबाहो दुःखम् आसुम् अयोगतः।
योगयुक्तः मुनिः ब्रह्म नचिरेण अधिगच्छति॥६॥

योगयुक्तः विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन् अपि न लिप्यते॥७॥

न एव किञ्चित् करोमि इति युक्तः मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघन् अश्रन् गच्छन् स्वपन् श्वसन्॥८॥

प्रलपन् विसृजन् गृह्णन् उन्मिषन् निमिषन् अपि।
इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेषु वर्तन्ते इति धारयन्॥९॥

ब्रह्मणि आधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्ता करोति यः।
लिप्यते न सः पापेन पद्मपत्रम् इव अम्भसा॥१०॥

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैः इन्द्रियैः अपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्ता आत्मशुद्धये॥११॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्ता शान्तिम् आप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तः निबध्यते॥१२॥

सर्वकर्माणि मनसा सन्ध्यस्य आस्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही न एव कुर्वन् न कारयन्॥१३॥

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावः तु प्रवर्तते॥१४॥

न आदत्ते कस्यचित् पापं न च एव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेन आवृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः॥१५॥

ज्ञानेन तु तत् अज्ञानं येषां नाशितम् आत्मनः।
तेषाम् आदित्यवत् ज्ञानं प्रकाशयति तत् परम्॥१६॥

तत् बुद्धयः तत् आत्मानः तत् निष्ठाः तत् परायणाः।
गच्छन्ति अपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्पणाः॥१७॥

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि च एव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥१८॥

इह एव तैः जितः सर्गः येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्मात् ब्रह्मणि ते स्थिताः॥१९॥

न प्रहृष्टेत् प्रियं प्राप्य न उद्विजेत् प्राप्य च अप्रियम्।
स्थिरबुद्धिः असमूढः ब्रह्मवित् ब्रह्मणि स्थितः॥२०॥

बाह्यस्पर्शेषु असक्तात्मा विन्दति आत्मनि यत् सुखम्।
सः ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखम् अक्षयम् अश्रुते॥२१॥

ये हि संस्पर्शजाः भोगाः दुःखयोनयः एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥२२॥

शक्रोति इह एव यः सोदुं प्राक् शरीरविमोक्षणात्।
कामक्रोधोद्भवं वेगं सः युक्तः सः सुखी नरः॥२३॥

यः अन्तःसुखः अन्तरारामः तथा अन्तज्योतिः एव यः।
सः योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतः अधिगच्छति॥२४॥

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणम् ऋषयः क्षीणकल्पषाः।
छिन्नद्वैधाः यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः॥२५॥

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम्।
अभितः ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम्॥२६॥

स्पर्शान् कृत्वा बहिः बाह्यान् चक्षुः च एव अन्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समै कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ॥२७॥

यतेन्द्रियमनः बुद्धिः मुनिः मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधः यः सदा मुक्तः एव सः॥२८॥

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिम् ऋच्छति॥२९॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
कर्मसन्ध्यासयोगो नाम पञ्चमोऽध्यायः॥

॥षष्ठोऽध्यायः—आत्मसंयमयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
सः सन्ध्यासी च योगी च न निरग्निः न च अक्रियः॥१॥

यं सन्ध्यासम् इति प्राहुः योगं तं विद्धि पाण्डव।
न हि असन्ध्यस्तसङ्कल्पः योगी भवति कक्षन्॥२॥

आरुरुक्षोः मुनेः योगं कर्म कारणम् उच्यते।
योगारूढस्य तस्य एव शमः कारणम् उच्यते॥३॥

यदा हि न इन्द्रियार्थेषु न कर्मसु अनुषङ्गते।
सर्वसङ्कल्पसन्ध्यासी योगारूढः तदा उच्यते॥४॥

उद्धरेत् आत्मना आत्मानं न आत्मानम् अवसादयेत्।
आत्मा एव हि आत्मनः बन्धुः आत्मा एव रिपुः आत्मनः॥५॥

बन्धुः आत्मा आत्मनः तस्य येन आत्मा एव आत्मना जितः।
अनात्मनः तु शत्रुत्वे वर्तेत् आत्मा एव शत्रुवत्॥६॥

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णासुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः॥७॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थः विजितेन्द्रियः।
युक्तः इति उच्यते योगी समलोष्टाशमकाञ्चनः॥८॥

सुहन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुषु अपि च पापेषु समबुद्धिः विशिष्यते॥९॥

योगी युञ्जीत सततम् आत्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीः अपरिग्रहः॥१०॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरम् आसनम् आत्मनः।
न अत्युच्छ्रितं न अतिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्॥११॥

तत्र एकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्य आसने युञ्ज्यात् योगम् आत्मविशुद्धये॥१२॥

समं कायशिरोग्रीवं धारयन् अचलं स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशः च अनवलोकयन्॥१३॥

प्रशान्तात्मा विगतभीः ब्रह्मचारिवते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तः युक्तः आसीत मत्परः॥१४॥

युञ्जन् एवं सदा आत्मानं योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थाम् अधिगच्छति॥१५॥

न अति अश्रतः तु योगः अस्ति न च एकान्तम् अनश्रतः।
न च अतिस्वप्रशीलस्य जाग्रतः न एव च अर्जुन॥१६॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्रावबोधस्य योगः भवति दुःखहा॥१७॥

यदा विनियतं चित्तम् आत्मनि एव अवतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यः युक्तः इति उच्यते तदा॥१८॥

यथा दीपः निवातस्थः न इङ्गते सा उपमा स्मृता।
योगिनः यतचित्तस्य युञ्जतः योगम् आत्मनः॥१९॥

यत्र उपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र च एव आत्मना आत्मानं पश्यन् आत्मनि तुष्यति॥२०॥

सुखम् आत्यन्तिकं यत् तत् बुद्धिग्राह्यम् अतीन्द्रियम्।
वैति यत्र न च एव अयं स्थितः चलति तत्त्वतः॥२१॥

यं लब्ध्वा च अपरं लाभं मन्यते न अधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितः न दुःखेन गुरुणा अपि विचाल्यते॥२२॥

तं विद्यात् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
सः निश्चयेन योक्तव्यः योगः अनिर्विण्णचेतसा॥२३॥

सङ्कल्पप्रभवान् कामान् त्यक्ता सर्वान् अशेषतः।
मनसा एव इन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः॥२४॥

शनैः शनैः उपरमेत् बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चित् अपि चिन्तयेत्॥२५॥

यतः यतः निश्चरति मनः चश्वलम् अस्थिरम्।
ततः ततः नियम्य एतत् आत्मनि एव वशं नयेत्॥२६॥

प्रशान्तमनसं हि एनं योगिनं सुखम् उत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतम् अकल्मषम्॥२७॥

युञ्जन् एवं सदा आत्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शम् अत्यन्तं सुखम् अश्रुते॥२८॥

सर्वभूतस्थम् आत्मानं सर्वभूतानि च आत्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥२९॥

यः मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्य अहं न प्रणश्यामि सः च मे न प्रणश्यति॥३०॥

सर्वभूतस्थितं यः मां भजति एकत्वम् आस्थितः।
सर्वथा वर्तमानः अपि सः योगी मयि वर्तते॥३१॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति यः अर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं सः योगी परमः मतः॥३२॥

अर्जुन उवाच

यः अयं योगः त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्य अहं न पश्यामि चश्वलत्वात् स्थितिं स्थिराम्॥३३॥

चश्वलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवत् दृढम्।
तस्य अहं निग्रहं मन्ये वायोः इव सुदुष्करम्॥३४॥

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनः दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥३५॥

असंयतात्मना योगः दुष्प्रापः इति मे मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्यः अवासुम् उपायतः॥३६॥

अर्जुन उवाच

अयतिः श्रद्धया उपेतः योगात् चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति॥३७॥

कच्चित् न उभयविभ्रष्टः छिन्नाप्रम् इव नश्यति।
अप्रतिष्ठः महाबाहो विमूढः ब्रह्मणः पथि॥३८॥

एतत् मे संशयं कृष्ण छेत्तुम् अर्हसि अशेषतः।
त्वत् अन्यः संशयस्य अस्य छेत्ता न हि उपपद्यते॥३९॥

श्रीभगवानुवाच

पार्थ न एव इह न अमुत्र विनाशः तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति॥४०॥

प्राप्य पुण्यकृतां लोकान् उषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगम्रष्टः अभिजायते॥४१॥

अथवा योगिनाम् एव कुले भवति धीमताम्।
एतत् हि दुर्लभतरं लोके जन्म यत् ईदृशम्॥४२॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततः भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥४३॥

पूर्वाभ्यासेन तेन एव हियते हि अवशः अपि सः।
जिज्ञासुः अपि योगस्य शब्दब्रह्म अतिवर्तते॥४४॥

प्रयत्नात् यतमानः तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंसिद्धः ततः याति परां गतिम्॥४५॥

तपस्विभ्यः अधिकः योगी ज्ञानिभ्यः अपि मतः अधिकः।
कर्मिभ्यः च अधिकः योगी तस्मात् योगी भव अर्जुन॥४६॥

योगिनाम् अपि सर्वेषां मद्भतेन अन्तरात्मना।
श्रद्धावान् भजते यः मां सः मे युक्ततमः मतः॥४७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
आत्मसंयमयोगो नाम षष्ठोऽध्यायः॥

॥सप्तमोऽध्यायः—ज्ञानविज्ञानयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

मयि आसक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन् मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तत् शृणु॥१॥

ज्ञानं ते अहं सविज्ञानम् इदं वक्ष्यामि अशेषतः।
यत् ज्ञात्वा न इह भूयः अन्यत् ज्ञातव्यम् अवशिष्यते॥२॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कक्षित् यतति सिद्धये।
यतताम् अपि सिद्धानां कक्षित् मां वेत्ति तत्त्वतः॥३॥

भूमिः आपः अनलः वायुः खं मनः बुद्धिः एव च।
अहङ्कारः इति इयं मे भिन्ना प्रकृतिः अष्टधा॥४॥

अपरा इयम् इतः तु अन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो यया इदं धार्यते जगत्॥५॥

एतत् योनीनि भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयः तथा॥६॥

मत्तः परतरं न अन्यत् किञ्चित् अस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वम् इदं प्रोतं सूत्रे मणिगणाः इव॥७॥

रसः अहम् अप्सु कौन्तेय प्रभा अस्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु॥८॥

पुण्यः गन्धः पृथिव्यां च तेजः च अस्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपः च अस्मि तपस्विषु॥९॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिः बुद्धिमताम् अस्मि तेजः तेजस्विनाम् अहम्॥१०॥

बलं बलवतां च अहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धः भूतेषु कामः अस्मि भरतर्षभ॥११॥

ये च एव सात्त्विकाः भावाः राजसाः तामसाः च ये।
मत्तः एव इति तान् विद्धि न तु अहं तेषु ते मयि॥१२॥

त्रिभिः गुणमयैः भावैः एभिः सर्वम् इदं जगत्।
मोहितं न अभिजानाति माम् एभ्यः परम् अव्ययम्॥१३॥

दैवी हि एषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
माम् एव ये प्रपद्यन्ते मायाम् एतां तरन्ति ते॥१४॥

न मां दुष्कृतिनः मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
मायया अपहृतज्ञानाः आसुरं भावम् आश्रिताः॥१५॥

चतुर्विधाः भजन्ते मां जनाः सुकृतिनः अर्जुन।
आर्तः जिज्ञासुः अर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥१६॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्तः एकभक्तिः विशिष्यते।
प्रियः हि ज्ञानिनः अत्यर्थम् अहं सः च मम प्रियः॥१७॥

उदाराः सर्वे एव एते ज्ञानी तु आत्मा एव मे मतम्।
आस्थितः सः हि युक्तात्मा माम् एव अनुत्तमां गतिम्॥१८॥

बहूनां जन्मनाम् अन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वम् इति सः महात्मा सुदुर्लभः॥१९॥

कामैः तैः तैः हृतज्ञानाः प्रपद्यन्ते अन्यदेवताः।
तं तं नियमम् आस्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥२०॥

यः यः यां यां तनुं भक्तः श्रद्धया अर्चितुम् इच्छति।
तस्य तस्य अचलां श्रद्धां ताम् एव विदधामि अहम्॥२१॥

सः तया श्रद्धया युक्तः तस्याः राधनम् ईहते।
लभते च ततः कामान् मया एव विहितान् हि तान्॥२२॥

अन्तवत् तु फलं तेषां तत् भवति अल्पमेधसाम्।
देवान् देवयजः यान्ति मद्भक्ताः यान्ति माम् अपि॥२३॥

अव्यक्तं व्यक्तिम् आपन्नं मन्यन्ते माम् अबुद्धयः।
परं भावम् अजानन्तः मम अव्ययम् अनुत्तमम्॥२४॥

न अहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढः अयं न अभिजानाति लोकः माम् अजम् अव्ययम्॥२५॥

वेद अहं समतीतानि वर्तमानानि च अर्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥२६॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गं यान्ति परन्तप॥२७॥

येषां तु अन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः भजन्ते मां दृढत्रताः॥२८॥

जरामरणमोक्षाय माम् आश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तत् विदुः कृत्स्म अध्यात्मं कर्म च अखिलम्॥२९॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकाले अपि च मां ते विदुः युक्तचेतसः॥३०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः॥

॥ अष्टमोऽध्यायः—अक्षरब्रह्मयोगः ॥

अर्जुन उवाच

किं तत् ब्रह्म किम् अध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तम् अधिदैवं किम् उच्यते॥१॥

अधियज्ञः कथं कः अत्र देहे अस्मिन् मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयः असि नियतात्मभिः॥२॥

श्रीभगवानुवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावः अध्यात्मम् उच्यते।
भूतभावोद्भवकरः विसर्गः कर्मसंज्ञितः॥३॥

अधिभूतं क्षरः भावः पुरुषः च अधिदैवतम्।
अधियज्ञः अहम् एव अत्र देहे देहभूतां वर॥४॥

अन्तकाले च माम् एव स्मरन् मुखा कलेवरम्।
यः प्रयाति सः मद्भावं याति न अस्ति अत्र संशयः॥५॥

यं यं वा अपि स्मरन् भावं त्यजति अन्ते कलेवरम्।
तं तम् एव एति कौन्तेय सदा तत् भावभावितः॥६॥

तस्मात् सर्वेषु कालेषु माम् अनुस्मर युध्य च।
मयि अर्पितमनोबुद्धिः माम् एव एष्यसि असंशयः॥७॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा न अन्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थ अनुचिन्तयन्॥८॥

कविं पुराणम् अनुशासितारम्
अणोः अणीयांसम् अनुस्मरेत् यः।
सर्वस्य धातारम् अचिन्त्यरूपम्
आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्॥९॥

प्रयाणकाले मनसा अचलेन
भक्त्या युक्तः योगबलेन च एव।
भ्रुवोः मध्ये प्राणम् आवेश्य सम्यक्
सः तं परं पुरुषम् उपैति दिव्यम्॥१०॥

यत् अक्षरं वेदविदः वदन्ति
विशन्ति यत् यतयः वीतरागाः।
यत् इच्छन्तः ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत् ते पदं सङ्घेण प्रवक्ष्ये॥११॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनः हृदि निरुद्ध च।
मूर्धि आधाय आत्मनः प्राणम् आस्थितः योगधारणाम्॥१२॥

ओम् इति एकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् माम् अनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन् देहं सः याति परमां गतिम्॥१३॥

अनन्यचेताः सततं यः मां स्मरति नित्यशः।
तस्य अहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥१४॥

माम् उपेत्य पुनः जन्म दुःखालयम् अशाश्वतम्।
न आप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥१५॥

आब्रह्मभुवनात् लोकाः पुनरावर्तिनः अर्जुन।
माम् उपेत्य तु कौन्तेय पुनः जन्म न विद्यते॥१६॥

सहस्रयुगपर्यन्तम् अहः यत् ब्रह्मणः विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां ते अहोरात्रविदः जनाः॥१७॥

अव्यक्तात् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्ति अहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्र एव अव्यक्तसंज्ञके॥१८॥

भूतग्रामः सः एव अयं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमे अवशः पार्थ प्रभवति अहरागमे॥१९॥

परः तस्मात् तु भावः अन्यः अव्यक्तः अव्यक्तात् सनातनः।
यः सः सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥२०॥

अव्यक्तः अक्षरः इति उक्तः तम् आहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निर्वर्तन्ते तत् धाम परमं मम॥२१॥

पुरुषः सः परः पार्थ भक्त्या लभ्यः तु अनन्यया।
यस्य अन्तःस्थानि भूतानि येन सर्वम् इदं ततम्॥२२॥

यत्र काले तु अनावृत्तिम् आवृत्तिं च एव योगिनः।
प्रयाताः यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ॥२३॥

अग्निः ज्योतिः अहः शुक्रः षण्मासाः उत्तरायणम्।
 तत्र प्रयाताः गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदः जनाः॥२४॥

धूमः रात्रिः तथा कृष्णः षण्मासाः दीक्षिणायनम्।
 तत्र चान्द्रमसं ज्योतिः योगी प्राप्य निर्वर्तते॥२५॥

शुक्रकृष्णे गती हि एते जगतः शाश्वते मते।
 एकया याति अनावृत्तिम् अन्यया आवर्तते पुनः॥२६॥

न एते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कश्चन।
 तस्मात् सर्वेषु कालेषु योगयुक्तः भव अर्जुन॥२७॥

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु च एव
 दानेषु यत् पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
 अत्येति तत् सर्वम् इदं विदित्वा
 योगी परं स्थानम् उपैति च आद्यम्॥२८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
 अक्षरब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः॥

॥नवमोऽध्यायः—राजविद्याराजगुह्ययोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्यामि अनसूयवे।
 ज्ञानं विज्ञानसहितं यत् ज्ञात्वा मोक्षसे अशुभात्॥१॥

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रम् इदम् उत्तमम्।
 प्रत्यक्षावगमं धर्म्य सुसुखं कर्तुम् अव्ययम्॥२॥

अश्रद्धानाः पुरुषाः धर्मस्य अस्य परन्तपा।
 अप्राप्य मां निर्वर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि॥३॥

मया ततम् इदं सर्वं जगत् अव्यक्तमूर्तिना।
 मत्स्थानि सर्वभूतानि न च अहं तेषु अवस्थितः॥४॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगम् ऐश्वरम्।
 भूतभूतं न च भूतस्थः मम आत्मा भूतभावनः॥५॥

यथा आकाशस्थितः नित्यं वायुः सर्वत्रगः महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानि इति उपधारय॥६॥

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनः तानि कल्पादौ विसृजामि अहम्॥७॥

प्रकृतिं स्वाम् अवष्टम्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्रामम् इमं कृत्स्नम् अवशं प्रकृतेः वशात्॥८॥

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवत् आसीनम् असक्तं तेषु कर्मसु॥९॥

मया अध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुना अनेन कौन्तेय जगत् विपरिवर्तते॥१०॥

अवजानन्ति मां मूढाः मानुषीं तनुम् आश्रितम्।
परं भावम् अजानन्तः मम भूतमहेश्वरम्॥११॥

मोघाशाः मोघकर्माणः मोघज्ञानाः विचेतसः।
राक्षसीम् आसुरीं च एव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥१२॥

महात्मानः तु मां पार्थ दैर्वीं प्रकृतिम् आश्रिताः।
भजन्ति अनन्यमनसः ज्ञात्वा भूतादिम् अव्ययम्॥१३॥

सततं कीर्तयन्तः मां यतन्तः च दृढब्रताः।
नमस्यन्तः च मां भक्त्या नित्ययुक्ताः उपासते॥१४॥

ज्ञानयज्ञेन च अपि अन्ये यजन्तः माम् उपासते।
एकत्वेन पृथक्खेन बहुधा विश्वतोमुखम्॥१५॥

अहं क्रतुः अहं यज्ञः स्वधा अहम् अहम् औषधम्।
मत्रः अहम् अहम् एव आज्यम् अहम् अग्निः अहं हुतम्॥१६॥

पिता अहम् अस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रम् ओङ्कारः क्रक् साम यजुः एव च॥१७॥

गतिः भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजम् अव्ययम्॥१८॥

तपामि अहम् अहं वर्षं निगृह्णामि उत्सूजामि च।
अमृतं च एव मृत्युः च सत् असत् च अहम् अर्जुन॥१९॥

त्रैविद्याः मां सोमपाः पूतपापाः
यज्ञैः इष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यम् आसाद्य सुरेन्द्रलोकम्
अश्रन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान्॥२०॥

ते तं भुक्षा स्वर्गलोकं विशालं
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयोर्धर्मम् अनुप्रपन्नाः
गतागतं कामकामाः लभन्ते॥२१॥

अनन्याः चिन्तयन्तः मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहामि अहम्॥२२॥

ये अपि अन्यदेवताभक्ताः यजन्ते श्रद्धया अन्विताः।
ते अपि माम् एव कौन्तेय यजन्ति अविधिपूर्वकम्॥२३॥

अहं हि सर्वयज्ञानां भक्ता च प्रभुः एव च।
न तु माम् अभिजानन्ति तत्त्वेन अतः च्यवन्ति ते॥२४॥

यान्ति देवब्रताः देवान् पितृन् यान्ति पितृब्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्याः यान्ति मद्याजिनः अपि माम्॥२५॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यः मे भक्त्या प्रयच्छति।
तत् अहं भक्त्युपहृतम् अश्रामि प्रयतात्मनः॥२६॥

यत् करोषि यत् अश्रासि यत् जुहोषि ददासि यत्।
यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मर्दर्पणम्॥२७॥

शुभाशुभफलैः एवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्न्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तः माम् उपैष्यसि॥२८॥

समः अहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्यः अस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु च अपि अहम्॥२९॥

अपि चेत् सुदुराचारः भजते माम् अनन्यभाक्।
साधुः एव सः मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितः हि सः॥३०॥

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वत् शान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥३१॥

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य ये अपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियः वैश्याः तथा शूद्राः ते अपि यान्ति परां गतिम्॥३२॥

किं पुनः ब्राह्मणाः पुण्याः भक्ताः राजर्षयः तथा।
अनित्यम् असुखं लोकम् इमं प्राप्य भजस्व माम्॥३३॥

मन्मनाः भव मद्भक्तः मद्याजी मां नमस्कुरु।
माम् एव एष्यसि युक्ता एवम् आत्मानं मत्परायणः॥३४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः॥

॥दशमोऽध्यायः—विभूतियोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

भूयः एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
यत् ते अहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया॥१॥

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहम् आदिः हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः॥२॥

यः माम् अजम् अनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असम्मूढः सः मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३॥

बुद्धिः ज्ञानम् असम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवः अभावः भयं च अभयम् एव च॥४॥

अहिंसा समता तुष्टिः तपः दानं यशः अयशः।
भवन्ति भावाः भूतानां मत्तः एव पृथग्विधाः॥५॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारः मनवः तथा।
मद्भावाः मानसाः जाताः येषां लोके इमाः प्रजाः॥६॥

एतां विभूतिं योगं च मम यः वेत्ति तत्त्वतः।
सः अविकम्पेन योगेन युज्यते न अत्र संशयः॥७॥

अहं सर्वस्य प्रभवः मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधाः भावसमन्विताः॥८॥

मच्चित्ताः मद्गतप्राणाः बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तः च मां नित्यं तुष्ट्यन्ति च रमन्ति च॥९॥

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन माम् उपयान्ति ते॥१०॥

तेषाम् एव अनुकम्पार्थम् अहम् अज्ञानजं तमः।
नाशयामि आत्मभावस्थः ज्ञानदीपेन भास्वता॥११॥

अर्जुन उवाच

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यम् आदिदेवम् अजं विभुम्॥१२॥

आहुः त्वाम् ऋषयः सर्वे देवर्षिः नारदः तथा।
अस्मितः देवलः व्यासः स्वयं च एव ब्रवीषि मे॥१३॥

सर्वम् एतत् ऋतं मन्ये यत् मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुः देवाः न दानवाः॥१४॥

स्वयम् एव आत्मना आत्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥१५॥

वक्तुम् अर्हसि अशेषेण दिव्याः हि आत्मविभूतयः।
याभिः विभूतिभिः लोकान् इमान् त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥१६॥

कथं विद्याम् अहं योगिन् त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्यः असि भगवन् मया॥१७॥

विस्तरेण आत्मनः योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिः हि शृण्वतः न अस्ति मे अमृतम्॥१८॥

श्रीभगवानुवाच

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्याः हि आत्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ न अस्ति अन्तः विस्तरस्य मे॥१९॥

अहम् आत्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहम् आदिः च मध्यं च भूतानाम् अन्तः एव च॥२०॥

आदित्यानाम् अहं विष्णुः ज्योतिषां रविः अंशुमान्।
मरीचिः मरुताम् अस्मि नक्षत्राणाम् अहं शशी॥२१॥

वेदानां सामवेदः अस्मि देवानाम् अस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां मनः च अस्मि भूतानाम् अस्मि चेतना॥२२॥

रुद्राणां शङ्करः च अस्मि वित्तेशः यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकः च अस्मि मेरुः शिखरिणाम् अहम्॥२३॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विष्णुं पार्थ बृहस्पतिम्।
सैनानीनाम् अहं स्कन्दः सरसाम् अस्मि सागरः॥२४॥

महर्षीणां भृगुः अहं गिराम् अस्मि एकम् अक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञः अस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलः मुनिः॥२६॥

उच्चैःश्रवसम् अश्वानां विष्णु माम् अमृतोद्भवम्।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम्॥२७॥

आयुधानाम् अहं वज्रं धेनूनाम् अस्मि कामधुक्।
प्रजनः च अस्मि कन्दर्पः सर्पाणाम् अस्मि वासुकिः॥२८॥

अनन्तः च अस्मि नागानां वरुणः यादसाम् अहम्।
पितृणाम् अर्यमा च अस्मि यमः संयमताम् अहम्॥२९॥

प्रह्लादः च अस्मि दैत्यानां कालः कलयताम् अहम्।
मृगाणां च मृगेन्द्रः अहं वैनतेयः च पाक्षिणाम्॥३०॥

पवनः पवताम् अस्मि रामः शश्मभूताम् अहम्।
झृषाणां मकरः च अस्मि स्रोतसाम् अस्मि जाह्वी॥३१॥

सर्गाणाम् आदिः अन्तः च मध्यं च एव अहम् अर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदताम् अहम्॥३२॥

अक्षराणाम् अकारः अस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहम् एव अक्षयः कालः धाता अहं विश्वतोमुखः॥३३॥

मृत्युः सर्वहरः च अहम् उद्भवः च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीः वाक् च नारीणां स्मृतिः मेधा धृतिः क्षमा॥३४॥

बृहत्साम तथा साम्रां गायत्री छन्दसाम् अहम्।
मासानां मार्गशीर्षः अहम् ऋतूनां कुसुमाकरः॥३५॥

द्यूतं छलयताम् अस्मि तेजः तेजस्विनाम् अहम्।
जयः अस्मि व्यवसायः अस्मि सत्त्वं सत्त्ववताम् अहम्॥३६॥

वृष्णीनां वासुदेवः अस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः।
मुरीनाम् अपि अहं व्यासः कवीनाम् उशना कविः॥३७॥

दण्डः दमयताम् अस्मि नीतिः अस्मि जिगीषताम्।
मौनं च एव अस्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवताम् अहम्॥३८॥

यत् च अपि सर्वभूतानां बीजं तत् अहम् अर्जुन।
न तत् अस्ति विना यत् स्यात् मया भूतं चराचरम्॥३९॥

न अन्तः अस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एषः तु उद्देशतः प्रोक्तः विभूतेः विस्तरः मया॥४०॥

यत् यत् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमत् ऊर्जितम् एव वा।
तत् तत् एव अवगच्छ त्वं मम तेजः अंशसम्भवम्॥४१॥

अथवा बहुना एतेन किं ज्ञातेन तव अर्जुन।
विष्टम्य अहम् इदं कृत्स्नम् एकांशेन स्थितः जगत्॥४२॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः॥

॥ एकादशोऽध्यायः—विश्वरूपदर्शनयोगः ॥

अर्जुन उवाच

मदनुग्रहाय परमं गुह्यम् अध्यात्मसंज्ञितम्।
यत् त्वया उक्तं वचः तेन मोहः अयं विगतः मम॥१॥

भव अपि अयौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशः मया।
त्वतः कमलपत्राक्ष माहात्म्यम् अपि च अव्ययम्॥२॥

एवम् एतत् यथा आत्थ त्वम् आत्मानं परमेश्वर।
द्रष्टुम् इच्छामि ते रूपम् ऐश्वरं पुरुषोत्तम॥३॥

मन्यसे यदि तत् शक्यं मया द्रष्टुम् इति प्रभो।
योगेश्वर ततः मे त्वं दर्शय आत्मानम् अव्ययम्॥४॥

श्रीभगवानुवाच

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशः अथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णकृतीनि च॥५॥

पश्य आदित्यान् वसून् रुद्रान् अश्विनो मरुतः तथा।
बहूनि अदृष्टपूर्वाणि पश्य आश्र्वर्याणि भारत॥६॥

इह एकस्थं जगत् कृत्स्नं पश्य अद्य सचराचरम्।
मम देहे गुडाकेश यत् च अन्यत् द्रष्टुम् इच्छुसि॥७॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टुम् अनेन एव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगम् ऐश्वरम्॥८॥

सङ्ख्य उवाच

एवम् उक्ता ततः राजन् महायोगेश्वरः हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमं रूपम् ऐश्वरम्॥९॥

अनेकवक्त्रनयनम् अनेकाद्भुतदर्शनम्।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्॥१०॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्र्वर्यमयं देवम् अनन्तं विश्वतोमुखम्॥११॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेत् युगपत् उत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्यात् भासः तस्य महात्मनः॥१२॥

तत्र एकस्थं जगत् कृत्स्नं प्रविभक्तम् अनेकधा।
अपश्यत् देवदेवस्य शरीरे पाण्डवः तदा॥१३॥

ततः सः विस्मयाविष्टः हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिः अभाषत॥१४॥

अर्जुन उवाच

पश्यामि देवान् तव देव देहे
सर्वान् तथा भूतविशेषसङ्घान्।
ब्रह्माणम् ईशं कमलासनस्थम्
ऋषीन् च सर्वान् उरगान् च दिव्यान्॥१५॥

अनेकबाहूदरवक्रनेत्रं
पश्यामि त्वां सर्वतः अनन्तरूपम्।
न अन्तं न मध्यं न पुनः तव आदिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥१६॥

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतः दीप्तिमन्तम्।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्तात्
दीप्तानलार्कद्युतिम् अप्रमेयम्॥१७॥

त्वम् अक्षरं परमं वेदितव्यं
त्वम् अस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वम् अव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता
सनातनः त्वं पुरुषः मतः मे॥१८॥

अनादिमध्यान्तम् अनन्तवीर्यम्
अनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम्।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्रं
स्वतेजसा विश्वम् इदं तपन्तम्॥१९॥

द्यावापृथिव्योः इदम् अन्तरं हि
व्यासं त्वया एकेन दिशः च सर्वाः।
दृष्ट्वा अद्भुतं रूपम् उग्रं तव इदं
लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन्॥२०॥

अमी हि त्वां सुरसङ्घाः विशन्ति
केचित् भीताः प्राञ्जलयः गृणन्ति।
स्वस्ति इति उक्ता महर्षिसिद्धसङ्घाः
स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः॥२१॥

रुद्रादित्याः वसवः ये च साध्याः
विश्वे अश्विनौ मरुतः च उष्मपाः च।
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घाः
वीक्षन्ते त्वां विस्मिताः च एव सर्वे॥२२॥

रूपं महत् ते बहुवक्त्रनेत्रं
महाबाहो बहुबाहूरूपादम्।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं
दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथिताः तथा अहम्॥२३॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्ण
व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा
धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो॥२४॥

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि
दृष्ट्वा एव कालानलसन्निभानि।
दिशः न जाने न लभे च शर्म
प्रसीद देवेश जगन्निवास॥२५॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सह एव अवनिपालसङ्घैः।
भीष्मः द्रोणः सूतपुत्रः तथा असौ
सह अस्मदीयैः अपि योधमुख्यैः॥२६॥

वक्राणि ते त्वरमाणाः विशन्ति
 दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
 केचित् विलग्नाः दशनान्तरेषु
 सन्दृश्यन्ते चूर्णितैः उत्तमाङ्गैः॥२७॥

यथा नदीनां बहवः अम्बुवेगाः
 समुद्रम् एव अभिमुखाः द्रवन्ति।
 तथा तव अमी नरलोकवीराः
 विशन्ति वक्राणि अभिविज्वलन्ति॥२८॥

यथा प्रदीपं ज्वलनं पतञ्जाः
 विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
 तथा एव नाशाय विशन्ति लोकाः
 तव अपि वक्राणि समृद्धवेगाः॥२९॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्तात्
 लोकान् समग्रान् वदनैः ज्वलद्धिः।
 तेजोभिः आपूर्य जगत् समग्रं
 भासः तव उग्राः प्रतपन्ति विष्णो॥३०॥

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपः
 नमः अस्तु ते देववर प्रसीद।
 विज्ञातुम् इच्छामि भवन्तम् आद्यं
 न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम्॥३१॥

श्रीभगवानुवाच

कालः अस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः
 लोकान् समाहर्तुम् इह प्रवृत्तिः।
 ऋते अपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
 ये अवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥३२॥

तस्मात् त्वम् उत्तिष्ठ यशः लभस्व
 जित्वा शत्रून् भुङ्ग राज्यं समृद्धम्।
 मया एव एते निहताः पूर्वम् एव
 निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्॥३३॥

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च
कर्णं तथा अन्यान् अपि योधवीरान्।
मया हतान् त्वं जहि मा व्यथिष्ठः
युध्यस्व जेतासि रणे सपलान्॥३४॥

सञ्जय उवाच

एतत् श्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिः वेपमानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूयः एव आह कृष्णं
सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य॥३५॥

अर्जुन उवाच

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या
जगत् प्रहृष्यति अनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशः द्रवन्ति
सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः॥३६॥

कस्मात् च ते न नमेरन् महात्मन्
गरीयसे ब्रह्मणः अपि आदिकर्त्रै।
अनन्त देवेश जगन्निवास
त्वम् अक्षरं सत् असत् तत् परं यत्॥३७॥

त्वम् आदिदेवः पुरुषः पुराणः
त्वम् अस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्ता असि वेद्यं च परं च धाम
त्वया ततं विश्वम् अनन्तरूप॥३८॥

वायुः यमः अग्निः वरुणः शशाङ्कः
प्रजापतिः त्वं प्रपितामहः च।
नमः नमः ते अस्तु सहस्रकृत्वः
पुनः च भूयः अपि नमः नमः ते॥३९॥

नमः पुरस्तात् अथ पृष्ठतः ते
नमः अस्तु ते सर्वतः एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमः त्वं
सर्वं समाप्नोषि ततः असि सर्वः॥४०॥

सखा इति मत्वा प्रसम्भं यत् उक्तं
हे कृष्ण हे यादव हे सखा इति।
अजानता महिमानं तव इदं
मया प्रमादात् प्रणयेन वा अपि॥४१॥

यत् च अवहासार्थम् असत् कृतः असि
विहारशश्यासनभोजनेषु ।
एकः अथवा अपि अच्युत तत् समक्षं
तत् क्षामये त्वाम् अहम् अप्रमेयम्॥४२॥

पिता असि लोकस्य चराचरस्य
त्वम् अस्य पूज्यः च गुरुः गरीयान्।
न त्वत्समः अस्ति अभ्यधिकः कुतः अन्यः
लोकत्रये अपि अप्रतिमप्रभाव॥४३॥

तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायं
प्रसादये त्वाम् अहम् ईशम् ईङ्गम्।
पिता इव पुत्रस्य सखा इव सख्युः
प्रियः प्रियायाः अर्हसि देव सोढुम्॥४४॥

अदृष्टपूर्वं हृषितः अस्मि दृष्टा
भयैन च प्रव्यथितं मनः मे।
तत् एव मे दर्शय देव रूपं
प्रसीद देवेश जगन्निवास॥४५॥

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तम्
इच्छामि त्वां द्रष्टुम् अहं तथा एव।
तेन एव रूपेण चतुर्भुजेन
सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥४६॥

श्रीभगवानुवाच

मया प्रसन्नेन तव अर्जुन इदं
रूपं परं दर्शितम् आत्मयोगात्।
तेजोमयं विश्वम् अनन्तम् आद्यं
यत् मे त्वत् अन्येन न दृष्टपूर्वम्॥४७॥

न वेदयज्ञाध्ययनैः न दानैः
न च क्रियाभिः न तपोभिः उग्रैः।
एवं रूपः शक्यः अहं नृलोके
द्रष्टुं त्वत् अन्येन कुरुप्रवीर॥४८॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावः
दृष्ट्वा रूपं घोरम् ईदृक् मम इदम्।
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनः त्वं
तत् एव मे रूपम् इदं प्रपश्य॥४९॥

सञ्जय उवाच

इति अर्जुनं वासुदेवः तथा उच्का
स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः।
आश्वासयामास च भीतम् एनं
भूत्वा पुनः सौम्यवपुः महात्मा॥५०॥

अर्जुन उवाच

दृष्ट्वा इदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन।
इदानीम् अस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः॥५१॥

श्रीभगवानुवाच

सुदुर्दर्शम् इदं रूपं दृष्टवान् असि यत् मम।
देवाः अपि अस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः॥५२॥

न अहं वेदैः न तपसा न दानेन न च इज्यया।
शक्यः एवं विधः द्रष्टुं दृष्टवान् असि मां यथा॥५३॥

भक्त्या तु अनन्यया शक्यः अहम् एवं विधः अर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥५४॥

मत्कर्मकृत् मत्परमः मद्भक्तः सङ्ख्वर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः सः माम् एति पाण्डव॥५५॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
विश्वरूपदर्शनयोगो नाम एकादशोऽध्यायः॥

॥ द्वादशोऽध्यायः—भक्तियोगः ॥

अर्जुन उवाच

एवं सततयुक्ताः ये भक्ताः त्वां पर्युपासते।
ये च अपि अक्षरम् अव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

मयि आवेश्य मनः ये मां नित्ययुक्ताः उपासते।
श्रद्धया परया उपेताः ते मे युक्ततमाः मताः॥२॥

ये तु अक्षरम् अनिर्देश्यम् अव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगम् अचिन्त्यं च कूटस्थम् अचलं ध्रुवम्॥३॥

सत्त्वियम्य इन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति माम् एव सर्वभूतहिते रताः॥४॥

क्लेशः अधिकतरः तेषाम् अव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिः दुःखं देहवद्धिः अवाप्यते॥५॥

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सञ्च्यस्य मत्पराः।
अनन्येन एव योगेन मां ध्यायन्तः उपासते॥६॥

तेषाम् अहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि न चिरात् पार्थ मयि आवेशितचेतसाम्॥७॥

मयि एव मनः आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मयि एव अतः ऊर्ध्वं न संशयः॥८॥

अथ चित्तं समाधातुं न शक्रोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततः माम् इच्छ आसुं धनञ्जय॥९॥

अभ्यासे अपि असमर्थः असि मत्कर्मपरमः भव।
मदर्थम् अपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिम् अवाप्स्यसि॥१०॥

अथ एतत् अपि अशक्तः असि कर्तुं मद्योगम् आश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्॥११॥

श्रेयः हि ज्ञानम् अभ्यासात् ज्ञानात् ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात् कर्मफलत्यागः त्यागात् शान्तिः अनन्तरम्॥१२॥

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुणः एव च।
निर्ममः निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी॥१३॥

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मयि अर्पितमनोबुद्धिः यः मद्भक्तः सः मे प्रियः॥१४॥

यस्मात् न उद्विजते लोकः लोकात् न उद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैः मुक्तः यः सः च मे प्रियः॥१५॥

अनपेक्षः शुचिः दक्षः उदासीनः गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यः मद्भक्तः सः मे प्रियः॥१६॥

यः न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः सः मे प्रियः॥१७॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः॥१८॥

तुल्यनिन्दास्तुतिः मौनी सन्तुष्टः येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिः भक्तिमान् मे प्रियः नरः॥१९॥

ये तु धर्म्यामृतम् इदं यथा उक्तं पर्युपासते।
श्रद्धानाः मत्परमाः भक्ताः ते अतीव मे प्रियाः॥२०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः॥

॥त्रयोदशोऽध्यायः—क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रम् इति अभिधीयते।
एतत् यः वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञः इति तद्विदः॥१॥

क्षेत्रज्ञं च अपि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ज्ञानं यत् तत् ज्ञानं मतं मम॥२॥

तत् क्षेत्रं यत् च याद्वक् च यत् विकारि यतः च यत्।
सः च यः यत् प्रभावः च तत् समासेन मे शृणु॥३॥

ऋषिभिः बहुधा गीतं छन्दोभिः विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैः च एव हेतुमङ्गिः विनिश्चितैः॥४॥

महाभूतानि अहङ्कारः बुद्धिः अव्यक्तम् एव च।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च च इन्द्रियगोचराः॥५॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातः चेतना धृतिः।
एतत् क्षेत्रं समासेन सविकारम् उदाहृतम्॥६॥

अमानित्वम् अदम्भित्वम् अहिंसा क्षान्तिः आर्जवम्।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यम् आत्मविनिग्रहः॥७॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम् अनहङ्कारः एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्॥८॥

असक्तिः अनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वम् इष्ट अनिष्टोपपत्तिषु॥९॥

मयि च अनन्ययोगेन भक्तिः अव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वम् अरतिः जनसंसदिः॥१०॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतत् ज्ञानम् इति प्रोक्तम् अज्ञानं यत् अतः अन्यथा॥११॥

ज्ञेयं यत् तत् प्रवक्ष्यामि यत् ज्ञात्वा अमृतम् अश्रुते।
अनादिमत् परं ब्रह्म न सत् तत् न असत् उच्यते॥१२॥

सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतः अक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमत् लोके सर्वम् आवृत्य तिष्ठति॥१३॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
असक्तं सर्वभूतं च एव निर्गुणं गुणभोक्तुं च॥१४॥

बहिरन्तः च भूतानाम् अचरं चरम् एव च।
सूक्ष्मत्वात् तत् अविज्ञेयं दूरस्थं च अन्तिके च तत्॥१५॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तम् इव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तत् ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च॥१६॥

ज्योतिषाम् अपि तत् ज्योतिः तमसः परम् उच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्॥१७॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं च उक्तं समासतः।
मद्भक्तः एतत् विज्ञाय मद्भावाय उपपद्यते॥१८॥

प्रकृतिं पुरुषं च एव विद्धि अनादी उभौ अपि।
विकारान् च गुणान् च एव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्॥१९॥

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिः उच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भौकृत्वे हेतुः उच्यते॥२०॥

पुरुषः प्रकृतिस्थः हि भुङ्गे प्रकृतिजान् गुणान्।
कारणं गुणसङ्गः अस्य सदसद्योनिजन्मसु॥२१॥

उपद्रष्टा अनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मा इति च अपि उक्तः देहे अस्मिन् पुरुषः परः॥२२॥

यः एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानः अपि न सः भूयः अभिजायते॥२३॥

ध्यानेन आत्मनि पश्यन्ति केचित् आत्मानम् आत्मना।
अन्ये साङ्घोन योगेन कर्मयोगेन च अपरे॥२४॥

अन्ये तु एवम् अजानन्तः श्रुत्वा अन्येभ्यः उपासते।
ते अपि च अतितरन्ति एव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥२५॥

यावत् सञ्चायते किञ्चित् सत्त्वं स्थावरजड़मम्।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् तत् विद्धि भरतर्षभा॥२६॥

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्सु अविनश्यन्तं यः पश्यति सः पश्यति॥२७॥

समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितम् ईश्वरम्।
न हिनस्ति आत्मना आत्मानं ततः याति परां गतिम्॥२८॥

प्रकृत्या एव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथा आत्मानम् अकर्तारं सः पश्यति॥२९॥

यदा भूतपृथग्भावम् एकस्थम् अनुपश्यति।
ततः एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा॥३०॥

अनादित्वात् निर्गुणत्वात् परमात्मा अयम् अव्ययः।
शरीरस्थः अपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते॥३१॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यात् आकाशं न उपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितः देहे तथा आत्मा न उपलिप्यते॥३२॥

यथा प्रकाशयति एकः कृत्स्नं लोकम् इमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥३३॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः एवम् अन्तरं ज्ञानचक्षुषा।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुः यान्ति ते परम्॥३४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः॥

॥चतुर्दशोऽध्यायः—गुणत्रयविभागयोगः ॥

श्रीभगवानुवाच

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानम् उत्तमम्।
यत् ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिम् इतः गताः॥१॥

इदं ज्ञानम् उपाश्रित्य मम साधर्म्यम् आगताः।
सर्गे अपि न उपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च॥२॥

मम योनिः महत् ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधामि अहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततः भवति भारत॥३॥

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महत् योनिः अहं बीजप्रदः पिता॥४॥

सत्त्वं रजः तमः इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनम् अव्ययम्॥५॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकम् अनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन च अनघ॥६॥

रजः रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तत् निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्॥७॥

तमः तु अज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिः तत् निबध्नाति भारत॥८॥

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानम् आवृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयति उत॥९॥

रजः तमः च अभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमः च एव तमः सत्त्वं रजः तथा॥१०॥

सर्वद्वारेषु देहे अस्मिन् प्रकाशः उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्यात् विवृद्धं सत्त्वम् इति उत॥११॥

लोभः प्रवृत्तिः आरम्भः कर्मणाम् अशामः स्पृहा।
रजसि एतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ॥१२॥

अप्रकाशः अप्रवृत्तिः च प्रमादः मोहः एव च।
तमसि एतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन॥१३॥

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदा उत्तमविदां लोकान् अमलान् प्रतिपद्यते॥१४॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनः तमसि मूढयोनिषु जायते॥१५॥

कर्मणः सुकृतस्य आहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसः तु फलं दुःखम् अज्ञानं तमसः फलम्॥१६॥

सत्त्वात् सञ्जायते ज्ञानं रजसः लोभः एव च।
प्रमादमोहौ तमसः भवतः अज्ञानम् एव च॥१७॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्थाः मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्थाः अधः गच्छन्ति तामसाः॥१८॥

न अन्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टा अनुपश्यति।
गुणेभ्यः च परं वेत्ति मद्भावं सः अधिगच्छति॥१९॥

गुणान् एतान् अतीत्य त्रीन् देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैः विमुक्तः अमृतम् अश्रुते॥२०॥

अर्जुन उवाच

कैः लिङ्गैः त्रीन् गुणान् एतान् अतीतः भवति प्रभो।
किम् आचारः कथं च एतान् त्रीन् गुणान् अतिवर्तते॥२१॥

श्रीभगवानुवाच

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहम् एव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति॥२२॥

उदासीनवत् आसीनः गुणैः यः न विचाल्यते।
गुणाः वर्तन्ते इति एव यः अवतिष्ठति न इङ्गते॥२३॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाशमकाश्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियः धीरः तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः॥२४॥

मानापमानयोः तुल्यः तुल्यः मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारभ्यपरित्यागी गुणातीतः सः उच्यते॥२५॥

मां च यः अव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
सः गुणान् समतीत्य एतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥२६॥

ब्रह्मणः हि प्रतिष्ठा अहम् अमृतस्य अव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्य एकान्तिकस्य च॥२७॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः॥

॥पञ्चदशोऽध्यायः—पुरुषोत्तमयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

ऊर्ध्वमूलम् अधशाखम् अश्वत्थं प्राहुः अव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यः तं वेद सः वेदवित्॥१॥

अधः च ऊर्ध्वं प्रसृताः तस्य शाखाः
गुणप्रवृद्धाः विषयप्रवालाः।
अधः च मूलानि अनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके॥२॥

न रूपम् अस्य इह तथा उपलभ्यते
न अन्तः न च आदिः न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थम् एनं सुविरुद्धमूलम्
असङ्गंशास्त्रेण दृढेन छित्त्वा॥३॥

ततः पदं तत् परिमार्गितव्यं
यस्मिन् गताः न निवर्तन्ति भूयः।
तम् एव च आद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी॥४॥

निर्मानमोहाः जितसङ्गदोषाः
अध्यात्मनित्याः विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैः विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैः
गच्छन्ति अमूढाः पदम् अव्ययं तत्॥५॥

न तत् भासयते सूर्यः न शशाङ्कः न पावकः।
यत् गत्वा न निवर्तन्ते तत् धाम परमं मम॥६॥

मम एव अंशः जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥७॥

शरीरं यत् अवाप्नोति यत् च अपि उल्कामति ईश्वरः।
गृहीत्वा एतानि संयाति वायुः गन्धान् इव आशयात्॥८॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणम् एव च।
अधिष्ठाय मनः च अयं विषयान् उपसेवते॥९॥

उल्कामन्तं स्थितं वा अपि भुज्ञानं वा गुणान्वितम्।
विमूढाः न अनुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः॥१०॥

यतन्तः योगिनः च एनं पश्यन्ति आत्मनि अवस्थितम्।
यतन्तः अपि अकृतात्मानः न एनं पश्यन्ति अचेतसः॥११॥

यत् आदित्यगतं तेजः जगत् भासयते अखिलम्।
यत् चन्द्रमसि यत् च अग्नौ तत् तेजः विष्णि मामकम्॥१२॥

गाम् आविश्य च भूतानि धारयामि अहम् ओजसा।
पुण्णामि च ओषधीः सर्वाः सोमः भूत्वा रसात्मकः॥१३॥

अहं वैश्वानरः भूत्वा प्राणिनां देहम् आश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचामि अन्नं चतुर्विधम्॥१४॥

सर्वस्य च अहं हृदि सन्निविष्टः
मत्तः स्मृतिः ज्ञानम् अपोहनं च।
वेदैः च सर्वैः अहम् एव वेद्यः
वेदान्तकृत् वेदवित् एव च अहम्॥१५॥

द्वौ इमौ पुरुषौ लोके क्षरः च अक्षरः एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थः अक्षरः उच्यते॥१६॥

उत्तमः पुरुषः तु अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः।
यः लोकत्रयम् आविश्य बिभर्ति अव्ययः ईश्वरः॥१७॥

यस्मात् क्षरम् अतीतः अहम् अक्षरात् अपि च उत्तमः।
अतः अस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥१८॥

यः माम् एवम् असम्मूढः जानाति पुरुषोत्तमम्।
सः सर्ववित् भजति मां सर्वभावेन भारत॥१९॥

इति गुह्यतमं शास्त्रम् इदम् उक्तं मया अनघ।
एतत् बुद्धा बुद्धिमान् स्यात् कृतकृत्यः च भारत॥२०॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
पुरुषोत्तमयोगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः॥

॥षोडशोऽध्यायः—दैवासुरसम्पद्विभागयोगः॥

श्रीभगवानुवाच

अभयं सत्त्वसंशुद्धिः ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमः च यज्ञः च स्वाध्यायः तपः आर्जवम्॥१॥

अहिंसा सत्यम् अक्रोधः त्यागः शान्तिः अपैशुनम्।
 दया भूतेषु अलोलुत्खं मार्दवं ह्रीः अचापलम्॥२॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचम् अद्रोहः न अतिमानिता।
 भवन्ति सम्पदं दैवीम् अभिजातस्य भारत॥३॥

दम्भः दर्पः अभिमानः च क्रोधः पारुष्यम् एव च।
 अज्ञानं च अभिजातस्य पार्थ सम्पदम् आसुरीम्॥४॥

दैवी सम्पत् विमोक्षाय निबन्धाय आसुरी मता।
 मा शुचः सम्पदं दैवीम् अभिजातः आसि पाण्डव॥५॥

द्वौ भूतसर्गौ लोके अस्मिन् दैवः आसुरः एव च।
 दैवः विस्तरशः प्रोक्तः आसुरं पार्थ मे शृणु॥६॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जनाः न विदुः आसुराः।
 न शौचं न अपि च आचारः न सत्यं तेषु विद्यते॥७॥

असत्यम् अप्रतिष्ठं ते जगत् आहुः अनीश्वरम्।
 अपरस्परसम्भूतं किम् अन्यत् कामहैतुकम्॥८॥

एतां दृष्टिम् अवष्टम्य नष्टात्मानः अल्पबुद्धयः।
 प्रभवन्ति उग्रकर्माणः क्षयाय जगतः अहिताः॥९॥

कामम् आश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
 मोहात् गृहीत्वा असत् ग्राहान् प्रवर्तन्ते अशुचिव्रताः॥१०॥

चिन्ताम् अपरिमेयां च प्रलयान्ताम् उपाश्रिताः।
 कामोपभोगपरमाः एतावत् इति निश्चिताः॥११॥

आशापाशशतैः बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
 ईहन्ते कामभोगार्थम् अन्यायेन अर्थसञ्चयान्॥१२॥

इदम् अद्य मया लब्धम् इमं प्राप्ये मनोरथम्।
 इदम् अस्ति इदम् अपि मे भविष्यति पुनः धनम्॥१३॥

असौ मया हतः शत्रुः हनिष्ये च अपरान् अपि।
 ईश्वरः अहम् अहं भोगी सिद्धः अहं बलवान् सुखी॥१४॥

आद्यः अभिजनवान् अस्मि कः अन्यः अस्ति सदृशः मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्ये इति अज्ञानविमोहिताः॥१५॥

अनेकचित्तविभ्रान्ताः मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरके अशुचौ॥१६॥

आत्मसम्भाविताः स्तव्याः धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैः ते दम्भेन अविधिपूर्वकम्॥१७॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
माम् आत्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तः अभ्यसूयकाः॥१८॥

तान् अहं द्विषतः कूरान् संसारेषु नराधमान्।
क्षिपामि अजस्रम् अशुभान् आसुरीषु एव योनिषु॥१९॥

आसुरीं योनिम् आपन्नाः मूढाः जन्मनि जन्मनि।
माम् अप्राप्य एव कौन्तेय ततः यान्ति अधमां गतिम्॥२०॥

त्रिविधं नरकस्य इदं द्वारं नाशनम् आत्मनः।
कामः क्रोधः तथा लोभः तस्मात् एतत् त्रयं त्यजेत्॥२१॥

एतैः विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैः त्रिभिः नरः।
आचरति आत्मनः श्रेयः ततः याति परां गतिम्॥२२॥

यः शास्त्रविधिम् उत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न सः सिद्धिम् अवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥२३॥

तस्मात् शास्त्रं प्रमाणं ते कार्यकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुम् इह अर्हसि॥२४॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
दैवासुरसम्पद्विभागयोगो नाम षोडशोऽध्यायः॥

॥ सप्तदशोऽध्यायः—श्रद्धात्रयविभागयोगः ॥

अर्जुन उवाच

ये शास्त्रविधिम् उत्सृज्य यजन्ते श्रद्धया अन्विताः।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वम् आहो रजः तमः॥१॥

श्रीभगवानुवाच

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी च एव तामसी च इति तां शृणु॥२॥

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयः अयं पुरुषः यः यत् श्रद्धः सः एव सः॥३॥

यजन्ते सात्त्विकाः देवान् यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान् भूतगणान् च अन्ये यजन्ते तामसाः जनाः॥४॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपः जनाः।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः॥५॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्रामम् अचेतसः।
मां च एव अन्तःशरीरस्थं तान् विद्धि आसुरनिश्चयान्॥६॥

आहारः तु अपि सर्वस्य त्रिविधः भवति प्रियः।
यज्ञः तपः तथा दानं तेषां भेदम् इमं शृणु॥७॥

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः |
रस्याः स्निग्धाः स्थिराः हृद्याः आहाराः सात्त्विकप्रियाः॥८॥

कद्वमूलवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः |
आहाराः राजसस्य इष्टाः दुःखशोकामयप्रदाः॥९॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टम् अपि च अमैर्घ्यं भोजनं तामसप्रियम्॥१०॥

अफलाकाङ्क्षिभिः यज्ञः विधिवृष्टः यः इज्यते।
यष्टव्यम् एव इति मनः समाधाय सः सात्त्विकः॥११॥

अभिसन्ध्याय तु फलं दम्भार्थम् अपि च एव यत्।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम्॥१२॥

विधिहीनम् असृष्टान्नं मन्त्रहीनम् अदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते॥१३॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचम् आर्जवम्।
ब्रह्मचर्यम् अहिंसा च शारीरं तपः उच्यते॥१४॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं च एव वाङ्मयं तपः उच्यते॥१५॥

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनम् आत्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिः इति एतत् तपः मानसम् उच्यते॥१६॥

श्रद्धया परया तसं तपः तत् त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिः युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते॥१७॥

सत्कारमानपूजार्थं तपः दम्भेन च एव यत्।
क्रियते तत् इह प्रोक्तं राजसं चलम् अध्रुवम्॥१८॥

मूढग्राहेण आत्मनः यत् पीडया क्रियते तपः।
परस्य उत्सादनार्थं वा तत् तामसम् उदाहृतम्॥१९॥

दातव्यम् इति यत् दानं दीयते अनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तत् दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥२०॥

यत् तु प्रत्युपकारार्थं फलम् उद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तत् दानं राजसं स्मृतम्॥२१॥

अदेशकाले यत् दानम् अपात्रेभ्यः च दीयते।
असत्कृतम् अवज्ञातं तत् तामसम् उदाहृतम्॥२२॥

ओं तत् सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणाः तेन वेदाः च यज्ञाः च विहिताः पुरा॥२३॥

तस्मात् ओम् इति उदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥२४॥

तत् इति अनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाः च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः॥२५॥

सद्ग्रावे साधुभावे च सत् इति एतत् प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सत् शब्दः पार्थ युज्यते॥२६॥

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सत् इति च उच्यते।
कर्म च एव तदर्थीयं सत् इति एव अभिधीयते॥२७॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपः तसं कृतं च यत्।
असत् इति उच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य नो इह॥२८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः॥

॥ अष्टादशोऽध्यायः—मोक्षसन्ध्यासयोगः ॥

अर्जुन उवाच

सन्ध्यासस्य महाबाहो तत्त्वम् इच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक् केशिनिषूदन॥१॥

श्रीभगवानुवाच

काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्ध्यासं कवयः विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुः त्यागं विचक्षणाः॥२॥

त्याज्यं दोषवत् इति एके कर्म प्राहुः मनीषिणः।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यम् इति च अपरे॥३॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तमा।
त्यागः हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तिः॥४॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यम् एव तत्।
यज्ञः दानं तपः च एव पावनानि मनीषिणाम्॥५॥

एतानि अपि तु कर्मणि सङ्गं त्यक्ता फलानि च।
कर्तव्यानि इति मे पार्थ निश्चितं मतम् उत्तमम्॥६॥

नियतस्य तु सन्ध्यासः कर्मणः न उपपद्यते।
मोहात् तस्य परित्यागः तामसः परिकीर्तिः॥७॥

दुःखम् इति एव यत् कर्म कायक्लेशभयात् त्यजेत्।
सः कृत्वा राजसं त्यागं न एव त्यागफलं लभेत्॥८॥

कार्यम् इति एव यत् कर्म नियतं क्रियते अर्जुन।
सङ्गं त्यक्ता फलं च एव सः त्यागः सात्त्विकः मतः॥९॥

न द्वेष्टि अकुशलं कर्म कुशले न अनुष्ठाते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टः मेधावी छिन्नसंशयः॥१०॥

न हि देहभूता शक्यं त्यक्तुं कर्माणि अशेषतः।
यः तु कर्मफलत्यागी सः त्यागी इति अभिधीयते॥११॥

अनिष्टम् इष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्।
भवति अत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्ध्यासिनां क्वचित्॥१२॥

पञ्च एतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
साङ्घो कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्॥१३॥

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाः च पृथक् चेष्टाः दैवं च एव अत्र पञ्चमम्॥१४॥

शरीरवाङ्मनोभिः यत् कर्म प्रारभते नरः।
न्यायं वा विपरीतं वा पञ्च एते तस्य हेतवः॥१५॥

तत्र एवं सति कर्तारम् आत्मानं केवलं तु यः।
पश्यति अकृतबुद्धित्वात् न सः पश्यति दुर्मतिः॥१६॥

यस्य न अहङ्कृतः भावः बुद्धिः यस्य न लिप्यते।
हत्वा अपि सः इमान् लोकान् न हन्ति न निबध्यते॥१७॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।
करणं कर्म कर्ता इति त्रिविधः कर्मसङ्ग्रहः॥१८॥

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधा एव गुणभेदतः।
प्रोच्यते गुणसङ्घाने यथावत् शृणु तानि अपि॥१९॥

सर्वभूतेषु येन एकं भावम् अव्ययम् ईक्षते।
अविभक्तं विभक्तेषु तत् ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम्॥२०॥

पृथक्केन तु यत् ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान्।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तत् ज्ञानं विद्धि राजसम्॥२१॥

यत् तु कृत्स्ववत् एकस्मिन् कार्ये सत्कम् अहैतुकम्।
अतत्त्वार्थवत् अल्पं च तत् तामसम् उदाहृतम्॥२२॥

नियतं सङ्गरहितम् अरागद्वेषतः कृतम्।
अफलप्रेष्मुना कर्म यत् तत् सात्त्विकम् उच्यते॥२३॥

यत् तु कामेष्मुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः।
क्रियते बहुलायासं तत् राजसम् उदाहृतम्॥२४॥

अनुबन्धं क्षयं हिंसाम् अनपेक्ष्य च पौरुषम्।
मोहात् आरभ्यते कर्म यत् तत् तामसम् उच्यते॥२५॥

मुक्तसङ्गः अनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्धसिद्धोः निर्विकारः कर्ता सात्त्विकः उच्यते॥२६॥

रागी कर्मफलप्रेष्मुः लुब्धः हिंसात्मकः अशुचिः।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तिः॥२७॥

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठः नैष्कृतिकः अलसः।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामसः उच्यते॥२८॥

बुद्धेः भेदं धृतेः च एव गुणतः त्रिविधं शृण।
प्रोच्यमानम् अशेषेण पृथक्केन धनञ्जय॥२९॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३०॥

यया धर्मम् अधर्म च कार्यं च अकार्यम् एव च।
अयथावत् प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी॥३१॥

अधर्म धर्मम् इति या मन्यते तमसा आवृता।
सर्वार्थान् विपरीतान् च बुद्धिः सा पार्थ तामसी॥३२॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेन अव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी॥३३॥

यया तु धर्मकामार्थान् धृत्या धारयते अर्जुन।
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी॥३४॥

यया स्वप्रं भयं शोकं विषादं मदम् एव च।
न विमुश्ति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी॥३५॥

सुखं तु इदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभा।
अभ्यासात् रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति॥३६॥

यत् तत् अग्रे विषम् इव परिणामे अमृतोपमम्।
तत् सुखं सात्त्विकं प्रोक्तम् आत्मबुद्धिप्रसादजम्॥३७॥

विषयेन्द्रियसंयोगात् यत् तत् अग्रे अमृतोपमम्।
परिणामे विषम् इव तत् सुखं राजसं स्मृतम्॥३८॥

यत् अग्रे च अनुबन्धे च सुखं मोहनम् आत्मनः।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत् तामसम् उदाहृतम्॥३९॥

न तत् आस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः।
सत्त्वं प्रकृतिजैः मुक्तं यत् एभिः स्यात् त्रिभिः गुणैः॥४०॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैः गुणैः॥४१॥

शमः दमः तपः शौचं क्षान्तिः आर्जवम् एव च।
ज्ञानं विज्ञानम् आस्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥४२॥

शौर्यं तेजः धृतिः दाक्ष्यं युद्धे च अपि अपलायनम्।
दानम् ईश्वरभावः च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्॥४३॥

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्य अपि स्वभावजम्॥४४॥

स्वे स्वे कर्मणि अभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तत् शृणु॥४५॥

यतः प्रवृत्तिः भूतानां येन सर्वम् इदं ततम्।
स्वकर्मणा तम् अभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥

श्रेयान् स्वधर्मः विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषम्॥४७॥

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषम् अपि न त्यजेत्।
सर्वारम्भाः हि दोषेण धूमेन अग्निः इव आवृताः॥४८॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्ध्यासेन अधिगच्छति॥४९॥

सिद्धिं प्राप्तः यथा ब्रह्म तथा आप्नोति निबोध मे।
समासेन एव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा॥५०॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तः धृत्या आत्मानं नियम्य च।
शब्दादीन् विषयान् त्यक्ता रागद्वेषौ व्युदस्य च॥५१॥

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्षायमानसः।
ध्यानयोगपरः नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥५२॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शान्तः ब्रह्मभूयाय कल्पते॥५३॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्॥५४॥

भक्त्या माम् अभिजानाति यावान् यः च अस्मि तत्त्वतः।
ततः मां तत्त्वतः ज्ञात्वा विशते तत् अनन्तरम्॥५५॥

सर्वकर्माणि अपि सदा कुर्वणः मद्वपाश्रयः।
मत्प्रसादात् अवाप्नोति शाश्वतं पदम् अव्ययम्॥५६॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि सन्ध्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगम् उपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव॥५७॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यसि।
अथ चेत् त्वम् अहङ्कारात् न श्रोष्यसि विनष्ट्यसि॥५८॥

यत् अहङ्कारम् आश्रित्य न योत्स्ये इति मन्यसे।
मिथ्या एषः व्यवसायः ते प्रकृतिः त्वां नियोक्ष्यति॥५९॥

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा।
कर्तुं न इच्छसि यत् मोहात् करिष्यसि अवशः अपि तत्॥६०॥

ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशे अर्जुन तिष्ठति।
प्रामयन् सर्वभूतानि यत्रारूढानि मायया॥६१॥

तम् एव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत् प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥६२॥

इति ते ज्ञानम् आख्यातं गुह्यात् गुह्यतरं मया।
विमृश्य एतत् अशेषेण यथा इच्छसि तथा कुरु॥६३॥

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः।
इष्टः असि मे दृढम् इति ततः वक्ष्यामि ते हितम्॥६४॥

मन्मनाः भव मद्भक्तः मद्याजी मां नमस्कुरु।
माम् एव एष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियः असि मे॥६५॥

सर्वधर्मान् परित्यज्य माम् एकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यः मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥६६॥

इदं ते न अतपस्काय न अभक्ताय कदाचन।
न च अशुश्रूषवे वाच्यं न च मां यः अभ्यसूयति॥६७॥

यः इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेषु अभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा माम् एव एष्यति असंशयः॥६८॥

न च तस्मात् मनुष्येषु कश्चित् मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मात् अन्यः प्रियतरः भुवि॥६९॥

अध्येष्यते च यः इमं धर्म्यं संवादम् आवयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेन अहम् इष्टः स्याम् इति मे मतिः॥७०॥

श्रद्धावान् अनसूयः च शृणुयात् अपि यः नरः।
सः अपि मुक्तः शुभान् लोकान् प्राप्नुयात् पुण्यकर्मणाम्॥७१॥

कच्चित् एतत् श्रुतं पार्थ त्वया एकाग्रेण चेतसा।
कच्चित् अज्ञानसम्मोहः प्रनष्टः ते धनञ्जय॥७२॥

अर्जुन उवाच

नष्टः मोहः स्मृतिः लब्धा त्वत् प्रसादात् मया अच्युत।
स्थितः अस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥७३॥

सङ्ख्य उवाच

इति अहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादम् इमम् अश्रौषम् अद्भुतं रोमहर्षणम्॥७४॥

व्यासप्रसादात् श्रुतवान् एतत् गुह्यम् अहं परम्।
योगं योगेश्वरात् कृष्णात् साक्षात् कथयतः स्वयम्॥७५॥

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादम् इमम् अद्भुतम्।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुः मुहुः॥७६॥

तत् च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपम् अत्यद्भुतं हरेः।
विस्मयः मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः॥७७॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्र पार्थः धनुर्धरः।
तत्र श्रीः विजयः भूतिः ध्रुवा नीतिः मतिः मम॥७८॥

॥ॐ तत् सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
मोक्षसन्ध्यासयोगो नाम अष्टादशोऽध्यायः॥



॥माहात्म्यम्॥

गीताशास्त्रमिदं पुण्यं यः पठेत् प्रयतः पुमान्।
विष्णोः पदमवाप्नोति भय-शोकादि-वर्जितः॥१॥

गीताध्ययन-शीलस्य प्राणायाम-परस्य च।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्व-जन्म-कृतानि च॥२॥

मल-निर्मोचनं पुंसां जल-स्नानं दिने दिने।
सकृद् गीताभ्यसि स्नानं संसार-मल-नाशनम्॥३॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख-पद्माद् विनिःसृता॥४॥

भारतामृत-सर्वस्वं विष्णोर्वक्राद् विनिःसृतम्।
गीता-गङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥५॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल-नन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भक्ता दुर्गं गीतामृतं महत्॥६॥

एकं शास्त्रं देवकी-पुत्र-गीतम्
 एको देवो देवकी-पुत्र एव।
 एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि
 कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा॥७॥



॥ गीतामाहात्म्यम् ॥

॥ ध्यान-श्लोकाः ॥

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
 देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥१॥

नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम्।
 खुरमध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते॥२॥

दंष्ट्राग्रेणोद्धृता गौरुदधिपरिवृता पर्वतैर्निम्नगाभिः
 साकं मृत्यिष्ठवत् प्राग्बृहदुरुवपुषाऽनन्तरूपेण येन।
 सोऽयं कंसासुरारिमुरनरकदशास्यान्तकृत्सर्वसंस्थः
 कृष्णो विष्णुः सुरेशो नुदतु मम रिपूनादिदेवो वराहः॥३॥

यः संसारणवे नौरिव मरणजराव्याधिनक्रोर्मिभीमे
 भक्तानां भीतिहर्ता मुरनरकदशास्यान्तकृत् कोलरूपी।
 विष्णुः सर्वेश्वरोऽयं यमिह कृतधियो लीलया प्राप्नुवन्ति
 मुक्तात्मानो न पापं प्रभवमनुदिनारातिपक्षः क्षितीशः॥४॥



धरोवाच

भगवन् परमेशान भक्तिरव्यभिचारिणी।
 प्रारब्धं भुज्यमानस्य कथं भवति हे प्रभो॥१॥

श्री-विष्णुरुवाच

प्रारब्धं भुज्यमानो हि गीताभ्यासरतः सदा।
 स मुक्तः स सुखी लोके कर्मणा नोपलिप्यते॥२॥

महापापादिपापानि गीताध्यानं करोति चेत्।
क्वचित् स्पर्शं न कुर्वन्ति नलिनीदलमभ्युवत्॥३॥

गीतायाः पुस्तकं यत्र यत्र पाठः प्रवर्तते।
तत्र सर्वाणि तीर्थानि प्रयागादीनि तत्र वै॥४॥

सर्वे देवाश्च ऋषयो योगिनः पन्नगाश्च ये।
गोपाला गोपिका वाऽपि नारदोद्भवपार्षदैः।
सहायो जायते शीघ्रं यत्र गीता प्रवर्तते॥५॥

यत्र गीताविचारश्च पठनं पाठनं श्रुतम्।
तत्राहं निश्चितं पृथ्वि निवसामि सदैव हि॥६॥

गीताश्रयेऽहं तिष्ठामि गीता मे चोत्तमं गृहम्।
गीताज्ञानमुपाश्रित्य त्रैलोकान् पालयाम्यहम्॥७॥

गीता मे परमा विद्या ब्रह्मरूपा न संशयः।
अर्धमात्राक्षरा नित्या स्वानिर्वाच्यपदात्मिका॥८॥

चिदानन्देन कृष्णेन प्रोक्ता स्वमुखतोऽर्जुनम्।
वेदत्रयी परानन्दा तत्त्वार्थज्ञानसंयुता॥९॥

योऽष्टादशजपो नित्यं नरो निश्चलमानसः।
ज्ञानसिद्धिं स लभते ततो याति परं पदम्॥१०॥

पाठेऽस्मर्थः सम्पूर्णं ततोऽर्धं पाठमाचरेत्।
तदा गोदानजं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥११॥

त्रिभागं पठमानस्तु गङ्गास्नानफलं लभेत्।
षडंशं जपमानस्तु सोमयागफलं लभेत्॥१२॥

एकाध्यायं तु यो नित्यं पठते भक्तिसंयुतः।
रुद्रलोकमवाप्नोति गणो भूत्वा वसेच्चिरम्॥१३॥

अध्यायं क्षोकपादं वा नित्यं यः पठते नरः।
स याति नरतां यावन्मन्वन्तरं वसुन्धरे॥१४॥

गीतायाः क्षोकदशकं सप्त पञ्च चतुष्टयम्।
द्वौ त्रीनेकं तदर्थं वा क्षोकानां यः पठेन्नरः॥१५॥

चन्द्रलोकमवाप्नोति वर्षाणामयुतं ध्रुवम्।
गीतापाठसमायुक्तो मृतो मानुषतां ब्रजेत्॥१६॥

गीताभ्यासं पुनः कृत्वा लभते मुक्तिमुत्तमाम्।
गीतेत्युच्चारसंयुक्तो म्रियमाणो गतिं लभेत्॥१७॥

गीतार्थश्रवणासक्तो महापापयुतोऽपि वा।
वैकुण्ठं समवाप्नोति विष्णुना सह मोदते॥१८॥

गीतार्थ ध्यायते नित्यं कृत्वा कर्माणि भूरिशः।
जीवन्मुक्तः स विज्ञेयो देहान्ते परमं पदम्॥१९॥

गीतामाश्रित्य बहवो भूभुजो जनकादयः।
निर्धूतकल्मषा लोके गीतायाताः परं पदम्॥२०॥

गीतायाः पठनं कृत्वा माहात्म्यं नैव यः पठेत्।
वृथा पाठो भवेत्तस्य श्रम एव ह्युदाहृतः॥२१॥

एतन्माहात्म्यसंयुक्तं गीताभ्यासं करोति यः।
स तत् फलमवाप्नोति दुर्लभां गतिमाप्न्यात्॥२२॥

सूत उवाच

माहात्म्यमेतद्वीताया मया प्रोक्तं सनातनम्।
गीतान्ते च पठेद्यस्तु यदुक्तं तत्फलं लभेत्॥२३॥

॥इति श्रीवाराहपुराणे श्रीगीतामाहात्म्यं सम्पूर्णम्॥



॥मञ्जलश्लोकाः ॥

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्यायेन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥१॥

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः॥२॥

अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः।
अधनाः सधनाः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्॥३॥



विभागः ३

श्लोकानुक्रमणिका

अ

| | |
|---------------------------------------|-------|
| अकीर्तिं चापि भूतानि | २-३४ |
| अक्षरं ब्रह्म परमं | ८-३ |
| अक्षराणामकारोऽस्मि | १०-३३ |
| अग्निज्योतिरहः शुक्रः | ८-२४ |
| अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य . | २-२४ |
| अजोऽपि सन्नव्ययात्मा | ४-६ |
| अज्ञश्चाश्रद्धानश्च | ४-४० |
| अत्र शूरा महेष्वासा | १-४ |
| अथ केन प्रयुक्तोऽयं | ३-३६ |
| अथ चित्तं समाधातुं | १२-९ |
| अथ चेत्त्वमिमं धर्म्य | २-३३ |
| अथ चैनं नित्यजातं | २-२६ |
| अथ व्यवस्थितान् दृष्टा | १-२० |
| अथवा बहुनैतेन | १०-४२ |
| अथवा योगिनामेव | ६-४२ |
| अथैतदप्यशक्तोऽसि | १२-११ |
| अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्टा | ११-४५ |
| अदेशकाले यद् दानम् | १७-२२ |
| अद्वेष्टा सर्वभूतानां | १२-१३ |
| अधर्मं धर्ममिति या | १८-३२ |
| अधर्माभिभवात् कृष्ण | १-४१ |
| अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखाः . | १५-२ |
| अधिभूतं क्षरो भावः | ८-४ |
| अधियज्ञः कथं कोऽत्र | ८-२ |
| अधिष्ठानं तथा कर्ता | १८-१४ |
| अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं | १३-११ |

| | |
|-----------------------------------|-------|
| अध्येष्यते च य इमं | १८-७० |
| अनन्तविजयं राजा | १-१६ |
| अनन्तश्चास्मि नागानां | १०-२९ |
| अनन्यचेताः सततं | ८-१४ |
| अनन्याश्चिन्तयन्तो मां | ९-२२ |
| अनपेक्षः शुचिर्दक्ष | १२-१६ |
| अनादित्वान्निर्गुणत्वात् | १३-३१ |
| अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यम् ... | ११-१९ |
| अनाश्रितः कर्मफलं | ६-१ |
| अनिष्टमिष्टं मिश्रं च | १८-१२ |
| अनुद्वेगकरं वाक्यं | १७-१५ |
| अनुबन्धं क्षयं हिंसामनपेक्ष्य ... | १८-२५ |
| अनेकचित्तविभ्रान्ता | १६-१६ |
| अनेकबाहूदरवक्रनेत्रं | ११-१६ |
| अनेकवक्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् | ११-१० |
| अन्तकाले च मामेव | ८-५ |
| अन्तवत् तु फलं तेषां | ७-२३ |
| अन्तवन्त इमे देहा | २-१८ |
| अन्नाद् भवन्ति भूतानि | ३-१४ |
| अन्ये च बहवः शूरा | १-९ |
| अन्ये त्वेवमजानन्तः | १३-२५ |
| अपरं भवतो जन्म | ४-४ |
| अपरे नियताहाराः | ४-३० |
| अपरेयमितस्त्वन्यां | ७-५ |
| अपर्यासं तदस्माकं | १-१० |
| अपाने जुह्वति प्राणं | ४-२९ |
| अपि चेत् सुदुराचारे | ९-३० |
| अपि चेदसि पापेभ्यः | ४-३६ |
| अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च | १४-१३ |
| अफलाकाङ्गिभिर्यज्ञो | १७-११ |

| | |
|---|-------|
| अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्जनयोगव्यवस्थितिः | |
| १६-१ | |
| अभिसन्धाय तु फलं | १७-१२ |
| अभ्यासयोगयुक्तेन | ८-८ |
| अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि | १२-१० |
| अमानित्वमदभित्वमहिंसा | १३-७ |
| अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः . | ११-२६ |
| अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति . | ११-२१ |
| अयतिः श्रद्धयोपेतो | ६-३७ |
| अयनेषु च सर्वेषु | १-११ |
| अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः | १८-२८ |
| अवजानन्ति मां मूढा | ९-११ |
| अवाच्यवादांश्च बहून् | २-३६ |
| अविनाशि तु तद्विद्धि | २-१७ |
| अविभक्तं च भूतेषु | १३-१६ |
| अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं | ७-२४ |
| अव्यक्तादीनि भूतानि | २-२८ |
| अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः | ८-१८ |
| अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः ... | ८-२१ |
| अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते | |
| २-२५ | |
| अशास्त्रविहितं घोरं | १७-५ |
| अशोच्यानन्वशोचस्त्वं | २-११ |
| अश्रद्धानाः पुरुषा | ९-३ |
| अश्रद्धया हुतं दत्तं | १७-२८ |
| अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां | १०-२६ |
| असंयतात्मना योगो | ६-३६ |
| असंशयं महाबाहो | ६-३५ |
| असक्तबुद्धिः सर्वत्र | १८-४९ |

| | |
|---------------------------------|-------|
| असक्तिरनभिष्वङ्गः | १३-९ |
| असत्यमप्रतिष्ठं ते | १६-८ |
| असौ मया हतः शत्रुहनिष्ये | १६-१४ |
| अस्माकं तु विशिष्टा ये | १-७ |
| अहं क्रतुरहं यज्ञः | ९-१६ |
| अहं वैश्वानरो भूत्वा | १५-१४ |
| अहं सर्वस्य प्रभवो | १०-८ |
| अहं हि सर्वयज्ञानां | ९-२४ |
| अहङ्कारं बलं दर्पं | १६-१८ |
| अहङ्कारं बलं दर्पं | १८-५३ |
| अहमात्मा गुडाकेश | १०-२० |
| अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः | १६-२ |
| अहिंसा समता तुष्टिस्तपो | १०-५ |
| अहो बत महत्पापं | १-४५ |

आ

| | |
|--------------------------------------|-------|
| आख्याहि मे को भवानुग्रहणो .. | ११-३१ |
| आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव ... | १-३४ |
| आद्योऽभिजनवानस्मि | १६-१५ |
| आत्मसम्भाविताः स्तब्धा | १६-१७ |
| आत्मौपम्येन सर्वत्र | ६-३२ |
| आदित्यानामहं विष्णुज्योतिषां .. | १०-२१ |
| आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं | २-७० |
| आब्रह्मभुवनाल्लोकाः | ८-१६ |
| आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः | |
| १७-८ | |
| आयुधानामहं वज्रं | १०-२८ |
| आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं | ६-३ |
| आवृतं ज्ञानमेतेन | ३-३९ |
| आशापाशाशतैर्बद्धाः | १६-१२ |

ई

ईश्वरः सर्वभूतानां १८-६१

उ

उच्चैः श्रवसमश्वानां १०-२७
 उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि १५-१०
 उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः १५-१७
 उत्सन्नकुलधर्माणां १-४४
 उत्सीदेयुरिमे लोका ३-२४
 उदाराः सर्व एवैते ७-१८
 उदासीनवदासीनो १४-२३
 उद्गरेदात्मनाऽत्मानं ६-५
 उपद्रष्टाऽनुमन्ता च १३-२२

ऊ

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था १४-१८
 ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं १५-१

ऋ

ऋषिभिर्बहुधा गीतं १३-४

ए

एतच्छृत्वा वचनं केशवस्य ११-३५
 एतद् योनीनि भूतानि ७-६

इ

| | |
|---------------------------------|-------|
| आश्वर्यवत् पश्यति कश्चिदेनम् .. | २-२९ |
| आसुरीं योनिमापना | १६-२० |
| आहारस्त्वपि सर्वस्य | १७-७ |
| आहुस्त्वामृषयः सर्वे | १०-१३ |

| | |
|---|-------|
| इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं | १३-६ |
| इच्छाद्वेषसमुत्थेन | ७-२७ |
| इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं | १३-१८ |
| इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं ... | १५-२० |
| इति ते ज्ञानमारव्यातं | १८-६३ |
| इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोत्त्वा | ११-५० |
| इत्यहं वासुदेवस्य | १८-७४ |
| इदं ज्ञानमुपाश्रित्य | १४-२ |
| इदं तु ते गुह्यतमं | ९-१ |
| इदं ते नातपस्काय | १८-६७ |
| इदं शरीरं कौन्तेय | १३-१ |
| इदमद्य मया लब्धमिमं | १६-१३ |
| इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थं | ३-३४ |
| इन्द्रियाणां हि चरतां | २-६७ |
| इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः .. | ३-४२ |
| इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते | |
| ३-४० | |
| इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार | १३-८ |
| इमं विवस्वते योगं | ४-१ |
| इष्टान् भोगान् हि वो देवा | ३-१२ |
| इहैकस्थं जगत् कृत्स्वं | ११-७ |
| इहैव तैर्जितः सर्गो | ५-१९ |

| | | |
|-----------------------------|-------|-------|
| एतन्मे संशयं कृष्ण | | ६-३९ |
| एतां दृष्टिमवष्टभ्य | | १६-९ |
| एतां विभूतिं योगं च | | १०-७ |
| एतान्न हन्तुमिच्छामि | | १-३५ |
| एतान्यपि तु कर्माणि | | १८-६ |
| एतैर्विमुक्तः कौन्तेय | | १६-२२ |
| एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म | | ४-१५ |
| एवं परम्पराप्राप्तमिमं | | ४-२ |
| एवं प्रवर्तितं चक्रं | | ३-१६ |
| एवं बहुविधा यज्ञा | | ४-३२ |
| एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा | | ३-४३ |
| एवं सततयुक्ता ये | | १२-१ |
| एवमुक्तो हृषीकेशो | | १-२४ |
| एवमुक्त्वा ततो राजन् | | ११-९ |
| एवमुक्त्वा हृषीकेशं | | २-९ |
| एवमुक्त्वाऽर्जुनः सङ्घ्ये | | १-४७ |
| एवमेतद् यथाऽत्थ त्वमात्मानं | .. | ११-३ |
| एषा तेऽभिहिता साङ्घ्ये | | २-३९ |
| एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ | | २-७२ |

ओ

| | | |
|-----------------------|-------|------|
| ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म | | ८-१३ |
|-----------------------|-------|------|

क

| | | |
|-----------------------------------|-------|-------|
| कच्चिदेतच्छृतं पार्थ | | १८-७२ |
| कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव | | ६-३८ |

| | | |
|---|-------|-------|
| कद्वस्तुलवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः | | |
| १७-९ | | |
| कथं न ज्ञेयमस्माभिः | | १-३९ |
| कथं भीष्ममहं सङ्घ्ये | | २-४ |
| कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां | | १०-१७ |
| कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि | | ३-१५ |
| कर्मजं बुद्धियुक्ता हि | | २-५१ |
| कर्मणः सुकृतस्याऽहुः | | १४-१६ |
| कर्मणैव हि संसिद्धिम् | | ३-२० |
| कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं | | ४-१७ |
| कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि | .. | ४-१८ |
| कर्मण्येवाधिकारस्ते | | २-४७ |
| कर्मेन्द्रियाणि संयम्य | | ३-६ |
| कर्शयन्तः शरीरस्थं | | १७-६ |
| कविं पुराणम् अनुशासितारम् | ... | ८-९ |
| कस्माच्च ते न नमेरन् महात्मन् | . | ११-३७ |
| काङ्गन्तः कर्मणां सिद्धिं | | ४-१२ |
| काम एष क्रोध एष | | ३-३७ |
| कामक्रोधवियुक्तानां | | ५-२६ |
| काममाश्रित्य दुष्पूरं | | १६-१० |
| कामात्मानः स्वर्गपरा | | २-४३ |
| कामैस्तैस्तैर्हतज्ञानाः | | ७-२० |
| काम्यानां कर्मणां न्यासं | | १८-२ |
| कायेन मनसा बुद्ध्या | | ५-११ |
| कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः | | २-७ |
| कार्यकरणकर्तृत्वे | | १३-२० |
| कार्यमित्येव यत् कर्म | | १८-९ |
| कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धो | ११-३२ | |
| काश्यश्च परमेष्वासः | | १-१७ |

| | |
|-----------------------------------|-------|
| किं कर्म किमकर्मेति | ४-१६ |
| किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं | ८-१ |
| किं पुनर्ब्राह्मणः पुण्या | ९-३३ |
| किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तम् ... | ११-४६ |
| किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च ... | ११-१७ |
| कुतस्त्वा कश्मलमिदं | २-२ |
| कुलक्षये प्रणश्यन्ति | १-४० |
| कृपया परयाऽविष्टे | १-२८ |
| कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं | १८-४४ |
| कैलिङ्गस्त्रीन् गुणानेतानतीतो ... | १४-२१ |
| क्रोधाद् भवति सम्मोहः | २-६३ |
| क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम् | १२-५ |
| क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ | २-३ |
| क्षिप्रं भवति धर्मात्मा | ९-३१ |
| क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवम् | १३-३४ |
| क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि | १३-२ |

ग

| | |
|---------------------------------|-------|
| गतसङ्गस्य मुक्तस्य | ४-२३ |
| गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी | ९-१८ |
| गाण्डीवं संसते हस्तात् | १-३० |
| गामाविश्य च भूतानि | १५-१३ |
| गुणानेतानतीत्य त्रीन् | १४-२० |
| गुरुनहत्वा हि महानुभावान् | २-५ |

च

| | |
|---------------------------|------|
| चञ्चलं हि मनः कृष्ण | ६-३४ |
|---------------------------|------|

| | |
|--------------------------------|-------|
| चतुर्विधा भजन्ते मां | ७-१६ |
| चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं | ४-१३ |
| चिन्तामपरिमेयां च | १६-११ |
| चेतसा सर्वकर्माणि | १८-५७ |

ज

| | |
|---------------------------------------|-------|
| जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं | ४-९ |
| जरामरणमोक्षाय | ७-२९ |
| जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं | २-२७ |
| जितात्मनः प्रशान्तस्य | ६-७ |
| ज्ञानं कर्म च कर्ता च | १८-१९ |
| ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता | १८-१८ |
| ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं | ७-२ |
| ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये | ९-१५ |
| ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा | ६-८ |
| ज्ञानेन तु तदज्ञानं | ५-१६ |
| ज्ञेयं यत् तत् प्रवक्ष्यामि | १३-१२ |
| ज्ञेयः स नित्यसन्ध्यासी | ५-३ |
| ज्यायसी चेत् कर्मणस्ते | ३-१ |
| ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः .. | १३-१७ |

त

| | |
|---------------------------------|-------|
| तं तथा कृपयाऽविष्टम् | २-१ |
| तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं ... | ६-२३ |
| तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य | १८-७७ |
| ततः पदं तत् परिमार्गितव्यं ... | १५-४ |
| ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च | १-१३ |
| ततः श्वेतर्हयैर्युक्ते | १-१४ |
| ततः स विस्मयाविष्टे | ११-१४ |

| | |
|---------------------------------------|-------|
| तत् क्षेत्रं यच्च याद्कृ च | 13-३ |
| तत्त्ववित् तु महाबाहो | 3-२८ |
| तत्र तं बुद्धिसंयोगं | ६-४३ |
| तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् | १४-६ |
| तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः | १-२६ |
| तत्रैकस्थं जगत् कृत्स्नं | ११-१३ |
| तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा | ६-१२ |
| तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं | १८-१६ |
| तदित्यनभिसन्धाय | १७-२५ |
| तद् बुद्ध्यस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत् | ५-१७ |
| तद् विद्धि प्रणिपातेन | ४-३४ |
| तपस्विभ्योऽधिको योगी | ६-४६ |
| तपाम्यहमहं वर्षं | ९-१९ |
| तमस्त्वज्ञानजं विद्धि | १४-८ |
| तमुवाच हषीकेशः | २-१० |
| तमेव शरणं गच्छ | १८-६२ |
| तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते | १६-२४ |
| तस्मात् त्वमिन्द्रियाण्यादौ | ३-४१ |
| तस्मात् त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व | ११-३३ |
| तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायं | ११-४४ |
| तस्मात् सर्वेषु कालेषु | ८-७ |
| तस्मादज्ञानसम्भूतं | ४-४२ |
| तस्मादसक्तः सततं | ३-१९ |
| तस्मादोमित्युदाहृत्य | १७-२४ |
| तस्माद् यस्य महाबाहो | २-६८ |
| तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं | १-३७ |
| तस्य सञ्जनयन् हर्षं | १-१२ |
| तानहं द्विषतः क्रूरान् | १६-१९ |
| तानि सर्वाणि संयम्य | २-६१ |

| | |
|----------------------------------|-------|
| तुल्यनिन्दास्तुतिमौनी | १२-१९ |
| ते तं भुत्त्वा स्वर्गलोकं विशालं | ९-२१ |
| तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो | १६-३ |
| तेषां ज्ञानी नित्ययुक्तं | ७-१७ |
| तेषां सततयुक्तानां | १०-१० |
| तेषामहं समुद्धर्ता | १२-७ |
| तेषामेवानुकम्पार्थम् | १०-११ |
| त्यत्त्वा कर्मफलासङ्गं | ४-२० |
| त्याज्यं दोषवदित्येके | १८-३ |
| त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः | ७-१३ |
| त्रिविधं नरकस्येदं | १६-२१ |
| त्रिविधा भवति श्रद्धा | १७-२ |
| त्रैगुण्यविषया वेदा | २-४५ |
| त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापाः | ९-२० |
| त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं | ११-१८ |
| त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः | ११-३८ |

द

| | |
|-----------------------------|-------|
| दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि | ११-२५ |
| दण्डो दमयतामस्मि | १०-३८ |
| दम्भो दर्पोऽभिमानश्च | १६-४ |
| दातव्यमिति यद् दानं | १७-२० |
| दिवि सूर्यसहस्रस्य | ११-१२ |
| दिव्यमाल्याम्बरधरं | ११-११ |
| दुःखमित्येव यत् कर्म | १८-८ |
| दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः | २-५६ |
| दूरेण ह्यवरं कर्म | २-४९ |
| द्वृष्टा तु पाण्डवानीकं | १-२ |
| द्वृष्टेदं मानुषं रूपं | ११-५१ |

| | |
|---|-------|
| दृष्टेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् | |
| १-२८ | |
| देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं | १७-१४ |
| देवान् भावयतानेन | ३-११ |
| देहिनोऽस्मिन् यथा देहे | २-१३ |
| देही नित्यमवध्योऽयं | २-३० |
| दैवमेवापरे यज्ञं | ४-२५ |
| दैवी सम्पद् विमोक्षाय | १६-५ |
| दैवी ह्येषा गुणमयी | ७-१४ |
| दोषैरेतैः कुलघ्नानां | १-४३ |
| द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि | ११-२० |
| द्यूतं छलयतामस्मि | १०-३६ |
| द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा | ४-२८ |
| द्रुपदो द्रौपदेयाश्च | १-१८ |
| द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च | ११-३४ |
| द्वाविमौ पुरुषौ लोके | १५-१६ |
| द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् | १६-६ |

ध

| | |
|---------------------------------|-------|
| धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे | १-१ |
| धूमेनाऽत्रियते वह्निर्यथाऽदर्शो | ३-३८ |
| धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः | ८-२५ |
| धृत्या यया धारयते | १८-३३ |
| धृष्टकेतुश्चेकितानः | १-५ |
| ध्यानेनाऽत्मनि पश्यन्ति | १३-२४ |
| ध्यायतो विषयान् पुंसः | २-६२ |

न

| | |
|-------------------------------|-------|
| न कर्तृत्वं न कर्माणि | ५-१४ |
| न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्य | ३-४ |
| न काङ्क्षे विजयं कृष्ण | १-३२ |
| न च तस्मान्मनुष्येषु | १८-६९ |
| न च मत्स्थानि भूतानि | ९-५ |
| न च मां तानि कर्माणि | ९-९ |
| न चैतद् विद्वः कतरन्नो गरीयो | २-६ |
| न जायते म्रियते वा कदाचित् | २-२० |
| न तदस्ति पृथिव्यां वा | १८-४० |
| न तद् भासयते सूर्यो | १५-६ |
| न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव | ११-८ |
| न त्वेवाहं जातु नाऽसं | २-१२ |
| न द्वेष्यकुशलं कर्म | १८-१० |
| न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य | ५-२० |
| न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां | ३-२६ |
| न मां कर्माणि लिम्पन्ति | ४-१४ |
| न मां दुष्कृतिनो मूढाः | ७-१५ |
| न मे पार्थास्ति कर्तव्यं | ३-२२ |
| न मे विदुः सुरगणाः | १०-२ |
| न रूपमस्येह तथोपलभ्यते | १५-३ |
| न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैः | ११-४८ |
| न हि कश्चित् क्षणमपि | ३-५ |
| न हि ज्ञानेन सदृशं | ४-३८ |
| न हि देहभूता शक्यं | १८-११ |
| न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद् | २-८ |
| नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं | ११-२४ |
| नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते | ११-४० |
| नष्टे मोहः स्मृतिर्लब्धा | १८-७३ |
| नात्यश्वतस्तु योगोऽस्ति | ६-१६ |

| | |
|---------------------------------|-------|
| नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां | १०-४० |
| नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं | १४-१९ |
| नासतो विद्यते भावो | २-१६ |
| नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य | २-६६ |
| नाहं प्रकाशः सर्वस्य | ७-२५ |
| नाहं वेदैर्न तपसा | ११-५३ |
| नाऽऽदत्ते कस्यचित् पापं | ५-१५ |
| निमित्तानि च पश्यामि | १-३१ |
| नियतं कुरु कर्म त्वं | ३-८ |
| नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः | १८-२३ |
| नियतस्य तु सञ्चासः | १८-७ |
| निराशीर्यतचित्तात्मा | ४-२१ |
| निर्मानमोहा जितसङ्गदोषाः | १५-५ |
| निश्चयं शृणु मे तत्र | १८-४ |
| निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः | १-३६ |
| नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति | २-४० |
| नैते सृती पार्थ जानन् | ८-२७ |
| नैनं छिन्दन्ति शख्नाणि | २-२३ |
| नैव किञ्चित् करोमीति | ५-८ |
| नैव तस्य कृतेनार्थो | ३-१८ |

प

| | |
|--|-------|
| पञ्चैतानि महाबाहो | १८-१३ |
| पत्रं पुष्पं फलं तोयं | ९-२६ |
| परं ब्रह्म परं धाम | १०-१२ |
| परं भूयः प्रवक्ष्यामि | १४-१ |
| परस्तस्मात् तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात् | |
| | ८-२० |

| | |
|---------------------------------------|--------|
| परित्राणाय साधूनां | ४-८ |
| पवनः पवतामस्मि | १०-३१ |
| पश्य मे पार्थ रूपाणि | ११-५ |
| पश्यामि देवांस्तव देव देहे | ११-१५ |
| पश्याऽऽदित्यान् वसून् रुद्रानश्चिनौ | ११-६ |
| पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य | १-३ |
| पाञ्चजन्यं हृषीकेशो | १-१५ |
| पार्थ नैवेह नामुत्र | ६-४० |
| पिताऽसि लोकस्य चराचरस्य .. | ११-४३ |
| पिताऽहमस्य जगतो | ९-१७ |
| पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च | ७-९ |
| पुरुषः प्रकृतिस्थो हि | १३-२१ |
| पुरुषः स परः पार्थ | ८-२२ |
| पुरोधसां च मुख्यं मां | १०-२४ |
| पूर्वाभ्यासेन तेनैव | ६-४४ |
| पृथक्त्वेन तु यज्ञानं | १८-२१ |
| प्रकाशं च प्रवृत्तिं च | १४-२२ |
| प्रकृतिं पुरुषं चैव | १३-१९ |
| प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य | ९-८ |
| प्रकृतेः क्रियमाणानि | ३-२७ |
| प्रकृतेर्गुणसम्मूढाः | ३-२९ |
| प्रकृत्यैव च कर्माणि | १३-२९ |
| प्रजहाति यदा कामान् | २-५५ |
| प्रयत्नाद् यतमानस्तु | ६-४५ |
| प्रयाणकाले मनसाऽचलेन | ८-१० |
| प्रलपन् विसृजन् गृह्णन्मिष्निमिषन्नपि | ५-९ |
| प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च | १६-७ |
| प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च | १८-३० |
| प्रशान्तमनसं ह्येनं | ६-२७ |
| प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारित्रते | . ६-१४ |

| | |
|-------------------------------------|-------|
| प्रसादे सर्वदुःखानां | २-६५ |
| प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां | १०-३० |
| प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा ... | ६-४१ |

ब

| | |
|---|-------|
| बन्धुरात्माऽत्मनस्तस्य | ६-६ |
| बलं बलवतां चाहं | ७-११ |
| बहिरन्तश्च भूतानामचरं | १३-१५ |
| बहूनां जन्मनामन्ते | ७-१९ |
| बहूनि मे व्यतीतानि | ४-५ |
| बाह्यस्पर्शसत्कात्मा | ५-२१ |
| बीजं मां सर्वभूतानां | ७-१० |
| बुद्धियुक्तो जहातीह | २-५० |
| बुद्धिज्ञानमसम्मोहः | १०-४ |
| बुद्धेभेदं धृतेश्वैव | १८-२९ |
| बुद्ध्या विशुद्ध्या युक्तो | १८-५१ |
| बृहत्साम तथा साम्नां | १०-३५ |
| ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाऽहममृतस्याव्ययस्य १४-२७ | |
| ब्रह्मण्याधाय कर्माणि | ५-१० |
| ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा | १८-५४ |
| ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ | ४-२४ |
| ब्राह्मणक्षत्रियविशां | १८-४१ |

भ

| | |
|-------------------------------|-------|
| भक्त्या त्वनन्यया शक्यः | ११-५४ |
| भक्त्या मामभिजानाति | १८-५५ |

| | |
|------------------------------|------|
| भयाद् रणादुपरतं | २-३५ |
| भवान् भीष्मश्च कर्णश्च | १-८ |
| भवाप्ययौ हि भूतानां | ११-२ |
| भीष्मद्रोणप्रमुखतः: | १-२५ |
| भूतग्रामः स एवायं | ८-१९ |
| भूमिरापोऽनलो वायुः | ७-४ |
| भूय एव महाबाहो | १०-१ |
| भोक्तारं यज्ञतपसां | ५-२९ |
| भोगैश्वर्यप्रसक्तानां | २-४४ |

म

| | |
|---------------------------------|-------|
| मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि | १८-५८ |
| मच्चित्ता मद्भूतप्राणा | १०-९ |
| मत्कर्मकृन्मत् परमो | ११-५५ |
| मत्तः परतरं नान्यत् | ७-७ |
| मदनुग्रहाय परमं | ११-१ |
| मनः प्रसादः सौम्यत्वं | १७-१६ |
| मनुष्याणां सहस्रेषु | ७-३ |
| मन्मना भव मद्भक्तो | ९-३४ |
| मन्मना भव मद्भक्तो | १८-६५ |
| मन्यसे यदि तच्छक्यं | ११-४ |
| मम योनिर्महद् ब्रह्म | १४-३ |
| ममैवांशो जीवलोके | १५-७ |
| मया ततमिदं सर्वं | ९-४ |
| मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं | ११-४७ |
| मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः | ९-१० |
| मयि चानन्ययोगेन | १३-१० |
| मयि सर्वाणि कर्माणि | ३-३० |
| मय्यावेश्य मनो ये मां | १२-२ |
| मय्यासक्तमनाः पार्थ | ७-१ |

| | |
|------------------------------------|-------|
| मथ्येव मन आधत्स्व | १२-८ |
| महर्षयः सप्त पूर्वे | १०-६ |
| महर्षीणां भृगुरहं | १०-२५ |
| महात्मानस्तु मां पार्थ | ९-१३ |
| महाभूतान्यहङ्कारे | १३-५ |
| मा ते व्यथा मा च विमूढभावो . | ११-४९ |
| मां च योऽव्यभिचारेण | १४-२६ |
| मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य | ९-३२ |
| मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय | २-१४ |
| मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो | १४-२५ |
| मामुपेत्य पुनर्जन्म | ८-१५ |
| मुक्तसङ्गोऽनहंवादी | १८-२६ |
| मूढग्राहेणाऽत्मनो यत् | १७-१९ |
| मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च | १०-३४ |
| मोघाशा मोघकर्मणो | ९-१२ |

य

| | |
|------------------------------------|-------|
| य इदं परमं गुह्यं | १८-६८ |
| य एनं वेत्ति हन्तारं | २-१९ |
| य एवं वेत्ति पुरुषं | १३-२३ |
| यं यं वाऽपि स्मरन् भावं | ८-६ |
| यं लब्धवा चापरं लाभं | ६-२२ |
| यं सन्ध्यासमिति प्राहुर्योगं | ६-२ |
| यं हि न व्यथयन्त्येते | २-१५ |
| यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य | १६-२३ |
| यः सर्वत्रानभिस्त्वेहस्तत् | २-५७ |
| यच्चापि सर्वभूतानां | १०-२९ |
| यच्चावहासार्थमसत् कृतोऽसि ... | ११-४२ |

| | |
|---|-------|
| यजन्ते सात्त्विका देवान् | १७-४ |
| यज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं | ४-३५ |
| यज्ञदानतपःकर्म | १८-५ |
| यज्ञशिष्टामृतभुजो | ४-३१ |
| यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो | ३-१३ |
| यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र | ३-९ |
| यज्ञे तपसि दाने च | १७-२७ |
| यतः प्रवृत्तिर्भूतानां | १८-४६ |
| यततो ह्यपि कौन्तेय | २-६० |
| यतन्तो योगिनश्चैनं | १५-११ |
| यतेन्द्रियमनोबुद्धिमुनिर्मोक्षपरायणः ५- | २८ |
| यतो यतो निश्चरति | ६-२६ |
| यत् करोषि यदश्चासि | ९-२७ |
| यत् तदग्रे विषमिव | १८-३७ |
| यत् तु कामेष्मुना कर्म | १८-२४ |
| यत् तु प्रत्युपकारार्थं | १७-२१ |
| यत् साङ्घैः प्राप्यते स्थानं | ५-५ |
| यतु कृत्स्ववदेकस्मिन् | १८-२२ |
| यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं | ८-२३ |
| यत्र योगेश्वरः कृष्णो | १८-७८ |
| यत्रोपरमते चित्तं | ६-२० |
| यथा दीपो निवातस्थो | ६-१९ |
| यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः ... | ११-२८ |
| यथा प्रकाशयत्येकः | १३-३३ |
| यथा प्रदीपं ज्वलनं पतञ्जाः ... | ११-२९ |
| यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं .. | १३-२२ |
| यथाऽकाशस्थितो नित्यं | ९-६ |
| यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् .. | ४-३७ |
| यदक्षरं वेदविदो वदन्ति | ८-११ |
| यदग्रे चानुबन्धे च | १८-३९ |
| यदहङ्कारमाश्रित्य | १८-५९ |

| | |
|--------------------------------------|-------|
| यदा ते मोहकलिलं | २-५२ |
| यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति | १३-३० |
| यदा यदा हि धर्मस्य | ४-७ |
| यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते | ६-१८ |
| यदा संहरते चायं | २-५८ |
| यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु | १४-१४ |
| यदा हि नेन्द्रियार्थेषु | ६-४ |
| यदादित्यगतं तेजो | १५-१२ |
| यदि मामप्रतीकारम् | १-४६ |
| यदि ह्याहं न वर्तयं | ३-२३ |
| यद्यच्छया चोपपन्नं | २-३२ |
| यद्यच्छालाभसन्तुष्टो | ४-२२ |
| यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत् | ३-२१ |
| यद् यद् विभूतिमत् सत्त्वं | १०-४१ |
| यद्यप्येते न पश्यन्ति | १-३८ |
| यया तु धर्मकामार्थान् | १८-३४ |
| यया धर्मधर्मं च | १८-३९ |
| यया स्वप्नं भयं शोकं | १८-३५ |
| यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च . | ३-१७ |
| यस्त्वन्द्रियाणि मनसा | ३-७ |
| यस्मात् क्षरमतीतोऽहम् | १५-१८ |
| यस्मान्नोद्विजते लोको | १२-१५ |
| यस्य नाहं कृतो भावो | १८-१७ |
| यस्य सर्वे समारम्भाः | ४-१९ |
| या निशा सर्वभूतानां | २-६९ |
| यातयामं गतरसं | १७-१० |
| यान्ति देवब्रता देवान् | ९-२५ |
| यामिमां पुष्पितां वाचं | २-४२ |

| | |
|--------------------------------|-------|
| यावत् सञ्चायते किञ्चित् | १३-२६ |
| यावदेतान्निरीक्षेऽहं | १-२२ |
| यावानर्थं उदपाने | २-४६ |
| युक्तःकर्मफलं त्यत्त्वा | ५-१२ |
| युक्ताहारविहारस्य | ६-१७ |
| युज्ञन्नेवं सदाऽऽत्मानं | ६-१५ |
| युज्ञन्नेवं सदाऽऽत्मानं | ६-२८ |
| युधामन्युश्च विक्रान्त | १-६ |
| ये चैव सात्त्विका भावा | ७-१२ |
| ये तु धर्म्यामृतमिदं | १२-२० |
| ये तु सर्वाणि कर्माणि | १२-६ |
| ये त्वक्षरमनिर्देश्यम् | १२-३ |
| ये त्वेतदभ्यसूयन्तो | ३-३२ |
| ये मे मतमिदं नित्यम् | ३-३१ |
| ये यथा मां प्रपद्यन्ते | ४-११ |
| ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य | १७-१ |
| ये हि संस्पर्शजा भोगा | ५-२२ |
| येषां त्वन्तरगतं पापं | ७-२८ |
| येषामर्थं काङ्क्षितं नो | १-३३ |
| येऽप्यन्यदेवताभक्ता | ९-२३ |
| यो न हृष्यति न द्वेष्टि | १२-१७ |
| यो मां पश्यति सर्वत्र | ६-३० |
| यो मामजमनादिं च | १०-३ |
| यो मामेवमसमूढो | १५-१९ |
| यो यो यां यां तनुं भक्तः | ७-२१ |
| योगयुक्तो विशुद्धात्मा | ५-७ |
| योगसन्ध्यस्तकर्माणं | ४-४१ |
| योगस्थः कुरु कर्माणि | २-४८ |
| योगिनामपि सर्वेषां | ६-४७ |
| योगी युज्ञीत सततमात्मानं | ६-१० |

| | |
|--|------|
| योत्स्यमानानवेक्षेऽहं | १-२३ |
| योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथाऽन्तज्योतिरेव ५-२४ | |
| योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः | ६-३३ |

र

| | |
|--------------------------------------|-------|
| रजसि प्रलयं गत्वा | १४-१५ |
| रजस्तमश्चाभिभूय | १४-१० |
| रजो रागात्मकं विद्धि | १४-७ |
| रसोऽहमप्सु कौन्तेय | ७-८ |
| रागद्वेषवियुक्तैस्तु | २-६४ |
| रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लब्धो | १८-२७ |
| राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य | १८-७६ |
| राजविद्या राजगुह्यं | ९-२ |
| रुद्राणां शङ्करश्चास्मि | १०-२३ |
| रुद्रादित्या वसवो ये च साध्याः ११-२२ | |
| रूपं महत् ते बहुवक्रनेत्रं | ११-२३ |

ल

| | |
|-----------------------------------|-------|
| लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः | ५-२५ |
| लेलिह्वसे ग्रसमानः समन्तात् .. | ११-३० |
| लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा | ३-३ |
| लोभः प्रवृत्तिरारम्भः | १४-१२ |

व

| | |
|-------------------------|-------|
| वक्तुमर्हस्यशेषेण | १०-१६ |
|-------------------------|-------|

| | |
|----------------------------------|-------|
| वक्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति . | ११-२७ |
| वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः .. | ११-३९ |
| वासांसि जीर्णानि यथा विहाय .. | २-२२ |
| विद्याविनयसम्पन्ने | ५-१८ |
| विधिहीनमसृष्टान्नं | १७-१३ |
| विविक्तसेवी लघ्वाशी | १८-५२ |
| विषया विनिवर्तन्ते | २-५९ |
| विषयेन्द्रियसंयोगाद् | १८-३८ |
| विस्तरेणाऽत्मनो योगं | १०-१८ |
| विहाय कामान् यः सर्वान् | २-७१ |
| वीतरागभयक्रोधा | ४-१० |
| वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि | १०-३७ |
| वेदानां सामवेदोऽस्मि | १०-२२ |
| वेदाविनाशिनं नित्यं | २-२१ |
| वेदाहं समतीतानि | ७-२६ |
| वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव | ८-२८ |
| व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह | २-४१ |
| व्यामिश्रेणेव वाक्येन | ३-२ |
| व्यासप्रसादाच्छुतवान् | १८-७५ |

श

| | |
|----------------------------------|-------|
| शक्रोतीहैव यः सोऽुं | ५-२३ |
| शनैः शनैरुपरमेद् | ६-२५ |
| शमो दमस्तपः शौचं | १८-४२ |
| शरीरं यदवाप्नोति | १५-८ |
| शरीरवाङ्मनोभिर्यत् | १८-१५ |
| शुक्लकृष्णे गती ह्येते | ८-२६ |
| शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य | ६-११ |
| शुभाशुभफलैरेवं | ९-२८ |
| शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं | १८-४३ |

| | |
|--|-------|
| श्रद्धया परया तसं | १७-१७ |
| श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं | ४-३९ |
| श्रद्धावाननसूयश्च | १८-७१ |
| श्रुतिविप्रतिपन्ना ते | २-५३ |
| श्रेयान् द्रव्यमयाद् यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः | ४-३३ |
| श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः | ३-३५ |
| श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः | १८-४७ |
| श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद् .. | १२-१२ |
| श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च | १५-९ |
| श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये | ४-२६ |
| श्वशुरान् सुहृदश्वैव | १-२७ |

स

| | |
|--|-------|
| स एवायं मया तेऽद्य | ४-३ |
| स घोषो धार्तराष्ट्राणां | १-१९ |
| स तया श्रद्धया युक्तस्तस्या | ७-२२ |
| सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो | ३-२५ |
| सखेति मत्वा प्रसर्भं यदुक्तं | ११-४१ |
| सङ्करो नरकायैव | १-४२ |
| सङ्कल्पप्रभवान् कामांस्त्यत्त्वा | ६-२४ |
| सततं कीर्तयन्तो मां | ९-१४ |
| सत्कारमानपूजार्थं | १७-१८ |
| सत्त्वं रजस्तम इति | १४-५ |
| सत्त्वं सुखे सञ्चयति | १४-९ |
| सत्त्वात् सञ्चायते ज्ञानं | १४-१७ |
| सत्त्वानुरूपा सर्वस्य | १७-३ |
| सदृशं चेष्टते स्वस्याः | ३-३३ |
| सद्ग्रावे साधुभावे च | १७-२६ |

| | |
|----------------------------------|-------|
| सन्तुष्टः सततं योगी | १२-१४ |
| सन्नियम्येन्द्रियग्रामं | १२-४ |
| सन्ध्यासं कर्मणां कृष्ण | ५-१ |
| सन्ध्यासः कर्मयोगश्च | ५-२ |
| सन्ध्यासस्तु महाबाहो | ५-६ |
| सन्ध्यासस्य महाबाहो | १८-१ |
| समं कायशिरोग्रीवं | ६-१३ |
| समं पश्यन् हि सर्वत्र | १३-२८ |
| समं सर्वेषु भूतेषु | १३-२७ |
| समः शत्रौ च मित्रे च | १२-१८ |
| समदुःखसुखः स्वस्थः | १४-२४ |
| समोऽहं सर्वभूतेषु | ९-२९ |
| सर्गाणामादिरन्तश्च | १०-३२ |
| सर्वकर्माणि मनसा | ५-१३ |
| सर्वकर्माण्यपि सदा | १८-५६ |
| सर्वगुह्यतमं भूयः | १८-६४ |
| सर्वतः पाणिपादं तत् | १३-१३ |
| सर्वद्वाराणि संयम्य | ८-१२ |
| सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् | १४-११ |
| सर्वधर्मान् परित्यज्य | १८-६६ |
| सर्वभूतस्थमात्मानं | ६-२९ |
| सर्वभूतस्थितं यो मां | ६-३१ |
| सर्वभूतानि कौन्तेय | ९-७ |
| सर्वभूतेषु येनैकं | १८-२० |
| सर्वमेतद्वतं मन्ये | १०-१४ |
| सर्वयोनिषु कौन्तेय | १४-४ |
| सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टे .. | १५-१५ |
| सर्वाणीन्द्रियकर्माणि | ४-२७ |
| सर्वेन्द्रियगुणाभासं | १३-१४ |
| सहजं कर्म कौन्तेय | १८-४८ |
| सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टा | ३-१० |

| | |
|--|-------|
| सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद् | ८-१७ |
| साङ्घ्ययोगौ पृथग् बालाः | ५-४ |
| साधिभूताधिदैवं मां | ७-३० |
| सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म | १८-५० |
| सीदन्ति मम गात्राणि | १-२९ |
| सुखं त्विदार्नीं त्रिविधं | १८-३६ |
| सुखदुःखे समे कृत्वा | २-३८ |
| सुखमात्यन्तिकं यत् तद् | ६-२१ |
| सुदुर्दर्शमिदं रूपं | ११-५२ |
| सुहन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थदेष्यबन्धुषु ६-९ | |
| सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत १-२१ | |
| स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या ... | ११-३६ |
| स्थितप्रज्ञस्य का भाषा | २-५४ |
| स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे ५-२७ | |

| | |
|------------------------------|-------|
| स्वधर्ममपि चावेक्ष्य | २-३१ |
| स्वभावजेन कौन्तेय | १८-६० |
| स्वयमेवाऽऽत्मनाऽऽत्मानं | १०-१५ |
| स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः | १८-४५ |

ह

| | |
|----------------------------------|-------|
| हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं | २-३७ |
| हन्त ते कथयिष्यामि | १०-१९ |
| हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह | १-२१ |

ॐ

| | |
|--|--|
| ॐ तत् सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः १७-२३ | |
|--|--|



विभागः ४

पदानुक्रमणिका

अ

अंशः १५-७
 अंशसम्भवम् १०-४१
 अंशुमान् १०-२१
 अकर्तारम् ४-१३, १३-२९
 अकर्म ४-१६, ४-१८
 अकर्मकृत् ३-५
 अकर्मणः ३-८, ४-१७
 अकर्मणि २-४७, ४-१८
 अकलमषम् ६-२७
 अकारः १०-३३
 अकार्यम् १८-३१
 अकीर्तिः २-३४
 अकीर्तिकरम् २-२
 अकीर्तिम् २-३४
 अकुर्वत् १-१
 अकुशलम् १८-१०
 अकृतबुद्धित्वात् १८-१६
 अकृतात्मानः १५-११
 अकृतेन ३-१८
 अकृत्त्वविदः ३-२९
 अक्रियः ६-१
 अक्रोधः १६-२

अक्लेघः २-२४
 अक्षयः १०-३३
 अक्षयम् ५-२१
 अक्षरः ८-२१, १५-१६
 अक्षरम् ८-३, ८-११, १०-२५, ११-१८, ११-३७,
 १२-१, १२-३
 अक्षरसमुद्भवम् ३-१५
 अक्षराणाम् १०-३३
 अक्षरात् १५-१८
 अक्षिशिरोमुखम् १३-१३
 अखिलम् ७-२९, १५-१२
 अगतासून् २-११
 अग्निः ४-३७, ८-२४, ९-१६, ११-३९, १८-४८
 अग्नौ १५-१२
 अग्रे १८-३७, १८-३८, १८-३९
 अघम् ३-१३
 अघायुः ३-१६
 अज्ञानि २-५८
 अचरम् १३-१५
 अचलः २-२४
 अचलप्रतिष्ठम् २-७०
 अचलम् ६-१३, १२-३
 अचला २-५३
 अचलाम् ७-२१
 अचलेन ८-१०
 अचापलम् १६-२

अचिन्त्यः २-२५
 अचिन्त्यम् १२-३
 अचिन्त्यरूपम् ८-९
 अचिरेण ४-३९
 अचेतसः ३-३२, १५-११, १७-६
 अच्छेद्यः २-२४
 अच्युत १-२१, ११-४२, १८-७३
 अजः २-२०, ४-६
 अजम् २-२१, ७-२५, १०-३, १०-१२
 अजस्रम् १६-१९
 अजानता ११-४१
 अजानन्तः ७-२४, ९-११, १३-२५
 अज्ञः ४-४०
 अज्ञानजम् १०-११, १४-८
 अज्ञानम् ५-१६, १३-११, १४-१६, १४-१७, १६-४
 अज्ञानविमोहिताः १६-१५
 अज्ञानसम्भूतम् ४-४२
 अज्ञानसम्मोहः १८-७२
 अज्ञानाम् ३-२६
 अज्ञानेन ५-१५
 अणीयांसम् ८-९
 अणोः ८-९
 अतः २-१२, ९-२४, १२-८, १३-११, १५-१८
 अतत्वार्थवत् १८-२२

अतन्द्रितः ३-२३
 अतपस्काय १८-६७
 अति ६-१६
 अतितरन्ति १३-२५
 अतिनीचम् ६-११
 अतिमानिता १६-३
 अतिरिच्यते २-३४
 अतिवर्तते ६-४४, १४-२१
 अतिस्वभशीलस्य ६-१६
 अतीतः १४-२१, १५-१८
 अतीत्य १४-२०
 अतीन्द्रियम् ६-२१
 अतीव १२-२०
 अत्यद्भुतम् १८-७७
 अत्यन्तम् ६-२८
 अत्यर्थम् ७-१७
 अत्यागिनाम् १८-१२
 अत्युच्छितम् ६-११
 अत्येति ८-२८
 अत्र १-४, १-२३, ४-१६, ८-२, ८-४, ८-५, १०-७, १८-१४
 अथ १-२०, १-२६, २-२६, २-३३, ३-३६, ११-५, ११-४०, १२-९, १२-११, १८-५८
 अथवा ६-४२, १०-४२, ११-४२
 अथो ४-३५

अदक्षिणम् १७-१३
 अदमित्वम् १३-७
 अदाह्यः २-२४
 अहष्टपूर्वम् ११-४५
 अहष्टपूर्वाणि ११-६
 अदेशकाले १७-२२
 अद्भुतम् ११-२०, १८-७४, १८-७६
 अद्य ४-३, ११-७, १६-१३
 अद्रोहः १६-३
 अद्वेष्टा १२-१३
 अधः १४-१८, १५-२
 अधःशारवम् १५-१
 अधमाम् १६-२०
 अधर्मः १-४०
 अधर्मम् १८-३१, १८-३२
 अधर्मस्य ४-७
 अधर्माभिभवात् १-४१
 अधिकः ६-४६
 अधिकतरः १२-५
 अधिकम् ६-२२
 अधिकारः २-४७
 अधिगच्छति २-६४, २-७१, ४-३९, ५-६, ५-२४,
 ६-१५, १४-१९, १८-४९
 अधिदैवतम् ८-४

अधिदैवम् ८-१
 अधिभूतम् ८-१, ८-४
 अधियज्ञः ८-२, ८-४
 अधिष्ठानम् ३-४०, १८-१४
 अधिष्ठाय ४-६, १५-९
 अध्यक्षेण ९-१०
 अध्यात्मचेतसा ३-३०
 अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम् १३-११
 अध्यात्मनित्याः १५-५
 अध्यात्मम् ७-२९, ८-१, ८-३
 अध्यात्मविद्या १०-३२
 अध्यात्मसंज्ञितम् ११-१
 अध्येष्यते १८-७०
 अध्वरम् १७-१८
 अनघ ३-३, १४-६, १५-२०
 अनन्त ११-३७
 अनन्तः १०-२९
 अनन्तबाहुम् ११-१९
 अनन्तम् ११-११, ११-४७
 अनन्तरम् १२-१२, १८-५५
 अनन्तरूप ११-३८
 अनन्तरूपम् ११-१६
 अनन्तविजयम् १-१६
 अनन्तवीर्यम् ११-१९
 अनन्तवीर्याभितविक्रमः ११-४०
 अनन्ताः २-४१

अनन्यचेता: ८-१४
 अनन्यभाक् ९-३०
 अनन्यमनसः ९-१३
 अनन्यया ८-२२, ११-५४
 अनन्ययोगेन १३-१०
 अनन्याः ९-२२
 अनन्येन १२-६
 अनपेक्षः १२-१६
 अनपेक्ष्य १८-२५
 अनभिष्वज्जः १३-९
 अनभिसन्धाय १७-२५
 अनभिस्त्रेहः २-५७
 अनयोः २-१६
 अनलः ७-४
 अनलेन ३-३९
 अनवलोकयन् ६-१३
 अनवासम् ३-२२
 अनश्वतः ६-१६
 अनसूयः १८-७१
 अनसूयन्तः ३-३१
 अनसूयवे ९-१
 अनहंवादी १८-२६
 अनहङ्कारः १३-८
 अनात्मनः ६-६

अनादित्वात् १३-३१
 अनादिमत् १३-१२
 अनादिमध्यान्तम् ११-१९
 अनादिम् १०-३
 अनादी १३-१९
 अनामयम् २-५१, १४-६
 अनारम्भात् ३-४
 अनार्यजुष्टम् २-२
 अनावृत्तिम् ८-२३, ८-२६
 अनाशिनः २-१८
 अनाश्रितः ६-१
 अनिकेतः १२-१९
 अनिच्छन् ३-३६
 अनित्यम् ९-३३
 अनित्याः २-१४
 अनियतम् १-४४
 अनिर्देश्यम् १२-३
 अनिर्विण्णचेतसा ६-२३
 अनिष्टम् १८-१२
 अनिष्टोपपत्तिषु १३-९
 अनीश्वरम् १६-८
 अनुकम्पार्थम् १०-११
 अनुचिन्तयन् ८-८
 अनुतिष्ठन्ति ३-३१, ३-३२
 अनुत्तमम् ७-२४
 अनुत्तमाम् ७-१८

अनुद्विग्नमनाः २-५६
 अनुद्वेगकरम् १७-१५
 अनुपकारिणे १७-२०
 अनुपश्यति १३-३०, १४-१९
 अनुपश्यन्ति १५-१०
 अनुपश्यामि १-३१
 अनुप्रपन्नाः ९-२१
 अनुबन्धम् १८-२५
 अनुबन्धे १८-३९
 अनुमन्ता १३-२२
 अनुरज्यते ११-३६
 अनुवर्तते ३-२१
 अनुवर्तन्ते ३-२३, ४-११
 अनुवर्तयति ३-१६
 अनुविधीयते २-६७
 अनुशासितारम् ८-९
 अनुशुश्रुम १-४४
 अनुशोचन्ति २-११
 अनुशोचितुम् २-२५
 अनुष्ज्ञते ६-४, १८-१०
 अनुसन्ततानि १५-२
 अनुस्मर ८-७
 अनुस्मरन् ८-१३
 अनुस्मरेत् ८-९

अनेकचित्तविभ्रान्ताः १६-१६
 अनेकजन्मसंसिद्धः ६-४५
 अनेकदिव्याभरणम् ११-१०
 अनेकधा ११-१३
 अनेकबाहूदरवक्रनेत्रम् ११-१६
 अनेकवक्रनयनम् ११-१०
 अनेकाद्भुतदर्शनम् ११-१०
 अनेन ३-१०, ३-११, ९-१०, ११-८
 अन्तः २-१६, १०-१९, १०-२०, १०-३२, १०-४०,
 १५-३
 अन्तःशरीरस्थम् १७-६
 अन्तःसुखः ५-२४
 अन्तःस्थानि ८-२२
 अन्तकाले २-७२, ८-५
 अन्तगतम् ७-२८
 अन्तम् ११-१६
 अन्तरम् ११-२०, १३-३४
 अन्तरात्मना ६-४७
 अन्तरारामः ५-२४
 अन्तरे ५-२७
 अन्तज्योतिः ५-२४
 अन्तवत् ७-२३
 अन्तवन्तः २-१८
 अन्तिके १३-१५
 अन्ते ७-१९, ८-६
 अन्नम् १५-१४

अन्नसम्भवः ३-१४
 अन्नात् ३-१४
 अन्यः २-२९, ४-३१, ६-३९, ८-२०, ११-४३,
 १५-१७, १६-१५, १८-६९
 अन्यगामिना ८-८
 अन्यत् २-३१, २-४२, ७-२, ७-७, ११-७, १६-८
 अन्यत्र ३-९
 अन्यथा १३-११
 अन्यदेवता: ७-२०
 अन्यदेवताभक्ताः ९-२३
 अन्यम् १४-१९
 अन्यया ८-२६
 अन्यानि २-२२
 अन्यान् ११-३४
 अन्याम् ७-५
 अन्यायेन १६-१२
 अन्ये १-९, ४-२६, ९-१५, १३-२४, १३-२५, १७-४
 अन्येन ११-४७, ११-४८
 अन्येभ्यः १३-२५
 अन्वशोचः २-११
 अन्विच्छु २-४९
 अन्विताः ९-२३, १७-१
 अपनुद्यात् २-८
 अपरम् ४-४, ६-२२

अपरस्परसम्भूतम् १६-८
 अपरा ७-५
 अपराजितः १-१७
 अपराणि २-२२
 अपरान् १६-१४
 अपरिग्रहः ६-१०
 अपरिमेयाम् १६-११
 अपरिहार्ये २-२७
 अपरे ४-२५, ४-२७, ४-२८, ४-२९, ४-३०, १३-२४, १८-३
 अपर्याप्तम् १-१०
 अपलायनम् १८-४३
 अपश्यत् १-२६, ११-१३
 अपहृतचेतसाम् २-४४
 अपहृतज्ञानाः ७-१५
 अपात्रेभ्यः १७-२२
 अपानम् ४-२९
 अपाने ४-२९
 अपावृतम् २-३२
 अपि १-२७, १-३५, १-३८, २-५, २-८, २-१६,
 २-२६, २-२९, २-३१, २-३४, २-४०, २-
 ६०, २-७२, ३-५, ३-८, ३-२०, ३-३१,
 ३-३३, ३-३६, ४-६, ४-१३, ४-१५, ४-१६,
 ४-१७, ४-२०, ४-२२, ४-३०, ४-३६, ५-
 ४, ५-५, ५-७, ५-९, ५-११, ६-९, ६-२२,
 ६-२५, ६-३१, ६-४४, ६-४६, ६-४७, ७-
 ३, ७-२३, ७-३०, ८-६, ९-१५, ९-२३,
 ९-२५, ९-२९, ९-३०, ९-३२, १०-३७,
 १०-३९, ११-२, ११-२६, ११-२९, ११-३२,

११-३४, ११-३७, ११-३९, ११-४१, ११-४२,
 ११-४३, ११-५२, १२-१, १२-१०, १२-११,
 १३-२, १३-१७, १३-१९, १३-२२, १३-२३,
 १३-२५, १३-३१, १४-२, १५-८, १५-१०,
 १५-११, १५-१८, १६-७, १६-१३, १६-१४,
 १७-७, १७-१०, १७-१२, १८-६, १८-१७,
 १८-१९, १८-४३, १८-४४, १८-४८, १८-
 ५६, १८-६०, १८-७१

अपुनरावृत्तिम् ५-१७

अपैशुनम् १६-२

अपोहनम् १५-१५

अप्यस्य २-५९

अप्रकाशः १४-१३

अप्रतिमप्रभाव ११-४३

अप्रतिष्ठः ६-३८

अप्रतिष्ठम् १६-८

अप्रतीकारम् १-४६

अप्रदाय ३-१२

अप्रमेयम् ११-१७, ११-४२

अप्रमेयस्य २-१८

अप्रवृत्तिः १४-१३

अप्राप्य ६-३७, ९-३, १६-२०

अप्रियम् ५-२०

अप्सु ७-८

अफलप्रेप्सुना १८-२३

अफलाकाङ्क्षिभिः १७-११, १७-१७

अबुद्धयः ७-२४

अब्रवीत् १-२, १-२८, ४-१

अभक्ताय १८-६७

अभयम् १०-४, १६-१

अभवत् १-१३

अभावः २-१६, १०-४

अभावयतः २-६६

अभाषत ११-१४

अभिक्रमनाशः २-४०

अभिजनवान् १६-१५

अभिजातः १६-५

अभिजातस्य १६-३, १६-४

अभिजानन्ति ९-२४

अभिजानाति ४-१४, ७-१३, ७-२५, १८-५५

अभिजायते २-६२, ६-४१, १३-२३

अभितः ५-२६

अभिधास्यति १८-६८

अभिधीयते १३-१, १७-२७, १८-११

अभिनन्दति २-५७

अभिप्रवृत्तः ४-२०

अभिभवति १-४०

अभिभूय १४-१०

अभिमानः १६-४

अभिमुखाः ११-२८

अभिरक्षन्तु १-११

अभिरतः १८-४५

अभिविज्वलन्ति ११-२८

अभिसन्धाय १७-१२

अभिहिता २-३९

अभ्यधिकः ११-४३

अभ्यनुनादयन् १-१९

अभ्यर्च्य १८-४६

अभ्यसूयकाः १६-१८

अभ्यसूयति १८-६७

अभ्यसूयन्तः ३-३२

अभ्यहन्यन्त १-१३

अभ्यासयोगयुक्तेन ८-८

अभ्यासयोगेन १२-९

अभ्यासात् १२-१२, १८-३६

अभ्यासे १२-१०

अभ्यासेन ६-३५

अभ्युत्थानम् ४-७

अमलान् १४-१४

अमानित्वम् १३-७

अमी ११-२१, ११-२६, ११-२८

अमुत्र ६-४०

अमूढाः १५-५

अमृतत्वाय २-१५

अमृतम् ९-१९, १०-१८, १३-१२, १४-२०

अमृतस्य १४-२७

अमृतोद्भवम् १०-२७

अमृतोपमम् १८-३७, १८-३८

अमेध्यम् १७-१०

अम्बुवेगाः ११-२८

अम्भसा ५-१०

अम्भसि २-६७

अयज्ञस्य ४-३१

अयतिः ६-३७

अयथावत् १८-३१

अयनेषु १-११

अयम् २-१९, २-२०, २-२४, २-२५, २-३०, २-५८, ३-१, ३-३६, ४-३, ४-४०, ६-२१, ६-३३, ७-२५, ८-१९, ११-१, १३-३१, १५-१, १७-३

अयशः १०-५

अयुक्तः ५-१२, १८-२८

अयुक्तस्य २-६६

अयोगतः ५-६

अयौ ११-२

अरतिः १३-१०

अरागद्वेषतः १८-२३

अरिसूदन २-४

अर्चितुम् ७-२१

अर्जुन २-२, २-४५, ३-७, ४-५, ४-९, ४-३७, ६-१६, ६-३२, ६-४६, ७-१६, ७-२६, ८-१६, ८-२७, ९-१९, १०-३२, १०-३९, १०-४२, ११-४७, ११-५४, १८-९, १८-३४, १८-६१

अर्जुनः १-४७
 अर्जुनम् ११-५०
 अर्थः २-४६, ३-१८
 अर्थकामान् २-५
 अर्थम् ३-९
 अर्थव्यपाश्रयः ३-१८
 अर्थसञ्चयान् १६-१२
 अर्थार्थी ७-१६
 अर्थे १-३३, २-२७, ३-३४
 अर्पितमनोबुद्धिः ८-७, १२-१४
 अर्यमा १०-२९
 अर्हति २-१७
 अर्हसि २-२५, २-२७, २-३०, २-३१, ३-२०, ६-३९, १०-१६, ११-४४, १६-२४
 अर्हाः १-३७
 अलसः १८-२८
 अलोलुस्वम् १६-२
 अल्पबुद्धयः १६-९
 अल्पमेधसाम् ७-२३
 अल्पम् १८-२२
 अवगच्छ १०-४१
 अवजानन्ति ९-११
 अवज्ञातम् १७-२२
 अवतिष्ठति १४-२३

अवतिष्ठते ६-१८
 अवध्यः २-३०
 अवनिपालसङ्घैः ११-२६
 अवरम् २-४९
 अवशः ३-५, ६-४४, ८-१९, १८-६०
 अवशम् ९-८
 अवशिष्यते ७-२
 अवष्टम्य ९-८, १६-९
 अवसादयेत् ६-५
 अवस्थातुम् १-३०
 अवस्थितः ९-४
 अवस्थितम् १५-११
 अवस्थिता १-३३
 अवस्थिताः १-११, २-६, ११-३२
 अवस्थितान् १-२२, १-२७
 अवहासार्थम् ११-४२
 अवाच्यवादान् २-३६
 अवासव्यम् ३-२२
 अवासुम् ६-३६
 अवामोति १५-८, १६-२३, १८-५६
 अवाप्य २-८
 अवाप्यते १२-५
 अवाप्स्यथ ३-११
 अवाप्स्यसि २-३३, २-३८, २-५३, १२-१०
 अविकम्पेन १०-७
 अविकार्यः २-२५

अविज्ञेयम् १३-१५
 अविद्वांसः ३-२५
 अविधिपूर्वकम् ९-२३, १६-१७
 अविनश्यन्तम् १३-२७
 अविनाशि २-१७
 अविनाशिनम् २-२१
 अविपश्चितः २-४२
 अविभक्तम् १३-१६, १८-२०
 अवेक्षे १-२३
 अवेक्ष्य २-३१
 अव्यक्तः २-२५, ८-२०, ८-२१
 अव्यक्तनिधनानि २-२८
 अव्यक्तमूर्तिना ९-४
 अव्यक्तम् ७-२४, १२-१, १२-३, १३-५
 अव्यक्तसंज्ञके ८-१८
 अव्यक्ता १२-५
 अव्यक्तात् ८-१८, ८-२०
 अव्यक्तादीनि २-२८
 अव्यक्तासक्तचेतसाम् १२-५
 अव्यभिचारिणी १३-१०
 अव्यभिचारिण्या १८-३३
 अव्यभिचारेण १४-२६
 अव्ययः ११-१८, १३-३१, १५-१७

अव्ययम् २-२१, ४-१, ४-१३, ७-१३, ७-२४, ७-२५, ९-२, ९-१३, ९-१८, ११-२, ११-४, १४-५, १५-१, १५-५, १८-२०, १८-५६
 अव्ययस्य २-१७, १४-२७
 अव्ययात्मा ४-६
 अव्ययाम् २-३४
 अव्यवसायिनाम् २-४१
 अशक्तः १२-११
 अशमः १४-१२
 अशस्त्रम् १-४६
 अशान्तस्य २-६६
 अशाश्वतम् ८-१५
 अशास्त्रविहितम् १७-५
 अशुचिः १८-२७
 अशुचिव्रताः १६-१०
 अशुचौ १६-१६
 अशुभात् ४-१६, ९-१
 अशुभान् १६-१९
 अशुशूष्वे १८-६७
 अशोषतः ६-२४, ६-३९, ७-२, १८-११
 अशोषेण ४-३५, १०-१६, १८-२९, १८-६३
 अशोच्यान् २-११
 अशोष्यः २-२४
 अश्वतः ६-१६
 अश्वन् ५-८

अश्वन्ति ९-२०
 अश्वामि ९-२६
 अश्वासि ९-२७
 अश्वुते ३-४, ५-२१, ६-२८, १३-१२, १४-२०
 अश्रद्धानः ४-४०
 अश्रद्धानाः ९-३
 अश्रद्धया १७-२८
 अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् २-१
 अश्रौषम् १८-७४
 अश्वत्थः १०-२६
 अश्वत्थम् १५-१, १५-३
 अश्वत्थामा १-८
 अश्वानाम् १०-२७
 अश्विनौ ११-६, ११-२२
 अष्टधा ७-४
 असंयतात्मना ६-३६
 असंशयः ८-७, १८-६८
 असंशयम् ६-३५, ७-१
 असक्तः ३-७, ३-१९, ३-२५
 असक्तबुद्धिः १८-४९
 असक्तम् ९-१, १३-१४
 असक्तात्मा ५-२१
 असक्तिः १३-९
 असङ्गशस्त्रेण १५-३

असतः २-१६
 असत् ९-१९, ११-३७, ११-४२, १३-१२, १६-१०, १७-२८
 असत्कृतम् १७-२२
 असत्यम् १६-८
 असन्ध्यस्तसङ्कल्पः ६-२
 असपत्नम् २-८
 असमर्थः १२-१०
 असमूढः ५-२०, १०-३, १५-१९
 असमोहः १०-४
 असि ४-३, ४-३६, ८-२, १०-१७, ११-३८, ११-४०, ११-४२, ११-४३, ११-५२, ११-५३, १२-१०, १२-११, १६-५, १८-६४, १८-६५
 असितः १०-१३
 असिद्धौ ४-२२
 असुखम् ९-३३
 असृष्टान्नम् १७-१३
 असौ ११-२६, १६-१४
 अस्ति २-४०, २-४२, २-६६, ३-२२, ४-३१, ४-४०, ६-१६, ७-७, ८-५, ९-२९, १०-१८, १०-१९, १०-३९, १०-४०, ११-४३, १६-१३, १६-१५, १८-४०
 अस्तु २-४७, ३-१०, ११-३१, ११-३९, ११-४०
 अस्थिरम् ६-२६
 अस्मदीयैः ११-२६
 अस्माकम् १-७, १-१०

अस्मान् १-३६, १-३९

अस्माभिः १-३९

अस्मि ७-८, ७-९, ७-१०, ७-११, १०-२१, १०-२२, १०-२३, १०-२४, १०-२५, १०-२८, १०-२९, १०-३०, १०-३१, १०-३३, १०-३६, १०-३७, १०-३८, ११-३२, ११-४५, ११-५१, १५-१८, १६-१५, १८-५५, १८-७३

अस्मिन् १-२२, २-१३, ३-३, ८-२, १३-२२, १४-११, १६-६

अस्य २-१७, २-४०, २-६५, २-६७, ३-१८, ३-३४, ३-४०, ६-३९, ९-३, ९-१७, ११-१८, ११-३८, ११-४३, ११-५२, १३-२१, १५-३

अस्याम् २-७२

अस्वर्गम् २-२

अहः ८-१७, ८-२४

अहङ्कारः ७-४, १३-५

अहङ्कारम् १६-१८, १८-५३, १८-५९

अहङ्कारविमूढात्मा ३-२७

अहङ्कारात् १८-५८

अहङ्कृतः १८-१७

अहत्वा २-५

अहम् १-२२, १-२३, २-४, २-७, २-१२, ३-२, ३-२३, ३-२४, ३-२७, ४-१, ४-५, ४-७, ४-११, ६-३०, ६-३३, ६-३४, ७-२, ७-६, ७-८, ७-१०, ७-११, ७-१२, ७-१७, ७-२१, ७-२५, ७-२६, ८-४, ८-१४, ९-४, ९-७, ९-१६, ९-१७, ९-१९, ९-२२, ९-२४, ९-२६, ९-२९, १०-१, १०-२, १०-८, १०-११, १०-१७, १०-२०, १०-२१, १०-२३, १०-२४, १०-२५, १०-२८, १०-२९,

१०-३०, १०-३१, १०-३२, १०-३३, १०-३४, १०-३५, १०-३६, १०-३७, १०-३८, १०-३९, १०-४२, ११-२३, ११-४२, ११-४४, ११-४६, ११-४८, ११-५३, ११-५४, १२-७, १४-३, १४-४, १४-२७, १५-१३, १५-१४, १५-१५, १५-१८, १६-१४, १६-१९, १८-६६, १८-७०, १८-७४, १८-७५

अहरागमे ८-१८, ८-१९

अहिंसा १०-५, १३-७, १६-२, १७-१४

अहिताः २-३६, १६-९

अहैतुकम् १८-२२

अहो १-४५

अहोरात्रविदः ८-१७

आ

आकाशम् १३-३२

आकाशस्थितः ९-६

आख्यातम् १८-६३

आख्याहि ११-३१

आगच्छेत् ३-३४

आगताः ४-१०, १४-२

आगमापायिनः २-१४

आचरतः ४-२३

आचरति ३-२१, १६-२२

आचरन् ३-१९

आचारः १४-२१, १६-७

आचार्य १-३

आचार्यम् १-२
 आचार्या: १-३४
 आचार्यान् १-२६
 आचार्योपासनम् १३-७
 आज्यम् ९-१६
 आढ्यः १६-१५
 आततायिनः १-३६
 आतिष्ठ ४-४२
 आत्थ ११-३
 आत्मकारणात् ३-१३
 आत्मतृसः ३-१७
 आत्मनः ४-४२, ५-१६, ६-५, ६-६, ६-११, ६-१९, ८-१२, १०-१८, १६-२१, १६-२२, १७-१९, १८-३९
 आत्मना २-५५, ३-४३, ६-५, ६-६, ६-२०, १०-१५, १३-२४, १३-२८
 आत्मनि २-५५, ३-१७, ४-३५, ४-३८, ५-२१, ६-१८, ६-२०, ६-२६, ६-२९, १३-२४, १५-११
 आत्मपरदेहेषु १६-१८
 आत्मबुद्धिप्रसादजम् १८-३७
 आत्मभावस्थः १०-११
 आत्ममायया ४-६
 आत्मयोगात् ११-४७
 आत्मरतिः ३-१७
 आत्मवन्तम् ४-४१

आत्मवश्यैः २-६४
 आत्मवान् २-४५
 आत्मविनिग्रहः १३-७, १७-१६
 आत्मविभूतयः १०-१६, १०-१९
 आत्मविशुद्धये ६-१२
 आत्मशुद्धये ५-११
 आत्मसंयमयोगाग्नौ ४-२७
 आत्मसंस्थम् ६-२५
 आत्मसम्भाविताः १६-१७
 आत्मा ६-५, ६-६, ७-१८, ९-५, १०-२०, १३-३२
 आत्मानः ५-१७
 आत्मानम् ३-४३, ४-७, ६-५, ६-१०, ६-१५, ६-२०, ६-२८, ६-२९, ९-३४, १०-१५, ११-३, ११-४, १३-२४, १३-२८, १३-२९, १८-१६, १८-५१
 आत्मौपम्येन ६-३२
 आत्यन्तिकम् ६-२१
 आदत्ते ५-१५
 आदर्शः ३-३८
 आदिः १०-२, १०-२०, १०-३२, १५-३
 आदिकर्त्रे ११-३७
 आदित्यगतम् १५-१२
 आदित्यवत् ५-१६
 आदित्यवर्णम् ८-९
 आदित्यानाम् १०-२१
 आदित्यान् ११-६

आदिदेवः ११-३८
 आदिदेवम् १०-१२
 आदिम् ११-१६
 आदौ ३-४१, ४-४
 आद्यन्तवन्तः ५-२२
 आद्यम् ८-२८, ११-३१, ११-४७, १५-४
 आधत्स्व १२-८
 आधाय ५-१०, ८-१२
 आधिपत्यम् २-८
 आपः २-२३, २-७०, ७-४
 आपन्नम् ७-२४
 आपन्नाः १६-२०
 आपूर्य ११-३०
 आपूर्यमाणम् २-७०
 आसुम् ५-६, १२-९
 आमुयाम् ३-२
 आमुवन्ति ८-१५
 आमोति २-७०, ३-१९, ४-२१, ५-१२, १८-४७,
 १८-५०
 आब्रह्मभुवनात् ८-१६
 आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः १७-८
 आयुधानाम् १०-२८
 आरभते ३-७
 आरम्भते १८-२५

आरम्भः १४-१२
 आरुरुक्षोः ६-३
 आर्जवम् १३-७, १६-१, १७-१४, १८-४२
 आर्तः ७-१६
 आवयोः १८-७०
 आवर्तते ८-२६
 आविश्य १५-१३, १५-१७
 आविष्टः १-२८
 आविष्टम् २-१
 आवृतः ३-३८
 आवृतम् ३-३८, ३-३९, ५-१५
 आवृता १८-३२
 आवृताः १८-४८
 आवृत्तिम् ८-२३
 आवृत्य ३-४०, १३-१३, १४-९
 आवेशितचेतसाम् १२-७
 आवेश्य ८-१०, १२-२
 आव्रियते ३-३८
 आशयात् १५-८
 आशापाशशतैः १६-१२
 आशु २-६५
 आश्वर्यवत् २-२९
 आश्वर्याणि ११-६
 आश्रयेत् १-३६
 आश्रितः १२-११, १५-१४
 आश्रितम् ९-११

आश्रिताः ७-१५, ९-१३
 आश्रित्य ७-२९, १६-१०, १८-५९
 आश्वासयामास ११-५०
 आसक्तमनाः ७-१
 आसनम् ६-११
 आसने ६-१२
 आसम् २-१२
 आसाद्य ९-२०
 आसीत् २-५४, २-६१, ६-१४
 आसीनः १४-२३
 आसीनम् ९-९
 आसुरः १६-६
 आसुरनिश्चयान् १७-६
 आसुरम् ७-१५, १६-६
 आसुराः १६-७
 आसुरी १६-५
 आसुरीम् ९-१२, १६-४, १६-२०
 आसुरीषु १६-१९
 आस्तिक्यम् १८-४२
 आस्ते ३-६, ५-१३
 आस्थाय ७-२०
 आस्थितः ५-४, ६-३१, ७-१८, ८-१२
 आस्थिताः ३-२०
 आह १-२१, ११-३५

आहवे १-३१
 आहारः १७-७
 आहाराः १७-८, १७-९
 आहुः ३-४२, ४-१९, ८-२१, १०-१३, १४-१६,
 १६-८
 आहो १७-१
 इ
 इक्ष्वाकवे ४-१
 इज्जते ६-१९, १४-२३
 इच्छा १२-९
 इच्छति ७-२१
 इच्छन्तः ८-११
 इच्छसि ११-७, १८-६०, १८-६३
 इच्छा १३-६
 इच्छाद्वेषसमुत्थेन ७-२७
 इच्छामि १-३५, ११-३, ११-३१, ११-४६, १८-१
 इज्यते १७-११, १७-१२
 इज्यया ११-५३
 इतः ७-५, १४-१
 इतरः ३-२१

इति १-२५, १-४४, २-९, २-४२, ३-२७, ३-२८, ४-३, ४-४, ४-१४, ४-१६, ५-८, ५-९, ६-२, ६-८, ६-१८, ६-३६, ७-४, ७-६, ७-१२, ७-१९, ८-१३, ८-२१, ९-६, १०-८, ११-४, ११-२१, ११-४१, ११-५०, १३-१, १३-११, १३-१८, १३-२२, १४-५, १४-११, १४-२३, १५-१७, १५-२०, १६-११, १६-१५, १७-२, १७-११, १७-१६, १७-२०, १७-२३, १७-२४, १७-२५, १७-२६, १७-२७, १७-२८, १८-३, १८-६, १८-८, १८-९, १८-११, १८-१८, १८-३२, १८-५९, १८-६३, १८-६४, १८-७०, १८-७४

इदम् १-१०, १-२१, १-२८, २-१, २-२, २-१०, २-१७, ३-३१, ३-३८, ७-२, ७-५, ७-७, ७-१३, ८-२२, ८-२८, ९-१, ९-२, ९-४, १०-४२, ११-१९, ११-२०, ११-४१, ११-४७, ११-४९, ११-५१, ११-५२, १२-२०, १३-१, १४-२, १५-२०, १६-१३, १६-२१, १८-४६, १८-६७, १८-६८

इदानीम् ११-५१, १८-३६

इन्द्रियकर्माणि ४-२७

इन्द्रियगोचरा: १३-५

इन्द्रियग्रामम् ६-२४, १२-४

इन्द्रियस्य ३-३४

इन्द्रियाग्निषु ४-२६

इन्द्रियाणाम् २-८, २-६७, १०-२२

इन्द्रियाणि २-५८, २-६०, २-६१, २-६८, ३-७, ३-४०, ३-४१, ३-४२, ४-२६, ५-९, १३-५

इन्द्रियारामः ३-१६

इन्द्रियार्थन् ३-६

इन्द्रियार्थम्यः २-५८, २-६८

इन्द्रियार्थेषु ५-९, ६-४, १३-८

इन्द्रियेभ्यः ३-४२

इन्द्रियैः २-६४, ५-११

इमम् १-२८, २-३३, ४-१, ४-२, ९-८, ९-३३, १३-३३, १६-१३, १७-७, १८-७०, १८-७४, १८-७६

इमाः ३-२४, १०-६

इमान् १०-१६, १८-१७

इमाम् २-३९, २-४२

इमे १-३३, २-१२, २-१८, ३-२४

इमौ १५-१६

इयम् ७-४, ७-५

इव १-३०, २-१०, २-५८, २-६७, ३-२, ३-३६, ५-१०, ६-३४, ६-३८, ७-७, ११-४४, १३-१६, १५-८, १८-३७, १८-३८, १८-४८

इषुभिः २-४

इष्ट १३-९

इष्टः १८-६४, १८-७०

इष्टकामधुक् ३-१०

इष्टम् १८-१२

इष्टाः १७-९

इष्टान् ३-१२

इष्टा ९-२०

इह २-५, २-४०, २-४१, २-५०, ३-१६, ३-१८, ३-३७, ४-२, ४-१२, ४-३८, ५-१९, ५-२३, ६-४०, ७-२, ११-७, ११-३२, १५-३, १६-२४, १७-१८, १७-२८

इ

ईक्षते ६-२९, १८-२०

ईड्यम् ११-४४

ईद्वक् ११-४९

ईद्वशम् २-३२, ६-४२

ईशम् ११-१५, ११-४४

ईश्वरः ४-६, १५-८, १५-१७, १६-१४, १८-६१

ईश्वरभावः १८-४३

ईश्वरम् १३-२८

ईहते ७-२२

ईहन्ते १६-१२

उ

उक्तः १-२४, ८-२१, १३-२२

उक्तम् ११-१, ११-४१, १२-२०, १३-१८, १५-२०

उक्ताः २-१८

उत्तवा १-४७, २-९, ११-९, ११-२१, ११-५०

उग्रकर्मणः १६-९

उग्रम् ११-२०

उग्राः ११-३०

उग्रैः ११-४८

उच्चैः १-१२

उच्चैःश्रवसम् १०-२७

उच्छिष्टम् १७-१०

उच्छोषणम् २-८

उच्यते २-२५, २-४८, २-५५, २-५६, ३-६, ३-४०, ६-३, ६-४, ६-८, ६-१८, ८-१, ८-३, १३-१२, १३-१७, १३-२०, १४-२५, १५-१६, १७-१४, १७-१५, १७-१६, १७-२७, १७-२८, १८-२३, १८-२५, १८-२६, १८-२८

उत १-४०, १४-९, १४-११

उत्कामति १५-८

उत्कामन्तम् १५-१०

उत्तमः १५-१७, १५-१८

उत्तमम् ४-३, ६-२७, ९-२, १४-१, १८-६

उत्तमविदाम् १४-१४

उत्तमाङ्गैः ११-२७

उत्तमौजाः १-६

उत्तरायणम् ८-२४

उत्तिष्ठ २-३, २-३७, ४-४२, ११-३३

उत्थिता ११-१२

उत्सन्नकुलधर्माणाम् १-४४

उत्सादनार्थम् १७-१९

उत्साधन्ते १-४३

उत्सीदेयुः ३-२४

उत्सृजामि ९-१९

उत्सृज्य १६-२३, १७-१

उदपाने २-४६

उदाराः ७-१८

उदासीनः १२-१६

| | |
|--|--------------------------------------|
| उदासीनवत् ९-९, १४-२३ | उपरमते ६-२० |
| उदाहृतः १५-१७ | उपरमेत् ६-२५ |
| उदाहृतम् १३-६, १७-१९, १७-२२, १८-२२, १८-२४, १८-३९ | उपलभ्यते १५-३ |
| उदाहृत्य १७-२४ | उपलिप्यते १३-३२ |
| उद्दिश्य १७-२१ | उपविश्य ६-१२ |
| उद्देशतः १०-४० | उपसङ्गम्य १-२ |
| उद्धरेत् ६-५ | उपसेवते १५-९ |
| उद्धवः १०-३४ | उपहन्याम् ३-२४ |
| उद्यताः १-४५ | उपायतः ६-३६ |
| उद्यम्य १-२० | उपाविशत् १-४७ |
| उद्विजते १२-१५ | उपाश्रिताः ४-१०, १६-११ |
| उद्विजेत् ५-२० | उपाश्रित्य १४-२, १८-५७ |
| उन्मिषन् ५-९ | उपासते ९-१४, ९-१५, १२-२, १२-६, १३-२५ |
| उपजायते २-६२, २-६५, १४-११ | उपेतः ६-३७ |
| उपजायन्ते १४-२ | उपेताः १२-२ |
| उपजुहृति ४-२५ | उपेत्य ८-१५, ८-१६ |
| उपदेक्ष्यन्ति ४-३४ | उपैति ६-२७, ८-१०, ८-२८ |
| उपद्रष्टा १३-२२ | उपैष्यसि ९-२८ |
| उपधारय ७-६, ९-६ | उभयविभ्रष्टः ६-३८ |
| उपपद्मते २-३, ६-३९, १३-१८, १८-७ | उभयोः १-२१, १-२७, २-१०, २-१६, ५-४ |
| उपपन्नम् २-३२ | उभयोर्मध्ये १-२४ |
| उपमा ६-१९ | उभे २-५० |
| उपयान्ति १०-१० | उभौ २-१९, ५-२, १३-१९ |
| उपरतम् २-३५ | उरगान् ११-१५ |
| | उल्लेन ३-३८ |

उवाच १-२५, २-१, २-१०, ३-१०

उशना १०-३७

उषित्वा ६-४१

उष्मपा: ११-२२

ऊ

ऊर्जितम् १०-४१

ऊर्ध्वमूलम् १५-१

ऊर्ध्वम् १२-८, १४-१८, १५-२

ऋ

ऋक् ९-१७

ऋच्छति २-७२, ५-२९

ऋतम् १०-१४

ऋतूनाम् १०-३५

ऋते ११-३२

ऋद्धम् २-८

ऋषयः ५-२५, १०-१३

ऋषिभिः १३-४

ऋषीन् ११-१५

ए

एक २-४१

एकः ११-४२, १३-३३

एकत्वम् ६-३१

एकत्वेन ९-१५

एकभक्तिः ७-१७

एकम् ३-२, ५-१, ५-४, ५-५, १०-२५, १८-२०,
१८-६६

एकया ८-२६

एकस्थम् ११-७, ११-१३, १३-३०

एकस्मिन् १८-२२

एकांशोन १०-४२

एकाकी ६-१०

एकाक्षरम् ८-१३

एकाग्रम् ६-१२

एकाग्रेण १८-७२

एकान्तम् ६-१६

एकान्तिकस्य १४-२७

एके १८-३

एकेन ११-२०

एतत् २-३, २-६, ३-३२, ४-३, ४-४, ६-२६, ६-
३९, ६-४२, ७-६, १०-१४, ११-३, ११-३५,
१२-११, १३-१, १३-६, १३-११, १३-१८, १५-
२०, १६-२१, १७-१६, १७-२६, १८-६३,
१८-७२, १८-७५

एतयोः ५-१

एतस्य ६-३३

एतानि १४-१२, १४-१३, १५-८, १८-६, १८-१३

एतान् १-२२, १-२५, १-३५, १-३६, १४-२०, १४-
२१, १४-२६

एताम् १-३, ७-१४, १०-७, १६-९

एतावत् १६-११

एति ४-९, ८-६, ११-५५

एते १-२३, १-३८, २-१५, ४-३०, ७-१८, ८-२६, ८-२७, ११-३३, १८-१५

एतेन ३-३९, १०-४२

एतेषाम् १-१०

एतैः १-४३, ३-४०, १६-२२

एधांसि ४-३७

एनम् २-१९, २-२१, २-२३, २-२५, २-२६, २-२९, ३-३७, ३-४१, ४-४२, ६-२७, ११-५०, १५-३, १५-११

एनाम् २-७२

एभिः ७-१३, १८-४०

एभ्यः ३-१२, ७-१३

एव १-१, १-६, १-८, १-११, १-१३, १-१४, १-१९, १-२७, १-३०, १-३४, १-३६, १-४२, २-५, २-६, २-१२, २-२४, २-२८, २-२९, २-४७, २-५५, ३-४, ३-१२, ३-१७, ३-१८, ३-२०, ३-२१, ३-२२, ४-३, ४-११, ४-१५, ४-२०, ४-२४, ४-२५, ४-३६, ५-८, ५-१३, ५-१५, ५-१८, ५-१९, ५-२२, ५-२३, ५-२४, ५-२७, ५-२८, ६-३, ६-५, ६-६, ६-१६, ६-१८, ६-२०, ६-२१, ६-२४, ६-२६, ६-४०, ६-४२, ६-४४, ७-४, ७-१२, ७-१४, ७-१८, ७-२१, ७-२२, ८-४, ८-५, ८-६, ८-७, ८-१०, ८-१८, ८-१९, ८-२३, ८-२८, ९-१२, ९-१६, ९-१७, ९-१९, ९-२३, ९-२४, ९-३०, ९-३४, १०-१, १०-४, १०-५, १०-११, १०-१३, १०-१५, १०-२०, १०-३२, १०-३३, १०-३८, १०-४१, ११-८,

११-२२, ११-२५, ११-२६, ११-२८, ११-२९, ११-३३, ११-३५, ११-४०, ११-४५, ११-४६, ११-४९, १२-४, १२-६, १२-८, १२-९३, १३-४, १३-५, १३-८, १३-१४, १३-१५, १३-१९, १३-२५, १३-२९, १३-३०, १४-१०, १४-१३, १४-१७, १४-२२, १४-२३, १५-४, १५-७, १५-९, १५-१५, १५-१६, १६-४, १६-६, १६-१९, १६-२०, १७-२, १७-३, १७-६, १७-११, १७-१२, १७-१५, १७-१८, १७-२७, १८-५, १८-८, १८-९, १८-१४, १८-१९, १८-२९, १८-३१, १८-३५, १८-४२, १८-५०, १८-६२, १८-६५, १८-६८

एवम् १-२४, १-४७, २-९, २-२५, २-२६, २-३८, ३-१६, ३-४३, ४-२, ४-९, ४-१५, ४-३२, ४-३५, ६-१५, ६-२८, ९-२१, ९-२८, ९-३४, ११-३, ११-९, ११-४८, ११-५३, ११-५४, १२-१, १३-२३, १३-२५, १३-३४, १५-१९, १८-१६

एषः ३-१०, ३-३७, ३-४०, १०-४०, १८-५९

एषा २-३९, २-७२, ७-१४

एषाम् १-४२

एष्यति १८-६८

एष्यसि ८-७, ९-३४, १८-६५

ऐ

ऐरावतम् १०-२७

ऐश्वरम् ९-५, ११-३, ११-८, ११-९

ओ

ओङ्कारः ९-१७

ओजसा १५-१३

ओम् ८-१३, १७-२३, १७-२४

ओषधीः १५-१३

औ

औषधम् ९-१६

क

कः ८-२, १६-१५

कच्चित् ६-३८, १८-७२

कद्वस्तुलवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः १७-९

कतरत् २-६

कथम् १-३७, १-३९, २-४, २-२१, ४-४, ८-२,
१०-१७, १४-२१

कथय १०-१८

कथयतः १८-७५

कथयन्तः १०-९

कथयिष्यन्ति २-३४

कथयिष्यामि १०-१९

कदाचन २-४७, १८-६७

कदाचित् २-२०

कन्दर्पः १०-२८

कपिध्वजः १-२०

कपिलः १०-२६

कमलपत्राक्ष ११-२

कमलासनस्थम् ११-१५

कम् २-२१

करणम् १८-१४, १८-१८

करिष्यति ३-३३

करिष्यसि २-३३, १८-६०

करिष्ये १८-७३

करुणः १२-१३

करोति ४-२०, ५-१०, ६-१, १३-२१

करोमि ५-८

करोषि ९-२७

कर्णः १-८

कर्णम् ११-३४

कर्तव्यम् ३-२२

कर्तव्यानि १८-६

कर्ता ३-२४, ३-२७, १८-१४, १८-१८, १८-१९,
१८-२६, १८-२७, १८-२८

कर्तारम् ४-१३, १४-१९, १८-१६

कर्तुम् १-४५, २-१७, ३-२०, ९-२, १२-११, १६-
२४, १८-६०

कर्तृत्वम् ५-१४

कर्म २-४९, ३-५, ३-८, ३-९, ३-१५, ३-१९, ३-
२४, ४-१, ४-१५, ४-१६, ४-१८, ४-२१,
४-२३, ५-११, ६-१, ६-३, ७-२९, ८-१,
१६-२४, १७-२७, १८-३, १८-८, १८-१,

१८-१०, १८-१५, १८-१८, १८-१९, १८-
 २३, १८-२४, १८-२५, १८-४३, १८-४४,
 १८-४७, १८-४८
कर्मचोदना १८-१८
कर्मजम् २-५१
कर्मजा ४-१२
कर्मजान् ४-३२
कर्मणः ३-१, ३-९, ४-१७, १४-१६, १८-७, १८-
 १२
कर्मणा ३-२०, १८-६०
कर्मणाम् ३-४, ४-१२, ५-१, १४-१२, १८-२
कर्मणि २-४७, ३-१, ३-२२, ३-२३, ३-२५, ४-
 १८, ४-२०, १४-९, १७-२६, १८-४५
कर्मफलत्यागः १२-१२
कर्मफलत्यागी १८-११
कर्मफलप्रेप्सुः १८-२७
कर्मफलम् ५-१२, ६-१
कर्मफलसंयोगम् ५-१४
कर्मफलहेतुः २-४७
कर्मफलासङ्गम् ४-२०
कर्मफले ४-१४
कर्मबन्धनः ३-९
कर्मबन्धनैः ९-२८
कर्मबन्धम् २-३९
कर्मभिः ३-३१, ४-१४
कर्मयोगः ५-२

कर्मयोगम् ३-७
कर्मयोगेन ३-३, १३-२४
कर्मसंज्ञितः ८-३
कर्मसङ्गिनाम् ३-२६
कर्मसङ्गिषु १४-१५
कर्मसङ्गेन १४-७
कर्मसङ्ग्रहः १८-१८
कर्मसञ्च्यासात् ५-२
कर्मसमुद्भवः ३-१४
कर्मसु २-५०, ६-४, ६-१७, ९-९
कर्माखिलम् ४-३३
कर्माणि २-४८, ३-२७, ३-३०, ४-१४, ४-४१, ५-
 १०, ५-१४, ९-९, १२-६, १२-१०, १३-२९,
 १८-६, १८-११, १८-४१
कर्मानुबन्धीनि १५-२
कर्मिभ्यः ६-४६
कर्मेन्द्रियाणि ३-६
कर्मेन्द्रियैः ३-७
कर्षति १५-७
कर्षयन्तः १७-६
कल्ययताम् १०-३०
कलेवरम् ८-५, ८-६
कल्पक्षये ९-७
कल्पते २-१५, १४-२६, १८-५३
कल्पादौ ९-७
कल्याणकृत् ६-४०

कवयः ४-१६, १८-२
 कवि: १०-३७
 कविम् ८-९
 कवीनाम् १०-३७
 कश्चन ३-१८, ६-२, ७-२६, ८-२७
 कश्चित् २-१७, २-२९, ३-५, ३-१८, ६-४०, ७-३,
 १८-६९
 कश्मलम् २-२
 कस्मात् ११-३७
 कस्यचित् ५-१५
 का १-३६, २-२८, २-५४, १७-१
 काङ्क्षति ५-३, १२-१७, १४-२२, १८-५४
 काङ्क्षन्तः ४-१२
 काङ्क्षितम् १-३३
 काङ्क्षे १-३२
 कामः २-६२, ३-३७, ७-११, १६-२१
 कामकामा: ९-२१
 कामकामी २-७०
 कामकारतः १६-२३
 कामकारेण ५-१२
 कामक्रोधपरायणा: १६-१२
 कामक्रोधवियुक्तानाम् ५-२६
 कामक्रोधोद्भवम् ५-२३
 कामधुक् १०-२८
 कामभोगार्थम् १६-१२

कामभोगेषु १६-१६
 कामम् १६-१०, १६-१८, १८-५३
 कामरागबलान्विताः १७-५
 कामरागविवर्जितम् ७-११
 कामरूपम् ३-४३
 कामरूपेण ३-३९
 कामसङ्कल्पवर्जिताः ४-१९
 कामहैतुकम् १६-८
 कामाः २-७०
 कामात् २-६२
 कामात्मानः २-४३
 कामान् २-५५, २-७१, ६-२४, ७-२२
 कामेषुना १८-२४
 कामैः ७-२०
 कामोपभोगपरमाः १६-११
 काम् ६-३७
 काम्यानाम् १८-२
 कायक्लेशभयात् १८-८
 कायम् ११-४४
 कायशिरोग्रीवम् ६-१३
 कायेन ५-११
 कारणम् ६-३, १३-२१
 कारणानि १८-१३
 कारयन् ५-१३
 कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः २-७

कार्यकारणकर्तृत्वे १३-२०
 कार्यते ३-५
 कार्यम् ३-१७, ३-१९, ६-१, १८-५, १८-९, १८-३१
 कार्याकार्यव्यवस्थितौ १६-२४
 कार्याकार्ये १८-३०
 कार्ये १८-२२
 कालः १०-३०, १०-३३, ११-३२
 कालम् ८-२३
 कालानलसन्निभानि ११-२५
 काले ८-२३, १७-२०
 कालेन ४-२, ४-३८
 कालेषु ८-७, ८-२७
 काशिराजः १-५
 काश्यः १-१७
 किञ्चन ३-२२
 किञ्चित् ४-२०, ५-८, ६-२५, ७-७, १३-२६
 किम् १-१, १-३२, १-३५, २-३६, २-५४, ३-१, ३-३३, ४-१६, ८-१, ९-३३, १०-४२, १४-२१, १६-८
 किरीटिनम् ११-१७, ११-४६
 किरीटी ११-३५
 किल्बिषम् ४-२१, १८-४७
 कीर्तयन्तः ९-१४
 कीर्तिः १०-३४

कीर्तिम् २-३३
 क्रुतः २-२, २-६६, ४-३१, ११-४३
 कुन्तिभोजः १-५
 कुन्तीपुत्रः १-१६
 कुरु २-४८, ३-८, ४-१५, १२-११, १८-६३
 कुरुक्षेत्रे १-१
 कुरुते ३-२१, ४-३७
 कुरुनन्दन २-४१, ६-४३, १४-१३
 कुरुप्रवीर ११-४८
 कुरुवृद्धः १-१२
 कुरुश्रेष्ठ १०-१९
 कुरुष्व ९-२७
 कुरुसत्तम ४-३१
 कुरून् १-२५
 कुर्यात् ३-२५
 कुर्याम् ३-२४
 कुर्वन् ४-२१, ५-७, ५-१३, १२-१०, १८-४७
 कुर्वन्ति ३-२५, ५-११
 कुर्वाणः १८-५६
 कुलक्षयकृतम् १-३८, १-३९
 कुलक्षये १-४०
 कुलध्नानाम् १-४२, १-४३
 कुलधर्माः १-४०, १-४३
 कुलम् १-४०
 कुलस्त्रियः १-४१
 कुलस्य १-४२

| | |
|--|--|
| कुले ६-४२ | कृष्ण १-२८, १-३२, १-४१, ५-१, ६-३४, ६-३७, ६-३९, ११-४१, १७-१ |
| कुशले १८-१० | कृष्णः ८-२५, १८-७८ |
| कुसुमाकरः १०-३५ | कृष्णम् ११-३५ |
| कूटस्थः ६-८, १५-१६ | कृष्णात् १८-७५ |
| कूटस्थम् १२-३ | के १२-१ |
| कूर्मः २-५८ | केचित् ११-२१, ११-२७, १३-२४ |
| कृतः ११-४२ | केन ३-३६ |
| कृतकृत्यः १५-२० | केनचित् १२-१९ |
| कृतनिश्चयः २-३७ | केवलम् ४-२१, १८-१६ |
| कृतम् ४-१५, १७-२८, १८-२३ | केवलैः ५-११ |
| कृताञ्जलिः ११-१४, ११-३५ | केशव १-३१, २-५४, ३-१, १०-१४ |
| कृतान्ते १८-१३ | केशवस्य ११-३५ |
| कृतेन ३-१८ | केशवार्जुनयोः १८-७६ |
| कृत्वा २-३८, ४-२२, ५-२७, ६-१२, ६-२५, १८-८, १८-६८ | केशनिषूदन १८-१ |
| कृत्त्वकर्मकृत् ४-१८ | केषु १०-१७ |
| कृत्त्वम् १-४०, ७-२९, ९-८, १०-४२, ११-७, ११-१३, १३-३३ | कैः १-२२, १४-२१ |
| कृत्त्ववत् १८-२२ | को ११-३१ |
| कृत्त्ववित् ३-२९ | कौन्तेय २-१४, २-३७, २-६०, ३-१, ३-३९, ५-२२, ६-३५, ७-८, ८-६, ८-१६, ९-७, ९-१०, ९-२३, ९-२७, ९-३१, १३-१, १३-३१, १४-४, १४-७, १६-२०, १६-२२, १८-४८, १८-५०, १८-६० |
| कृत्त्वस्य ७-६ | कौन्तेयः १-२७ |
| कृपः १-८ | कौमारम् २-१३ |
| कृपणाः २-४९ | कौशलम् २-५० |
| कृपया १-२८, २-१ | क्रतुः ९-१६ |
| कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यम् १८-४४ | |

क्रियते १७-१८, १७-१९, १८-१, १८-२४
 क्रियन्ते १७-२५
 क्रियमाणानि ३-२७, १३-२९
 क्रियाभिः ११-४८
 क्रियाविशेषबहुलाम् २-४३
 क्रूरान् १६-१९
 क्रोधः २-६२, ३-३७, १६-४, १६-२१
 क्रोधम् १६-१८, १८-५३
 क्रोधात् २-६३
 क्लेदयन्ति २-२३
 क्लेशः १२-५
 क्लैब्यम् २-३
 क्वचित् १८-१२
 क्षणम् ३-५
 क्षत्रियस्य २-३१
 क्षत्रियाः २-३२
 क्षमा १०-४, १०-३४, १६-३
 क्षमी १२-१३
 क्षयम् १८-२५
 क्षयाय १६-९
 क्षरः ८-४, १५-१६
 क्षरम् १५-१८
 क्षात्रम् १८-४३
 क्षान्तिः १३-७, १८-४२

क्षामये ११-४२
 क्षिपामि १६-१९
 क्षिप्रम् ४-१२, ९-३१
 क्षीणकलमषाः ५-२५
 क्षीणे ९-२१
 क्षुद्रम् २-३
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः १३-२, १३-३४
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात् १३-२६
 क्षेत्रज्ञः १३-१
 क्षेत्रज्ञम् १३-२
 क्षेत्रम् १३-१, १३-३, १३-६, १३-१८, १३-३३
 क्षेत्री १३-३३
 क्षेमतरम् १-४६

ख

खम् ७-४
 खे ७-८

ग

गच्छ १८-६२
 गच्छति ६-३७, ६-४०
 गच्छन् ५-८
 गच्छन्ति २-५१, ५-१७, ८-२४, १४-१८, १५-५
 गजेन्द्राणाम् १०-२७
 गतः ११-५१

गतरसम् १७-१०
 गतव्यथः १२-१६
 गतसङ्गस्य ४-२३
 गतसन्देहः १८-७३
 गताः ८-१५, १४-१, १५-४
 गतागतम् ९-२१
 गतासून् २-११
 गतिः ४-१७, ९-१८, १२-५
 गतिम् ६-३७, ६-४५, ७-१८, ८-१३, ८-२१, ९-३२, १३-२८, १६-२०, १६-२२, १६-२३
 गती ८-२६
 गत्वा १४-१५, १५-६
 गदिनम् ११-१७, ११-४६
 गन्तव्यम् ४-२४
 गन्तासि २-५२
 गन्धः ७-९
 गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घाः ११-२२
 गन्धर्वाणाम् १०-२६
 गन्धान् १५-८
 गमः २-३
 गम्यते ५-५
 गरीयः २-६
 गरीयसे ११-३७
 गरीयान् ११-४३
 गर्भः ३-३८

गर्भम् १४-३
 गवि ५-१८
 गहना ४-१७
 गाण्डीवम् १-३०
 गात्राणि १-२९
 गाम् १५-१३
 गायत्री १०-३५
 गिराम् १०-२५
 गीतम् १३-४
 गुडाकेश १०-२०, ११-७
 गुडाकेशः २-९
 गुडाकेशोन १-२४
 गुणकर्मविभागयोः ३-२८
 गुणकर्मविभागशः ४-१३
 गुणकर्मसु ३-२९
 गुणतः १८-२९
 गुणप्रवृद्धाः १५-२
 गुणभेदतः १८-१९
 गुणभोक्तृ १३-१४
 गुणमयी ७-१४
 गुणमयैः ७-१३
 गुणसङ्घाने १८-१९
 गुणसङ्गः १३-२१
 गुणसमुद्भवः ३-३७
 गुणसमूढाः ३-२९

गुणा: ३-२८, १४-५, १४-२३
 गुणातीतः १४-२५
 गुणान् १३-१९, १३-२१, १४-२०, १४-२१, १४-२६
 गुणान्वितम् १५-१०
 गुणेभ्यः १४-१९
 गुणेषु ३-२८
 गुणैः ३-५, ३-२७, १३-२३, १४-२३, १८-४०, १८-४१
 गुरुः ११-४३
 गुरुणा ६-२२
 गुरुन् २-५
 गुद्धितमम् ९-१, १५-२०
 गुद्धितरम् १८-६३
 गुद्धम् ११-१, १८-६८, १८-७५
 गुद्धात् १८-६३
 गुद्धानाम् १०-३८
 गृणन्ति ११-२१
 गृहीत्वा १५-८, १६-१०
 गृह्णन् ५-९
 गृह्णाति २-२२
 गृह्णते ६-३५
 गेहे ६-४१
 गोविन्द १-३२
 गोविन्दम् २-९
 ग्रसमानः ११-३०

ग्रसिष्णु १३-१६

ग्राहान् १६-१०
 ग्लानिः ४-७

घ

घातयति २-२१
 घोरम् ११-४९, १७-५
 घोरे ३-१
 घोषः १-१९
 घ्रतः १-३५
 घ्राणम् १५-९

च

च १-१, १-४, १-५, १-६, १-८, १-९, १-११, १-१३, १-१४, १-१६, १-१७, १-१८, १-१९, १-२५, १-२७, १-२९, १-३०, १-३१, १-३२, १-३३, १-३४, १-३८, १-४२, १-४३, २-४, २-६, २-८, २-११, २-१२, २-१९, २-२३, २-२४, २-२६, २-२७, २-२९, २-३१, २-३२, २-३३, २-३४, २-३५, २-३६, २-४१, २-५२, २-५८, २-६६, ३-४, ३-८, ३-१७, ३-१८, ३-२२, ३-२४, ३-३८, ३-३९, ४-३, ४-५, ४-८, ४-९, ४-१७, ४-१८, ४-२२, ४-२७, ४-२८, ४-४०, ५-१, ५-२, ५-५, ५-१५, ५-१८, ५-२०, ५-२७, ६-१, ६-९, ६-१३, ६-१६, ६-२०, ६-२१, ६-२२, ६-२९, ६-३०, ६-३५, ६-४३, ६-४६, ७-४, ७-९, ७-११, ७-१२, ७-१६, ७-१७, ७-२२, ७-२६, ७-२९, ७-३०, ८-१, ८-२, ८-४, ८-५, ८-७, ८-१०, ८-१२, ८-२३,

८-२८, ९-४, ९-५, ९-९, ९-१२, ९-१४, ९-१५, ९-१७, ९-१९, ९-२४, ९-२९, १०-२, १०-३, १०-४, १०-७, १०-९, १०-१३, १०-१७, १०-१८, १०-२०, १०-२२, १०-२३, १०-२४, १०-२६, १०-२७, १०-२८, १०-२९, १०-३०, १०-३१, १०-३२, १०-३३, १०-३४, १०-३८, १०-३९, ११-२, ११-५, ११-७, ११-१५, ११-१७, ११-२०, ११-२२, ११-२४, ११-२५, ११-२६, ११-३४, ११-३६, ११-३७, ११-३८, ११-३९, ११-४२, ११-४३, ११-४५, ११-४८, ११-४९, ११-५०, ११-५३, ११-५४, १२-१, १२-३, १२-१३, १२-१५, १२-१८, १२-२, १२-३, १३-४, १३-५, १३-८, १३-९, १३-१०, १३-१४, १३-१५, १३-१६, १३-१८, १३-१९, १३-२२, १३-२३, १३-२४, १३-२५, १३-२९, १३-३०, १३-३४, १४-२, १४-६, १४-१०, १४-१३, १४-१७, १४-१९, १४-२१, १४-२२, १४-२६, १४-२७, १५-२, १५-३, १५-४, १५-८, १५-९, १५-११, १५-१२, १५-१३, १५-१५, १५-१६, १५-१८, १५-२०, १६-१, १६-४, १६-६, १६-७, १६-११, १६-१४, १६-१८, १७-२, १७-४, १७-६, १७-१०, १७-१२, १७-१४, १७-१५, १७-१८, १७-२०, १७-२१, १७-२२, १७-२३, १७-२५, १७-२६, १७-२७, १७-२८, १८-१, १८-३, १८-५, १८-६, १८-९, १८-१२, १८-१४, १८-१९, १८-२२, १८-२५, १८-२८, १८-२९, १८-३०, १८-३१, १८-३२, १८-३५, १८-३६, १८-३९, १८-४१, १८-४२, १८-४३, १८-५१, १८-५५, १८-६७, १८-६९, १८-७०, १८-७१, १८-७४, १८-७६, १८-७७

चक्रम् ३-१६

चक्रहस्तम् ११-४६

चक्रिणम् ११-१७

चक्षुः ५-२७, ११-८, १५-९

चञ्चलत्वात् ६-३३

चञ्चलम् ६-२६, ६-३४

चतुर्भुजेन ११-४६

चतुर्विधम् १५-१४

चतुर्विधाः ७-१६

चत्वारः १०-६

चन्द्रमसि १५-१२

चमूम् १-३

चरताम् २-६७

चरति २-७१, ३-३६

चरन् २-६४

चरन्ति ८-११

चरम् १३-१५

चराचरम् १०-३९

चराचरस्य ११-४३

चलति ६-२१

चलम् ६-३५, १७-१८

चलितमानसः ६-३७

चातुर्वर्ण्यम् ४-१३

चान्द्रमसम् ८-२५

चापम् १-४७

चिकीर्षुः ३-२५

चित्तम् ६-१८, ६-२०, १२-९

चित्ररथः १०-२६

चिन्तयन्तः ९-२२

चिन्तयेत् ६-२५

चिन्ताम् १६-११

चिन्त्यः १०-१७

चिरात् १२-७

चूर्णितैः ११-२७

चेकितानः १-५

चेतना १०-२२, १३-६

चेतसा ८-८, १८-५७, १८-७२

चेत् २-३३, ३-१, ३-२४, ४-३६, ९-३०, १८-५८

चेष्टते ३-३३

चेष्टा: १८-१४

चैलाजिनकुशोत्तरम् ६-११

च्यवन्ति ९-२४

छ

छन्दसाम् १०-३५

छन्दांसि १५-१

छन्दोभिः १३-४

छलयताम् १०-३६

छित्वा ४-४२, १५-३

छिन्दन्ति २-२३

छिन्द्रौधाः ५-२५

छिन्नसंशयः १८-१०

छिन्नाभ्रम् ६-३८

छेत्ता ६-३९

छेत्तुम् ६-३९

ज

जगतः ७-६, ८-२६, १६-९

जगतो ९-१७

जगत् ७-५, ७-१३, ९-४, ९-१०, १०-४२, ११-७, ११-१३, ११-३०, ११-३६, १५-१२, १६-८

जगत्पते १०-१५

जगन्निवास ११-२५, ११-३७, ११-४५

जघन्यगुणवृत्तिस्थाः १४-१८

जनः ३-२१

जनकादयः ३-२०

जनयेत् ३-२६

जनसंसदि १३-१०

जनाः ७-१६, ८-१७, ८-२४, ९-२२, १६-७, १७-४, १७-५

जनाधिपाः २-१२

जनानाम् ७-२८

जनार्दन १-३६, १-३९, १-४४, ३-१, १०-१८, ११-५१

जन्तवः ५-१५

जन्म २-२७, ४-४, ४-९, ६-४२, ८-१५, ८-१६

जन्मकर्मफलप्रदाम् २-४३

जन्मनाम् ७-१९

जन्मनि १६-२०

जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः २-५१
 जन्ममृत्युजरादुःखैः १४-२०
 जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् १३-८
 जन्मानि ४-५
 जपयज्ञः १०-२५
 जयः १०-३६
 जयद्रथम् ११-३४
 जयाजयौ २-३८
 जयेम २-६
 जयेयुः २-६
 जरा २-१३
 जरामरणमोक्षाय ७-२९
 जहाति २-५०
 जहि ३-४३, ११-३४
 जागर्ति २-६९
 जाग्रतः ६-१६
 जाग्रति २-६९
 जातस्य २-२७
 जाताः १०-६
 जातिधर्माः १-४३
 जातु २-१२, ३-५, ३-२३
 जानन् ८-२७
 जानाति १५-१९
 जाने ११-२५

जायते १-२९, १-४१, २-२०, १४-१५
 जायन्ते १४-१२, १४-१३
 जाह्वी १०-३१
 जिगीषताम् १०-३८
 जिघन् ५-८
 जिजीविषामः २-६
 जिज्ञासुः ६-४४, ७-१६
 जितः ५-१९, ६-६
 जितसङ्गदोषाः १५-५
 जितात्मनः ६-७
 जितात्मा १८-४९
 जितेन्द्रियः ५-७
 जित्वा २-३७, ११-३३
 जीर्णानि २-२२
 जीवति ३-१६
 जीवनम् ७-९
 जीवभूतः १५-७
 जीवभूताम् ७-५
 जीवलोके १५-७
 जीवितेन १-३२
 जुहोषि ९-२७
 जुहृति ४-२६, ४-२७, ४-२९, ४-३०
 जेतासि ११-३४
 जोषयेत् ३-२६
 ज्ञातव्यम् ७-२
 ज्ञातुम् ११-५४

ज्ञातेन १०-४२

ज्ञात्वा ४-१५, ४-१६, ४-३२, ४-३५, ५-२९, ७-२, ९-१, ९-१३, १३-१२, १४-१, १६-२४, १८-५५

ज्ञानगम्यम् १३-१७

ज्ञानचक्षुषः १५-१०

ज्ञानचक्षुषा १३-३४

ज्ञानतपसा ४-१०

ज्ञानदीपिते ४-२७

ज्ञानदीपेन १०-११

ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ५-१७

ज्ञानपूर्वेन ४-३६

ज्ञानम् ३-३९, ३-४०, ४-३४, ४-३९, ५-१५, ५-१६, ७-२, ९-१, १०-४, १०-३८, १२-१२, १३-२, १३-११, १३-१७, १३-१८, १४-१, १४-२, १४-९, १४-११, १४-१७, १५-१५, १८-१८, १८-१९, १८-२०, १८-२१, १८-४२, १८-६३

ज्ञानयज्ञः ४-३३

ज्ञानयज्ञेन ९-१५, १८-७०

ज्ञानयोगव्यवस्थितिः १६-१

ज्ञानयोगेन ३-३

ज्ञानवताम् १०-३८

ज्ञानवान् ३-३३, ७-१९

ज्ञानविज्ञानतृसात्मा ६-८

ज्ञानविज्ञाननाशनम् ३-४१

ज्ञानसङ्गेन १४-६

ज्ञानसञ्चिन्नसंशयम् ४-४१

ज्ञानस्य १८-५०

ज्ञानाग्निः ४-३७

ज्ञानाग्निदग्धकर्मणम् ४-१९

ज्ञानात् १२-१२

ज्ञानानाम् १४-१

ज्ञानावस्थितचेतसः ४-२३

ज्ञानासिना ४-४२

ज्ञानिनः ३-३९, ४-३४, ७-१७

ज्ञानिभ्यः ६-४६

ज्ञानी ७-१६, ७-१७, ७-१८

ज्ञाने ४-३३

ज्ञानेन ४-३८, ५-१६

ज्ञास्यसि ७-१

ज्येयः ५-३, ८-२

ज्येयम् १-३९, १३-१२, १३-१६, १३-१७, १३-१८, १८-१८

ज्यायः ३-८

ज्यायसी ३-१

ज्योतिः ८-२४, ८-२५, १३-१७

ज्योतिषाम् १०-२१, १३-१७

ज्वलद्धिः ११-३०

ज्वलनम् ११-२९

झ

झषाणाम् १०-३१

त

ततः १-१३, १-१४, २-३३, २-३६, २-३८, ६-२२, ६-२६, ६-४३, ६-४५, ७-२२, ११-४, ११-९, ११-१४, ११-४०, १२-९, १२-११, १३-२८, १३-३०, १४-३, १५-४, १६-२०, १६-२२, १८-५५, १८-६४

ततम् २-१७, ८-२२, ९-४, ११-३८, १८-४६

तत् १-१०, १-४६, २-७, २-१७, २-५७, २-६७, ३-१, ३-२, ३-९, ३-२१, ४-१६, ४-३४, ४-३८, ५-१, ५-५, ५-१६, ५-१७, ६-२१, ७-१, ७-२३, ७-२९, ८-१, ८-६, ८-११, ८-२१, ८-२८, ९-२६, ९-२७, १०-३९, १०-४१, ११-४, ११-३७, ११-४२, ११-४५, ११-४९, १३-२, १३-३, १३-१२, १३-१३, १३-१५, १३-१६, १३-१७, १३-२६, १४-७, १४-८, १५-४, १५-५, १५-६, १५-१२, १७-१७, १७-१८, १७-१९, १७-२०, १७-२१, १७-२२, १७-२३, १७-२५, १७-२८, १८-५, १८-२०, १८-२१, १८-२२, १८-२३, १८-२४, १८-२५, १८-३८, १८-३९, १८-४०, १८-४५, १८-५५, १८-६०, १८-६२, १८-७७

तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् १३-११

तत्त्वतः ४-९, ६-२१, ७-३, १०-७, १८-५५

तत्त्वदर्शिनः ४-३४

तत्त्वदर्शिभिः २-१६

तत्त्वम् १८-१

तत्त्ववित् ३-२८, ५-८

तत्त्वेन १-२४, ११-५४

तत्परः ४-३९

तत्र १-२६, २-१३, २-२८, ६-१२, ६-४३, ८-१८, ८-२४, ८-२५, ११-१३, १४-६, १८-४, १८-१६, १८-७८

तथा १-८, १-२६, १-३४, २-१, २-१३, २-२२, २-२६, २-२९, ३-२५, ३-३८, ४-११, ४-२८, ४-२९, ४-३७, ५-२४, ६-७, ७-६, ८-२५, ९-६, ९-३२, ९-३३, १०-६, १०-१३, १०-३५, ११-६, ११-१५, ११-२३, ११-२६, ११-२८, ११-२९, ११-३४, ११-४६, ११-५०, १२-१८, १३-१८, १३-२९, १३-३२, १३-३३, १४-१०, १४-१५, १५-३, १६-२१, १७-७, १७-२६, १८-१४, १८-५०, १८-६३

तदर्थीयम् १७-२७

तदा १-२, १-२१, २-५२, २-५३, २-५५, ४-७, ६-४, ६-१८, ११-१३, १३-३०, १४-११, १४-१४

तद्वत् २-७०

तद्विदः १३-१

तत्त्वम् ७-२१, ९-११

तपः ७-९, १०-५, १६-१, १७-५, १७-७, १७-१४, १७-१५, १७-१६, १७-१७, १७-१८, १७-१९, १७-२८, १८-५, १८-४२

तपःसु ८-२८

तपन्तम् ११-११

तपसा ११-५३

तपसि १७-२७

तपस्यसि ९-२७

तपस्विभ्यः ६-४६

तपस्विषु ७-१

तपामि ९-१९

तपोभिः ११-४८

तपोयज्ञाः ४-२८

तप्तम् १७-१७, १७-२८

तप्यन्ते १७-५

तमः १०-११, १४-५, १४-८, १४-९, १४-१०,
१७-१

तमसः ८-१, १३-१७, १४-१६, १४-१७

तमसा १८-३२

तमसि १४-१३, १४-१५

तमोद्वारैः १६-२२

तम् २-१, २-१०, ४-१९, ६-२, ६-२३, ६-४३,
७-२०, ८-६, ८-१०, ८-२१, ८-२३, ९-२१,
१०-१०, १३-१, १५-१, १५-४, १७-१२, १८-
४६, १८-६२

तथा २-४४, ७-२२

तयोः ३-३४, ५-२

तरन्ति ७-१४

तरिष्यसि १८-५८

तव १-३, २-३६, ४-५, १०-४२, ११-१५, ११-१६,
११-२०, ११-२८, ११-२९, ११-३०, ११-३१,
११-३६, ११-४१, ११-४७, ११-५१, १८-७२

तस्मात् २-१८, २-२५, २-२७, २-३०, २-३७,
२-५०, २-६८, ३-१५, ३-१९, ३-४१, ४-
१५, ४-४२, ५-१९, ६-४६, ८-७, ८-२०,

८-२७, ११-३३, ११-४४, १६-२१, १६-२४,
१७-२४, १८-६९

तस्मान् १-३७

तस्मिन् १४-३

तस्य १-१२, २-५७, २-५८, २-६१, २-६८, ३-
१७, ३-१८, ४-१३, ६-३, ६-६, ६-३०, ६-
३४, ६-४०, ७-२१, ८-१४, ११-१२, १५-२,
१८-७, १८-१५

तस्याः ७-२२

तस्याम् २-६९

तात ६-४०

तानि २-६१, ४-५, ९-७, ९-९, १८-१९

तान् १-७, १-२७, २-१४, ३-२९, ३-३२, ४-११,
४-३२, ७-१२, ७-२२, १६-१९, १७-६

तामसः १८-७, १८-२८

तामसप्रियम् १७-१०

तामसम् १७-१३, १७-१९, १७-२२, १८-२२, १८-
२५, १८-३९

तामसाः ७-१२, १४-१८, १७-४

तामसी १७-२, १८-३२, १८-३५

ताम् ७-२१, १७-२

तावान् २-४६

तासाम् १४-४

तितिक्षस्व २-१४

तिष्ठति ३-५, १३-१३, १८-६१

तिष्ठन्तम् १३-२७

तिष्ठन्ति १४-१८

तिष्ठसि १०-१६

तु १-२, १-७, १-१०, २-५, २-१२, २-१४, २-१६, २-१७, २-३९, २-६४, ३-७, ३-१३, ३-१७, ३-२८, ३-३२, ३-४२, ५-२, ५-६, ५-१४, ५-१६, ६-६, ६-१६, ६-३५, ६-३६, ६-४५, ७-५, ७-१२, ७-१८, ७-२३, ७-२६, ७-२८, ८-१६, ८-२०, ८-२२, ८-२३, ९-१, ९-१३, ९-२४, ९-२९, १०-४०, ११-८, ११-५४, १२-३, १२-६, १२-२०, १३-२५, १४-८, १४-९, १४-१४, १४-१६, १५-१७, १७-१, १७-७, १७-१२, १७-२१, १८-६, १८-७, १८-११, १८-१२, १८-१६, १८-२१, १८-२२, १८-२४, १८-३४, १८-३६

तुमुलः १-१३, १-१९

तुल्यः १४-२५

तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः १४-२४

तुल्यनिन्दास्तुतिः १२-१९

तुल्यप्रियाप्रियः १४-२४

तुष्टः २-५५

तुष्टिः १०-५

तुष्यति ६-२०

तुष्यन्ति १०-९

तूष्णीम् २-९

तृसिः १०-१८

तृष्णासङ्गसमुद्घवम् १४-७

ते १-७, १-३३, २-६, २-७, २-३४, २-३९, २-४७, २-५२, २-५३, ३-१, ३-८, ३-११, ३-१३, ३-३१, ४-३, ४-१६, ४-३४, ५-११, ५-२२, ७-२, ७-१२, ७-१४, ७-२८, ७-२९, ७-३०, ८-११, ८-१७, ९-१, ९-२०,

९-२१, ९-२३, ९-२४, ९-२९, ९-३२, १०-१, १०-१०, १०-१४, १०-१९, ११-३, ११-८, ११-२३, ११-२५, ११-२७, ११-३१, ११-३७, ११-३९, ११-४०, ११-४९, १२-२, १२-४, १२-२०, १३-२५, १३-३४, १६-८, १६-१७, १६-२४, १८-५९, १८-६३, १८-६४, १८-६५, १८-६७, १८-७२

तेजः ७-१, ७-१०, १०-३६, १०-४१, १५-१२, १६-३, १८-४३

तेजस्विनाम् ७-१०, १०-३६

तेजोभिः ११-३०

तेजोमयम् ११-४७

तेजोराशिम् ११-१७

तेन ३-३८, ४-२४, ५-१५, ६-४४, ११-१, ११-४६, १७-२३, १८-७०

तेषाम् ५-१६, ७-१७, ७-२३, ९-२२, १०-१०, १०-११, १२-१, १२-५, १२-७, १७-१, १७-७

तेषु २-६२, ५-२२, ७-१२, ९-४, ९-९, ९-२९, १६-७

तैः ३-१२, ५-१९, ७-२०

तोयम् ९-२६

तौ २-१९, ३-३४

त्यक्तजीविताः १-९

त्यक्तसर्वपरिग्रहः ४-२१

त्यक्तुम् १८-११

त्यक्त्वा १-३३, २-३, २-४८, २-५१, ४-९, ४-२०, ५-१०, ५-११, ५-१२, ६-२४, १८-६, १८-९, १८-५१

त्यजति ८-६
 त्यजन् ८-१३
 त्यजेत् १६-२१, १८-८, १८-४८
 त्यागः १६-२, १८-४, १८-९
 त्यागफलम् १८-८
 त्यागम् १८-२, १८-८
 त्यागस्य १८-१
 त्यागात् १२-१२
 त्यागी १८-१०, १८-११
 त्यागे १८-४
 त्याज्यम् १८-३, १८-५
 त्रयम् १६-२१
 त्रयीर्धर्मम् ९-२१
 त्रायते २-४०
 त्रिधा १८-१९
 त्रिभिः ७-१३, १६-२२, १८-४०
 त्रिविधः १७-७, १७-२३, १८-४, १८-१८
 त्रिविधम् १६-२१, १७-१७, १८-१२, १८-२९, १८-३६
 त्रिविधा १७-२, १८-१८
 त्रिषु ३-२२
 त्रीन् १४-२०, १४-२१
 त्रैगुण्यविषयाः २-४५
 त्रैलोक्यराज्यस्य १-३५

त्रैविद्याः ९-२०
 त्वक् १-३०
 त्वत् ६-३९, ११-४७, ११-४८, १८-७३
 त्वत्तः ११-२
 त्वत्समः ११-४३
 त्वम् २-११, २-१२, २-२६, २-२७, २-३०, २-३३,
 २-३५, ३-८, ३-४१, ४-४, ४-५, ४-१५,
 १०-१५, १०-१६, १०-४१, ११-३, ११-४,
 ११-१८, ११-३३, ११-३४, ११-३७, ११-३८,
 ११-३९, ११-४०, ११-४२, ११-४९, १८-५८
 त्वया ६-३३, ११-१, ११-२०, ११-३८, १८-७२
 त्वयि २-३
 त्वरमाणाः ११-२७
 त्वा २-२, १८-६६
 त्वाम् २-७, २-३५, १०-१३, १०-१७, ११-१६,
 ११-१७, ११-१९, ११-२१, ११-२२, ११-२४,
 ११-२६, ११-३२, ११-४२, ११-४४, ११-४६,
 १२-१, १८-५९

द

दंष्ट्राकरालानि ११-२५, ११-२७
 दक्षः १२-१६
 दक्षिणायनम् ८-२५
 दण्डः १०-३८
 दत्तम् १७-२८
 दत्तान् ३-१२
 ददामि १०-१०, ११-८
 ददासि ९-२७

दधामि १४-३
 दध्मुः १-१८
 दध्मौ १-१२, १-१५
 दमः १०-४, १६-१, १८-४२
 दमयताम् १०-३८
 दम्भः १६-४
 दम्भमानमदान्विताः १६-१०
 दम्भार्थम् १७-१२
 दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः १७-५
 दम्भेन १६-१७, १७-१८
 दया १६-२
 दर्पः १६-४
 दर्पम् १६-१८, १८-५३
 दर्शनकाङ्क्षिणः ११-५२
 दर्शय ११-४, ११-४५
 दर्शयामास ११-९, ११-५०
 दर्शितम् ११-४७
 दशनान्तरेषु ११-२७
 दशैकम् १३-५
 दहति २-२३
 दाक्ष्यम् १८-४३
 दातव्यम् १७-२०
 दानक्रियाः १७-२५
 दानम् १०-५, १६-१, १७-७, १७-२०, १७-२१,
 १७-२२, १८-५, १८-४३

दानवाः १०-१४
 दाने १७-२७
 दानेन ११-५३
 दानेषु ८-२८
 दानैः ११-४८
 दास्यन्ते ३-१२
 दास्यामि १६-१५
 दिवि ९-२०, ११-१२, १८-४०
 दिव्यगन्धानुलेपनम् ११-११
 दिव्यमाल्याम्बरधरम् ११-११
 दिव्यम् ४-९, ८-८, ८-१०, १०-१२, ११-८
 दिव्याः १०-१६, १०-१९
 दिव्यानाम् १०-४०
 दिव्यानि ११-५
 दिव्यानेकोद्यतायुधम् ११-१०
 दिव्यान् ९-२०, ११-१५
 दिव्यौ १-१४
 दिशः ६-१३, ११-२०, ११-२५, ११-३६
 दीपः ६-१९
 दीपमनेकवर्णम् ११-२४
 दीपविशालनेत्रम् ११-२४
 दीपहुताशवक्रम् ११-१९
 दीपानलार्कद्युतिम् ११-१७
 दीपिमन्तम् ११-१७
 दीयते १७-२०, १७-२१, १७-२२

दीर्घसूत्री १८-२८
 दुःखतरम् २-३६
 दुःखम् ५-६, ६-३२, १०-४, १२-५, १३-६, १४-१६, १८-८
 दुःखयोनयः ५-२२
 दुःखशोकामयप्रदाः १७-९
 दुःखसंयोगवियोगम् ६-२३
 दुःखहा ६-१७
 दुःखान्तम् १८-३६
 दुःखालयम् ८-१५
 दुःखेन ६-२२
 दुःखेषु २-५६
 दुरत्यया ७-१४
 दुरासदम् ३-४३
 दुर्गतिम् ६-४०
 दुर्निग्रहम् ६-३५
 दुर्निरीक्ष्यम् ११-१७
 दुर्बुद्धेः १-२३
 दुर्मतिः १८-१६
 दुर्मेधा १८-३५
 दुर्योधनः १-२
 दुर्लभतरम् ६-४२
 दुष्कृताम् ४-८
 दुष्कृतिनः ७-१५

दुष्टासु १-४१
 दुष्पूरम् १६-१०
 दुष्पूरेण ३-३९
 दुष्प्रापः ६-३६
 दूरस्थम् १३-१५
 दूरेण २-४९
 दृढनिश्चयः १२-१४
 दृढम् ६-३४, १८-६४
 दृढत्रताः ७-२८, ९-१४
 दृढेन १५-३
 दृष्टः २-१६
 दृष्टपूर्वम् ११-४७
 दृष्टवान् ११-५२, ११-५३
 दृष्टिम् १६-९
 दृष्ट्वा १-२, १-२०, १-२८, २-५९, ११-२०, ११-२३,
 ११-२४, ११-२५, ११-४५, ११-४९, ११-५१
 देव ११-१५, ११-४४, ११-४५
 देवताः ४-१२
 देवदत्तम् १-१५
 देवदेव १०-१५
 देवदेवस्य ११-१३
 देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनम् १७-१४
 देवभोगान् ९-२०
 देवम् ११-११, ११-१४
 देवयजः ७-२३
 देवर्षिः १०-१३

देवर्षीणाम् १०-२६
 देवलः १०-१३
 देववर ११-३१
 देवत्रता: ९-२५
 देवाः ३-११, ३-१२, १०-१४, ११-५२
 देवानाम् १०-२, १०-२२
 देवान् ३-११, ७-२३, ९-२५, ११-१५, १७-४
 देवेश ११-२५, ११-३७, ११-४५
 देवेषु १८-४०
 देशे ६-११, १७-२०
 देहभूता १८-११
 देहभूताम् ८-४
 देहभूत् १४-१४
 देहम् ४-९, ८-१३, १५-१४
 देहवद्धिः १२-५
 देहसमुद्धवान् १४-२०
 देहाः २-१८
 देहान्तरप्राप्तिः २-१३
 देहिनः २-१३, २-५९
 देहिनम् ३-४०, १४-५, १४-७
 देहिनाम् १७-२
 देही २-२२, २-३०, ५-१३, १४-२०
 देहे २-१३, २-३०, ८-२, ८-४, ११-७, ११-१५,
 १३-२२, १३-३२, १४-५, १४-११
 दैत्यानाम् १०-३०

दैवः १६-६
 दैवम् ४-२५, १८-१४
 दैवी ७-१४, १६-५
 दैवीम् ९-१३, १६-३, १६-५
 दोषम् १-३८, १-३९
 दोषवत् १८-३
 दोषेण १८-४८
 दोषैः १-४३
 द्यावापृथिव्योः ११-२०
 द्यूतम् १०-३६
 द्रक्ष्यसि ४-३५
 द्रवन्ति ११-२८, ११-३६
 द्रव्यमयात् ४-३३
 द्रव्ययज्ञाः ४-२८
 द्रष्टा १४-१९
 द्रष्टुम् ११-३, ११-४, ११-७, ११-८, ११-४६, ११-
 ४८, ११-५३, ११-५४
 द्रुपदः १-४, १-१८
 द्रुपदपुत्रेण १-३
 द्रोणः ११-२६
 द्रोणम् २-४, ११-३४
 द्रौपदेयाः १-६, १-१८
 द्वन्द्वः १०-३३
 द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः ७-२८
 द्वन्द्वमोहेन ७-२७

द्वन्द्वातीतः ४-२२

द्वन्द्वैः १५-५

द्वारम् १६-२१

द्विजोत्तम १-७

द्विविधा ३-३

द्विषतः १६-१९

द्वेषः १३-६

द्वेष्टि २-५७, ५-३, १२-१७, १४-२२, १८-१०

द्वेष्यः ९-२९

द्वौ १५-१६, १६-६

ध

धनञ्जय २-४८, २-४९, ४-४१, ७-७, ९-९, १२-९, १८-२९, १८-७२

धनञ्जयः १-१५, १०-३७, ११-१४

धनमानमदान्विताः १६-१७

धनम् १६-१३

धनानि १-३३

धनुः १-२०

धनुर्धरः १८-७८

धर्मकामार्थान् १८-३४

धर्मक्षेत्रे १-१

धर्मम् १८-३१, १८-३२

धर्मसंस्थापनार्थाय ४-८

धर्मसम्मूढचेताः २-७

धर्मस्य २-४०, ४-७, ९-३, १४-२७

धर्मात्मा ९-३१

धर्माविरुद्धः ७-११

धर्मे १-४०

धर्म्यम् २-३३, ९-२, १८-७०

धर्म्यात् २-३१

धर्म्यामृतम् १२-२०

धाता ९-१७, १०-३३

धातारम् ८-९

धाम ८-२१, १०-१२, ११-३८, १५-६

धारयते १८-३३, १८-३४

धारयन् ५-९, ६-१३

धारयामि १५-१३

धार्तराष्ट्रस्य १-२३

धार्तराष्ट्राः १-४६, २-६

धार्तराष्ट्राणाम् १-१९

धार्तराष्ट्रान् १-२०, १-३६, १-३७

धार्यते ७-५

धीमता १-३

धीमताम् ६-४२

धीरः २-१३, १४-२४

धीरम् २-१५

धूमः ८-२५

धूमेन ३-३८, १८-४८

धृतराष्ट्रस्य ११-२६

धृतिः १०-३४, १३-६, १६-३, १८-३३, १८-३४, १८-३५, १८-४३

धृतिगृहीतया ६-२५

धृतिम् ११-२४

धृतेः १८-२९

धृत्या १८-३३, १८-३४, १८-५१

धृत्युत्साहसमन्वितः १८-२६

धृष्टकेरुः १-५

धृष्टद्युम्नः १-१७

धेनूनाम् १०-२८

ध्यानम् १२-१२

ध्यानयोगपरः १८-५२

ध्यानात् १२-१२

ध्यानेन १३-२४

ध्यायतः २-६२

ध्यायन्तः १२-६

ध्रुवः २-२७

ध्रुवम् २-२७, १२-३

ध्रुवा १८-७८

न

न १-३०, १-३१, १-३२, १-३५, १-३७, १-३८, १-३९, २-३, २-६, २-८, २-९, २-११, २-१२, २-१३, २-१५, २-१६, २-१७, २-१९, २-२०, २-२३, २-२५, २-२६, २-२७, २-२९, २-३०, २-३१, २-३३, २-३८, २-४०, २-४२, २-४४, २-५७, २-६६, २-७०, २-७२, ३-४, ३-५, ३-८, ३-१६, ३-१७, ३-१८, ३-२२, ३-२३, ३-२४, ३-२६, ३-२८, ३-२९, ३-३२, ३-३४, ४-५, ४-९, ४-१४, ४-२०, ४-२१, ४-२२, ४-३५, ४-३८, ४-४०, ४-४१, ५-३, ५-४, ५-७, ५-८, ५-१०, ५-१३, ५-१४, ५-१५, ५-२०, ५-२२, ६-१, ६-२, ६-४, ६-५, ६-११, ६-१६, ६-१९, ६-२१, ६-२२, ६-२५, ६-३०, ६-३३, ६-३८, ६-३९, ६-४०, ७-२, ७-७, ७-१२, ७-१३, ७-१५, ७-२५, ७-२६, ८-५, ८-८, ८-१५, ८-१६, ८-२०, ८-२१, ८-२७, ९-४, ९-५, ९-९, ९-२४, ९-२९, ९-३१, १०-२, १०-७, १०-१४, १०-१८, १०-१९, १०-२९, १०-४०, ११-८, ११-१६, ११-२४, ११-२५, ११-३१, ११-३२, ११-३७, ११-४३, ११-४७, ११-४८, ११-५३, १२-७, १२-८, १२-९, १२-१५, १२-१७, १३-१२, १३-२३, १३-२८, १३-३१, १३-३२, १४-२, १४-१९, १४-२२, १४-२३, १५-३, १५-४, १५-६, १५-१०, १५-११, १६-३, १६-७, १६-२३, १७-२८, १८-३, १८-५, १८-७, १८-८, १८-१०, १८-११, १८-१२, १८-१६, १८-१७, १८-३५, १८-४०, १८-४७, १८-४८, १८-५४, १८-५८, १८-५९, १८-६०, १८-६७, १८-६९

नः १-३२, १-३३, १-३६, २-६

नकुलः १-१६

नक्षत्राणाम् १०-२१

नचिरेण ५-६

नदीनाम् ११-२८

- | | |
|--|------------------------|
| नभः १-१९ | नष्टः ४-२, १८-७३ |
| नभःस्पृशम् ११-२४ | नष्टात्मानः १६-९ |
| नमः ११-३१, ११-३९, ११-४० | नष्टान् ३-३२ |
| नमस्कुरु ९-३४, १८-६५ | नष्टे १-४० |
| नमस्कृत्वा ११-३५ | नागानाम् १०-२९ |
| नमस्यन्तः ९-१४ | नानाभावान् १८-२१ |
| नमस्यन्ति ११-३६ | नानावर्णाकृतीनि ११-५ |
| नमेरन् ११-३७ | नानाविधानि ११-५ |
| नयेत् ६-२६ | नानाशक्तप्रहरणाः १-९ |
| नरः २-२२, ५-२३, १२-१९, १६-२२, १८-१५, १८-४५, १८-७१ | नामयज्ञैः १६-१७ |
| नरकस्य १६-२१ | नायकाः १-७ |
| नरकाय १-४२ | नायम् ४-३१ |
| नरके १-४४, १६-१६ | नारदः १०-१३, १०-२६ |
| नरपुङ्गवः १-५ | नारीणाम् १०-३४ |
| नरलोकवीराः ११-२८ | नावम् २-६७ |
| नराणाम् १०-२७ | नाशनम् १६-२१ |
| नराधमाः ७-१५ | नाशयामि १०-११ |
| नराधमान् १६-१९ | नाशाय ११-२९ |
| नराधिपम् १०-२७ | नाशितम् ५-१६ |
| नरैः १७-१७ | नासाभ्यन्तरचारिणौ ५-२७ |
| नवद्वारे ५-१३ | नासिकाग्रम् ६-१३ |
| नवानि २-२२ | निःश्रेयसकरौ ५-२ |
| नश्यति ६-३८ | निःस्पृहः २-७१, ६-१८ |
| नश्यत्सु ८-२० | निगच्छति ९-३१, १८-३६ |
| | निगृहीतानि २-६८ |

निगृह्णामि १-१९

निग्रहः ३-३३

निग्रहम् ६-३४

नित्यः २-२०, २-२४

नित्यजातम् २-२६

नित्यतृसः ४-२०

नित्यम् २-२१, २-२६, २-३०, ३-१५, ३-३१, ९-६,
१०-९, ११-५२, १३-९, १८-५२

नित्ययुक्तः ७-१७

नित्ययुक्तस्य ८-१४

नित्ययुक्ताः ९-१४, १२-२

नित्यवैरिणा ३-३९

नित्यशः ८-१४

नित्यसत्त्वस्थः २-४५

नित्यसन्ध्यासी ५-३

नित्यस्य २-१८

नित्याभियुक्तानाम् ९-२२

निद्रालस्यप्रमादोत्थम् १८-३९

निधनम् ३-३५

निधानम् ९-१८, ११-१८, ११-३८

निन्दन्तः २-३६

निबद्धः १८-६०

निबध्नन्ति ४-४१, ९-९, १४-५

निबध्नाति १४-७, १४-८

निबध्यते ४-२२, ५-१२, १८-१७

निबन्धाय १६-५

निबोध १-७, १८-१३, १८-५०

निमित्तमात्रम् ११-३३

निमित्तानि १-३१

निमिषन् ५-९

नियतमानसः ६-१५

नियतम् ३-८, १८-९, १८-२३

नियतस्य १८-७

नियता: ७-२०

नियतात्मभिः ८-२

नियताहाराः ४-३०

नियमम् ७-२०

नियम्य ३-७, ३-४१, ६-२६, १८-५१

नियोक्त्यति १८-५९

नियोजयसि ३-१

नियोजितः ३-३६

निरग्निः ६-१

निरहङ्कारः २-७१, १२-१३

निराशीः ३-३०, ४-२१, ६-१०

निराश्रयः ४-२०

निराहारस्य २-५९

निरीक्षे १-२२

निरुद्धम् ६-२०

निरुध्य ८-१२

निर्गुणत्वात् १३-३१

- | | |
|----------------------------------|--------------------------|
| निर्गुणम् १३-१४ | निश्चयम् १८-४ |
| निर्देशः १७-२३ | निश्चयेन ६-२३ |
| निर्दोषम् ५-१९ | निश्चरति ६-२६ |
| निर्द्वन्द्वः २-४५, ५-३ | निश्चला २-५३ |
| निर्ममः २-७१, ३-३०, १२-१३, १८-५३ | निश्चितम् २-७, १८-६ |
| निर्मलत्वात् १४-६ | निश्चिताḥ १६-११ |
| निर्मलम् १४-१६ | निश्चित्य ३-२ |
| निर्मानमोहाः १५-५ | निष्ठा ३-३, १७-१, १८-५० |
| निर्योगक्षेमः २-४५ | निष्ठाः ५-१७ |
| निर्वाणपरमाम् ६-१५ | निष्ठैगुण्यः २-४५ |
| निर्विकारः १८-२६ | निहताः ११-३३ |
| निर्वेदम् २-५२ | निहत्य १-३६ |
| निर्वैरः ११-५५ | नीतिः १०-३८, १८-७८ |
| निवर्तते २-५९, ८-२५ | नु १-३५, २-३६ |
| निवर्तन्ति १५-४ | नूलोके ११-४८ |
| निवर्तन्ते ८-२१, ९-३, १५-६ | नूषु ७-८ |
| निवर्तितुम् १-३९ | नैष्कर्म्यम् ३-४ |
| निवसिष्यसि १२-८ | नैष्कर्म्यसिद्धिम् १८-४९ |
| निवातस्थः ६-१९ | नैष्कृतिकः १८-२८ |
| निवासः ९-१८ | नैष्ठिकीम् ५-१२ |
| निवृत्तानि १४-२२ | नो १७-२८ |
| निवृत्तिम् १६-७, १८-३० | न्याय्यम् १८-१५ |
| निवेशय १२-८ | न्यासम् १८-२ |
| निशा २-६९ | |

प

पक्षिणाम् १०-३०
 पचन्ति ३-१३
 पचामि १५-१४
 पञ्च १३-५, १८-१३, १८-१५
 पञ्चमम् १८-१४
 पणवानकगोमुखाः १-१३
 पण्डितम् ४-१९
 पण्डिताः २-११, ५-४, ५-१८
 पतञ्जाः ११-२९
 पतन्ति १-४२, १६-१६
 पत्रम् ९-२६
 पथि ६-३८
 पदम् २-५१, ८-११, १५-४, १५-५, १८-५६
 पद्मपत्रम् ५-१०
 परः ४-४०, ८-२०, ८-२२, १३-२२
 परतः ३-४२
 परतरम् ७-७
 परधर्मः ३-३५
 परधर्मात् ३-३५, १८-४७
 परन्तप २-३, ४-२, ४-५, ४-३३, ७-२७, ९-३,
 १०-४०, ११-५४, १८-४१
 परन्तपः २-९
 परमः ६-३२
 परमम् ८-३, ८-८, ८-२१, १०-१, १०-१२, ११-१,
 ११-९, ११-१८, १५-६, १८-६४, १८-६८

परमात्मा ६-७, १३-२२, १३-३१, १५-१७
 परमाम् ८-१३, ८-१५, ८-२१, १८-४९
 परमेश्वर ११-३
 परमेश्वरम् १३-२७
 परमेष्वासः १-१७
 परम् २-१२, २-५१, ३-११, ३-१९, ३-४२, ३-४३,
 ४-४, ५-१६, ७-१३, ७-२४, ८-१०, ८-२८,
 ९-११, १०-१२, ११-१८, ११-३७, ११-३८,
 ११-४७, १३-१२, १३-१७, १३-३४, १४-१,
 १४-१९, १८-७५
 परम्पराप्राप्तम् ४-२
 परया १-२८, १२-२, १७-१७
 परस्तात् ८-९
 परस्परम् ३-११, १०-९
 परस्य १७-१९
 परा ३-४२, १८-५०
 पराणि ३-४२
 पराम् ४-३९, ६-४५, ७-५, ९-३२, १३-२८, १४-
 १, १६-२२, १६-२३, १८-५४, १८-६२, १८-
 ६८
 परायणाः ५-१७
 परिकीर्तिः १८-७, १८-२७
 परिक्लिष्टम् १७-२१
 परिग्रहम् १८-५३
 परिचक्षते १७-१३, १७-१७
 परिचर्यात्मकम् १८-४४
 परिचिन्तयन् १०-१७
 परिज्ञाता १८-१८

परिणामे १८-३७, १८-३८

परित्यज्य १८-६६

परित्यागः १८-७

परिनामाय ४-८

परिद्वृत्ते १-३०

परिदेवना २-२८

परिपन्थिनौ ३-३४

परिप्रश्नेन ४-३४

परिमार्गितव्यम् १५-४

परिशुष्यति १-२९

परिसमाप्यते ४-३३

पर्जन्यः ३-१४

पर्जन्यात् ३-१४

पर्णानि १५-१

पर्यवतिष्ठते २-६५

पर्यासम् १-१०

पर्युपासते ४-२५, ९-२२, १२-१, १२-३, १२-२०

पर्युषितम् १७-१०

पवताम् १०-३१

पवनः १०-३१

पवित्रम् ४-३८, ९-२, ९-१७, १०-१२

पश्य १-३, १-२५, ९-५, ११-५, ११-६, ११-७, ११-८

पश्यतः २-६९

पश्यति २-२९, ५-५, ६-३०, ६-३२, १३-२७, १३-२९, १८-१६

पश्यन् ५-८, ६-२०, १३-२८

पश्यन्ति १-३८, १३-२४, १५-१०, १५-११

पश्यामि १-३१, ६-३३, ११-१५, ११-१६, ११-१७, ११-१९

पश्येत् ४-१८

पाञ्चजन्यम् १-१५

पाणिपादम् १३-१३

पाण्डव ४-३५, ६-२, ११-५५, १४-२२, १६-५

पाण्डवः १-१४, १-२०, ११-१३

पाण्डवाः १-१

पाण्डवानाम् १०-३७

पाण्डवानीकम् १-२

पाण्डुपुत्राणाम् १-३

पातकम् १-३८

पात्रे १७-२०

पापकृत्तमः ४-३६

पापम् १-३६, २-३३, २-३८, ३-३६, ५-१५, ७-२८

पापयोनयः ९-३२

पापाः ३-१३

पापात् १-३९

पापेन ५-१०

पापेभ्यः ४-३६

पापेषु ६-९

पाप्मानम् ३-४१

पारुष्यम् १६-४

पार्थ १-२५, २-३, २-२१, २-३२, २-३९, २-४२, २-५५, २-७२, ३-१६, ३-२२, ३-२३, ४-११, ४-३३, ६-४०, ७-१, ७-१०, ८-८, ८-१४, ८-१९, ८-२२, ८-२७, ९-१३, ९-३२, १०-२४, ११-५, १२-७, १६-४, १६-६, १७-२६, १७-२८, १८-६, १८-३०, १८-३१, १८-३२, १८-३३, १८-३४, १८-३५, १८-७२

पार्थः १-२६, १८-७८

पार्थस्य १८-७४

पार्थीय ११-९

पावकः २-२३, १०-२३, १५-६

पावनानि १८-५

पितरः १-३४, १-४२

पिता ९-१७, ११-४३, ११-४४, १४-४

पितामहः १-१२, ९-१७

पितामहाः १-३४

पितामहान् १-२६

पितृत्रताः ९-२५

पितृणाम् १०-२९

पितृन् १-२६, ९-२५

पीडया १७-१९

पुंसः २-६२

पुण्यः ७-९

पुण्यकर्मणाम् ७-२८, १८-७१

पुण्यकृताम् ६-४१

पुण्यफलम् ८-२८

पुण्यम् ९-२०, १८-७६

पुण्याः ९-३३

पुण्ये ९-२१

पुत्रदारगृहादिषु १३-९

पुत्रस्य ११-४४

पुत्राः १-३४, ११-२६

पुत्रान् १-२६

पुनः ४-९, ४-३५, ५-१, ८-१५, ८-१६, ८-२६, ९-७, ९-८, ९-३३, ११-१६, ११-३९, ११-४९, ११-५०, १६-१३, १७-२१, १८-२४, १८-४०, १८-७७

पुनरावर्तिनः ८-१६

पुमान् २-७१

पुरस्तात् ११-४०

पुरा ३-३, ३-१०, १७-२३

पुराणः २-२०, ११-३८

पुराणम् ८-९

पुराणी १५-४

पुरातनः ४-३

पुरुजित् १-५

पुरुषः २-२१, ३-४, ८-४, ८-२२, ११-१८, ११-३८, १३-२०, १३-२१, १३-२२, १५-१७, १७-३

पुरुषम् २-१५, ८-८, ८-१०, १०-१२, १३-१९, १३-२३, १५-४

पुरुषर्षभ २-१५

पुरुषव्याघ्र १८-४

पुरुषस्त्व २-६०

पुरुषः ९-३

पुरुषोत्तम ८-१, १०-१५, ११-३

पुरुषोत्तमः १५-१८

पुरुषोत्तमम् १५-१९

पुरुषौ १५-१६

पुरे ५-१३

पुरोधसाम् १०-२४

पुष्कलाभिः ११-२१

पुष्णामि १५-१३

पुष्पम् ९-२६

पुष्पिताम् २-४२

पूजाहौं २-४

पूज्यः ११-४३

पूतपापाः ९-२०

पूताः ४-१०

पूति १७-१०

पूरुषः ३-१९, ३-३६

पूर्वतरम् ४-१५

पूर्वम् ११-३३

पूर्वाभ्यासेन ६-४४

पूर्वे १०-६

पूर्वैः ४-१५

पृच्छामि २-७

पृथक् १-१८, ५-४, १३-४, १८-१, १८-१४

पृथत्त्वेन ९-१५, १८-२१, १८-२९

पृथग्विधम् १८-१४

पृथग्विधाः १०-५

पृथग्विधान् १८-२१

पृथिवीपते १-१८

पृथिवीम् १-१९

पृथिव्याम् ७-९, १८-४०

पृष्ठतः ११-४०

पौण्ड्रम् १-१५

पौत्राः १-३४

पौत्रान् १-२६

पौरुषम् ७-८, १८-२५

पौर्वदेहिकम् ६-४३

प्रकाशः ७-२५, १४-११

प्रकाशकम् १४-६

प्रकाशम् १४-२२

प्रकाशयति ५-१६, १३-३३

प्रकीर्त्या ११-३६

प्रकृतिः ७-४, ९-१०, १३-२०, १८-५९

प्रकृतिजान् १३-२१

प्रकृतिजैः ३-५, १८-४०

प्रकृतिम् ३-३३, ४-६, ७-५, ९-७, ९-८, ९-१२,
९-१३, ११-५१, १३-१९, १३-२३

प्रकृतिसम्भवाः १४-५
 प्रकृतिसम्भवान् १३-१९
 प्रकृतिस्थः १३-२१
 प्रकृतिस्थानि १५-७
 प्रकृतेः ३-२७, ३-२९, ३-३३, ९-८
 प्रकृत्या ७-२०, १३-२९
 प्रजनः १०-२८
 प्रजहाति २-५५
 प्रजहि ३-४१
 प्रजाः ३-१०, ३-२४, १०-६
 प्रजानाति १८-३१
 प्रजानामि ११-३१
 प्रजापतिः ३-१०, ११-३९
 प्रज्ञा २-५७, २-५८, २-६१, २-६८
 प्रज्ञाम् २-६७
 प्रज्ञावादान् २-११
 प्रणम्य ११-१४, ११-३५, ११-४४
 प्रणयेन ११-४१
 प्रणवः ७-८
 प्रणश्यति २-६३, ६-३०, ९-३१
 प्रणश्यन्ति १-४०
 प्रणश्यामि ६-३०
 प्रणिधाय ११-४४
 प्रणिपातेन ४-३४

प्रतपन्ति ११-३०
 प्रतापवान् १-१२
 प्रति २-४३
 प्रतिजानीहि ९-३१
 प्रतिजाने १८-६५
 प्रतिपद्यते १४-१४
 प्रतियोत्स्यामि २-४
 प्रतिष्ठा १४-२७
 प्रतिष्ठाप्य ६-११
 प्रतिष्ठितम् ३-१५
 प्रतिष्ठिता २-५७, २-५८, २-६१, २-६८
 प्रत्यक्षावगमम् ९-२
 प्रत्यनीकेषु ११-३२
 प्रत्यवायः २-४०
 प्रत्युपकारार्थम् १७-२१
 प्रथितः १५-१८
 प्रदध्मतुः १-१४
 प्रदिष्टम् ८-२८
 प्रदीप्तम् ११-२९
 प्रदुष्यन्ति १-४१
 प्रद्विष्णन्तः १६-१८
 प्रनष्टः १८-७२
 प्रपद्यते ७-१९
 प्रपद्यन्ते ४-११, ७-१४, ७-१५, ७-२०
 प्रपद्ये १५-४
 प्रपन्नम् २-७

प्रपश्य ११-४९
 प्रपश्यद्भिः १-३९
 प्रपश्यामि २-८
 प्रपितामहः ११-३९
 प्रभवः ७-६, ९-१८, १०-८
 प्रभवति ८-१९
 प्रभवन्ति ८-१८, १६-९
 प्रभवम् १०-२
 प्रभविष्णु १३-१६
 प्रभा ७-८
 प्रभावः १३-३
 प्रभाषेत् २-५४
 प्रभुः ५-१४, ९-१८, ९-२४
 प्रभो ११-४, १४-२१
 प्रमाणम् ३-२१, १६-२४
 प्रमाथि ६-३४
 प्रमार्थीनि २-६०
 प्रमादः १४-१३
 प्रमादमोहौ १४-१७
 प्रमादात् ११-४१
 प्रमादालस्यनिद्राभिः १४-८
 प्रमादे १४-९
 प्रमुखे २-६
 प्रमुच्यते ५-३, १०-३

प्रयच्छति ९-२६
 प्रयतात्मनः ९-२६
 प्रयत्नात् ६-४५
 प्रयाणकाले ७-३०, ८-२, ८-१०
 प्रयाताः ८-२३, ८-२४
 प्रयाति ८-५, ८-१३
 प्रयुक्तः ३-३६
 प्रयुज्यते १७-२६
 प्रलपन् ५-९
 प्रलयः ७-६, ९-१८
 प्रलयम् १४-१४, १४-१५
 प्रलयान्ताम् १६-११
 प्रलये १४-२
 प्रलीनः १४-१५
 प्रलीयते ८-१९
 प्रलीयन्ते ८-१८
 प्रवक्ष्यामि ४-१६, ९-१, १३-१२, १४-१
 प्रवक्ष्ये ८-११
 प्रवदताम् १०-३२
 प्रवदन्ति २-४२, ५-४
 प्रवर्तते ५-१४, १०-८
 प्रवर्तन्ते १६-१०, १७-२४
 प्रवर्तितम् ३-१६
 प्रविभक्तम् ११-१३
 प्रविभक्तानि १८-४१
 प्रविलीयते ४-२३

प्रविशन्ति २-७०
 प्रवृत्तः ११-३२
 प्रवृत्तिः १४-१२, १५-४, १८-४६
 प्रवृत्तिम् ११-३१, १४-२२, १६-७, १८-३०
 प्रवृत्ते १-२०
 प्रवृद्धः ११-३२
 प्रवृद्धे १४-१४
 प्रवेष्टुम् ११-५४
 प्रव्यथितम् ११-२०, ११-४५
 प्रव्यथिताः ११-२३
 प्रव्यथितान्तरात्मा ११-२४
 प्रशस्ते १७-२६
 प्रशान्तमनसम् ६-२७
 प्रशान्तस्य ६-७
 प्रशान्तात्मा ६-१४
 प्रसक्ताः १६-१६
 प्रसङ्गेन १८-३४
 प्रसन्नचेतसः २-६५
 प्रसन्नात्मा १८-५४
 प्रसन्नेन ११-४७
 प्रसभम् २-६०, ११-४१
 प्रसविष्यध्वम् ३-१०
 प्रसादः १७-१६
 प्रसादम् २-६४

प्रसादये ११-४४
 प्रसादात् १८-६२, १८-७३
 प्रसादे २-६५
 प्रसिद्धयेत् ३-८
 प्रसीद ११-२५, ११-३१, ११-४५
 प्रसृता १५-४
 प्रसृताः १५-२
 प्रहसन् २-१०
 प्रहास्यसि २-३९
 प्रहृष्यति ११-३६
 प्रहृष्येत् ५-२०
 प्रह्लादः १०-३०
 प्राकृतः १८-२८
 प्राक् ५-२३
 प्राञ्जलयः ११-२१
 प्राणकर्माणि ४-२७
 प्राणम् ४-२९, ८-१०, ८-१२
 प्राणान् १-३३, ४-३०
 प्राणापानगती ४-२९
 प्राणापानसमायुक्तः १५-१४
 प्राणापानौ ५-२७
 प्राणायामपरायणाः ४-२९
 प्राणिनाम् १५-१४
 प्राणे ४-२९
 प्राणेषु ४-३०
 प्राधान्यतः १०-१९

प्राप्तः १८-५०
 प्राप्तुयात् १८-७१
 प्राप्तुवन्ति १२-४
 प्राप्य २-५७, २-७२, ५-२०, ६-४१, ८-२१, ८-२५, ९-३३
 प्राप्यते ५-५
 प्राप्स्यसि २-३७, १८-६२
 प्राप्स्ये १६-१३
 प्रारभते १८-१५
 प्रार्थयन्ते ९-२०
 प्राह ४-१
 प्राहुः ६-२, १३-१, १५-१, १८-२, १८-३
 प्रियः ७-१७, ९-२९, ११-४४, १२-१४, १२-१५, १२-१६, १२-१७, १२-१९, १७-७, १८-६५
 प्रियकृत्तमः १८-६९
 प्रियचिकीर्षवः १-२३
 प्रियतरः १८-६९
 प्रियम् ५-२०
 प्रियहितम् १७-१५
 प्रिया: १२-२०
 प्रियाया: ११-४४
 प्रीतमना: ११-४९
 प्रीतिः १-३६
 प्रीतिपूर्वकम् १०-१०
 प्रीयमाणाय १०-१

प्रेतान् १७-४
 प्रेत्य १७-२८, १८-१२
 प्रोक्तः ४-३, ६-३३, १०-४०, १६-६
 प्रोक्तम् ८-१, १३-११, १७-१८, १८-३७
 प्रोक्तवान् ४-१, ४-४
 प्रोक्ता ३-३
 प्रोक्तानि १८-१३
 प्रोच्यते १८-१९
 प्रोच्यमानम् १८-२९
 प्रोतम् ७-७

फ

फलम् २-५१, ५-४, ७-२३, ९-२६, १४-१६, १७-१२, १७-२१, १७-२५, १८-९, १८-१२
 फलहेतवः २-४९
 फलाकाङ्क्षी १८-३४
 फलानि १८-६
 फले ५-१२
 फलेषु २-४७

ब

बत १-४५
 बद्धाः १६-१२
 बध्नाति १४-६
 बध्यते ४-१४

बन्धम् १८-३०
 बन्धात् ५-३
 बन्धुः ६-५, ६-६
 बन्धून् १-२७
 बभूव २-९
 बलम् १-१०, ७-११, १६-१८, १८-५३
 बलवताम् ७-११
 बलवत् ६-३४
 बलवान् १६-१४
 बलात् ३-३६
 बहवः १-९, ४-१०, ११-२८
 बहिः ५-२७
 बहिरन्तः १३-१५
 बहुदंष्ट्राकरालम् ११-२३
 बहुधा ९-१५, १३-४
 बहुना १०-४२
 बहुबाहूरुपादम् ११-२३
 बहुमतः २-३५
 बहुलायासम् १८-२४
 बहुवक्रनेत्रम् ११-२३
 बहुविधाः ४-३२
 बहुशाखाः २-४१
 बहूदरम् ११-२३
 बहूनाम् ७-१९

बहूनि ४-५, ११-६
 बहून् २-३६
 बालाः ५-४
 बाह्यस्पर्शेषु ५-२१
 बाह्यान् ५-२७
 विभर्ति १५-१७
 बीजप्रदः १४-४
 बीजम् ७-१०, ९-१८, १०-३९
 बुद्धयः २-४१, ५-१७
 बुद्धिः २-३९, २-४१, २-४४, २-५२, २-५३, २-६५, २-६६, ३-१, ३-४०, ३-४२, ५-२८, ७-४, ७-१०, १०-४, १३-५, १८-१७, १८-३०, १८-३१, १८-३२
 बुद्धिग्राह्यम् ६-२१
 बुद्धिनाशः २-६३
 बुद्धिनाशात् २-६३
 बुद्धिभेदम् ३-२६
 बुद्धिमताम् ७-१०
 बुद्धिमान् ४-१८, १५-२०
 बुद्धिम् ३-२, १२-८
 बुद्धियुक्तः २-५०
 बुद्धियुक्ताः २-५१
 बुद्धियोगम् १०-१०, १८-५७
 बुद्धियोगात् २-४९
 बुद्धिसंयोगम् ६-४३
 बुद्धेः ३-४२, ३-४३, १८-२९
 बुद्धौ २-४९

बुद्ध्या २-३९, ५-११, ६-२५, १८-५१
 बुद्धा ३-४३, १५-२०
 बुधः ५-२२
 बुधाः ४-१९, १०-८
 बृहत्साम १०-३५
 बृहस्पतिम् १०-२४
 बोद्धव्यम् ४-१७
 बोधयन्तः १०-९
 ब्रवीमि १-७
 ब्रवीषि १०-१३
 ब्रह्म ३-१५, ४-२४, ४-३१, ५-६, ५-१९, ७-२९,
 ८-१, ८-३, ८-१३, ८-२४, १०-१२, १३-१२,
 १३-३०, १४-३, १४-४, १८-५०
 ब्रह्मकर्म १८-४२
 ब्रह्मकर्मसमाधिना ४-२४
 ब्रह्मचर्यम् ८-११, १७-१४
 ब्रह्मचारित्रते ६-१४
 ब्रह्मणः ४-३२, ६-३८, ८-१७, ११-२७, १४-२७,
 १७-२३
 ब्रह्मणा ४-२४
 ब्रह्मणि ५-१०, ५-१९, ५-२०
 ब्रह्मनिर्वाणम् २-७२, ५-२४, ५-२५, ५-२६
 ब्रह्मभूतः ५-२४, १८-५४
 ब्रह्मभूतम् ६-२७
 ब्रह्मभूयाय १४-२६, १८-५३

ब्रह्मयोगयुक्तात्मा ५-२१
 ब्रह्मवादिनाम् १७-२४
 ब्रह्मवित् ५-२०
 ब्रह्मविदः ८-२४
 ब्रह्मसंस्पर्शम् ६-२८
 ब्रह्मसूत्रपदैः १३-४
 ब्रह्माग्नौ ४-२४, ४-२५
 ब्रह्माणम् ११-१५
 ब्रह्मार्पणम् ४-२४
 ब्रह्मोद्भवम् ३-१५
 ब्राह्मणक्षत्रियविशाम् १८-४१
 ब्राह्मणस्य २-४६
 ब्राह्मणाः ९-३३, १७-२३
 ब्राह्मणे ५-१८
 ब्राह्मी २-७२
 ब्रूहि २-७, ५-१

भ

भक्तः ४-३, ७-२१, ९-३१
 भक्ताः ९-३३, १२-१, १२-२०
 भक्तिः १३-१०
 भक्तिमान् १२-१७, १२-१९
 भक्तिम् १८-६८
 भक्तियोगेन १४-२६
 भक्त्या ८-१०, ८-२२, ९-१४, ९-२६, ९-२९, ११-
 ५४, १८-५५

भक्त्युपहृतम् ९-२६
 भगवन् १०-१४, १०-१७
 भजताम् १०-१०
 भजति ६-३१, १५-१९
 भजते ६-४७, ९-३०
 भजन्ति ९-१३, ९-२९
 भजन्ते ७-१६, ७-२८, १०-८
 भजस्व ९-३३
 भजामि ४-११
 भयम् १०-४, १८-३५
 भयात् २-३५, २-४०
 भयानकानि ११-२७
 भयाभये १८-३०
 भयावहः ३-३५
 भयेन ११-४५
 भरतर्षभ ३-४१, ७-११, ७-१६, ८-२३, १३-२६,
 १४-१२, १८-३६
 भरतश्रेष्ठ १७-१२
 भरतसत्तम १८-४
 भर्ता ९-१८, १३-२२
 भव २-४५, ६-४६, ८-२७, ९-३४, ११-२, ११-
 ३३, ११-४६, १२-१०, १८-५७, १८-६५
 भवः १०-४
 भवतः ४-४, १४-१७

भवति १-४४, २-६३, ३-१४, ४-७, ४-१२, ६-
 २, ६-१७, ६-४२, ७-२३, ९-३१, १४-३,
 १४-१०, १४-२१, १७-२, १७-३, १७-७,
 १८-१२
 भवन्तः १-११
 भवन्तम् ११-३१
 भवन्ति ३-१४, १०-५, १६-३
 भवानुग्रहूपः ११-३१
 भवान् १-८, १०-१२
 भवामि १२-७
 भविता २-२०, १८-६९
 भविष्यताम् १०-३४
 भविष्यति १६-१३
 भविष्यन्ति ११-३२
 भविष्याणि ७-२६
 भविष्यामः २-१२
 भवेत् १-४६, ११-१२
 भस्मसात् ४-३७
 भाः ११-१२
 भारत १-२४, २-१०, २-१४, २-२८, २-
 ३०, ३-२५, ४-७, ४-४२, ७-२७, ११-
 ६, १३-२, १३-३३, १४-३, १४-८, १४-९,
 १४-१०, १५-१९, १५-२०, १६-३, १७-३,
 १८-६२
 भावः २-१६, ८-४, ८-२०, १८-१७
 भावना २-६६
 भावभावितः ८-६

भावम् ७-१५, ७-२४, ८-६, ९-११, १८-२०
 भावयत ३-११
 भावयन्तः ३-११
 भावयन्तु ३-११
 भावसंशुद्धिः १७-१६
 भावसमन्विताः १०-८
 भावाः ७-१२, १०-५
 भावेषु १०-१७
 भावैः ७-१३
 भाषसे २-११
 भाषा २-५४
 भासः ११-१२, ११-३०
 भासयते १५-६, १५-१२
 भास्वता १०-११
 भिन्ना ७-४
 भीतभीतः ११-३५
 भीतम् ११-५०
 भीताः ११-२१
 भीतानि ११-३६
 भीमकर्मा १-१५
 भीमाभिरक्षितम् १-१०
 भीमार्जुनसमाः १-४
 भीष्मः १-८, ११-२६
 भीष्मद्रोणप्रमुखतः १-२५

भीष्मम् १-११, २-४, ११-३४
 भीष्माभिरक्षितम् १-१०
 भुत्त्वा ९-२१
 भुङ्गे ३-१२, १३-२१
 भुद्ध्व ११-३३
 भुञ्जते ३-१३
 भुञ्जानम् १५-१०
 भुञ्जीय २-५
 भुवि १८-६९
 भूः २-४७
 भूतगणान् १७-४
 भूतग्रामः ८-१९
 भूतग्रामम् ९-८, १७-६
 भूतपृथगभावम् १३-३०
 भूतप्रकृतिमोक्षम् १३-३४
 भूतभर्तृ १३-१६
 भूतभावन १०-१५
 भूतभावनः ९-५
 भूतभावोद्भवकरः ८-३
 भूतभृत् ९-५
 भूतमहेश्वरम् ९-११
 भूतम् १०-३९
 भूतविशेषसङ्घान् ११-१५
 भूतसर्गौ १६-६
 भूतस्थः ९-५
 भूतादिम् ९-१३

भूतानाम् ४-६, १०-५, १०-२०, १०-२२, ११-२,
 १३-१५, १८-४६
 भूतानि २-२८, २-३०, २-३४, २-६९, ३-१४, ३-
 ३३, ४-३५, ७-६, ७-२६, ८-२२, ९-५,
 ९-६, ९-२५, १५-१३, १५-१६
 भूतिः १८-७८
 भूतेज्या: ९-२५
 भूतेश १०-१५
 भूतेषु ७-११, ८-२०, १३-१६, १३-२७, १६-२,
 १८-२१, १८-५४
 भूत्वा २-२०, २-३५, २-४८, ३-३०, ८-१९, ११-
 ५०, १५-१३, १५-१४
 भूमिः ७-४
 भूमौ २-८
 भूयः २-२०, ६-४३, ७-२, १०-१, १०-१८, ११-
 ३५, ११-३९, ११-५०, १३-२३, १४-१, १५-
 ४, १८-६४
 भृगुः १०-२५
 भेदम् १७-७, १८-२९
 भेर्यः १-१३
 भैक्ष्यम् २-५
 भोक्ता ९-२४, १३-२२
 भोक्तारम् ५-२९
 भोक्तुम् २-५
 भोक्तृत्वे १३-२०
 भोक्ष्यसे २-३७
 भोगाः १-३३, ५-२२

भोगान् २-५, ३-१२
 भोगी १६-१४
 भोगैः १-३२
 भोगैश्वर्यगतिम् २-४३
 भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम् २-४४
 भोजनम् १७-१०
 भ्रमति १-३०
 भ्रातृन् १-२६
 भ्रामयन् १८-६१
 भ्रुवोः ५-२७, ८-१०

म

मंस्यन्ते २-३५
 मकरः १०-३१
 मच्चित्तः ६-१४, १८-५७, १८-५८
 मच्चित्ताः १०-९
 मणिगणाः ७-७
 मतः ६-३२, ६-४६, ६-४७, ११-१८, १८-९
 मतम् ३-३१, ३-३२, ७-१८, १३-२, १८-६
 मता ३-१, १६-५
 मताः १२-२
 मतिः ६-३६, १८-७०, १८-७८
 मते ८-२६
 मत्कर्मकृत् ११-५५
 मत्कर्मपरमः १२-१०

मत्तः ७-७, ७-१२, १०-५, १०-८, १५-१५

मत्परः २-६१, ६-१४, १८-५७

मत्परमः ११-५५

मत्परमा: १२-२०

मत्परा: १२-६

मत्परायणः ९-३४

मत्प्रसादात् १८-५६, १८-५८

मत्वा ३-२८, १०-८, ११-४१

मत्संस्थाम् ६-१५

मत्स्थानि ९-४, ९-५, ९-६

मदनुग्रहाय ११-१

मदम् १८-३५

मदर्थम् १२-१०

मदर्थे १-९

मदर्पणम् ९-२७

मदाश्रयः ७-१

मदूतप्राणाः १०-९

मदूतेन ६-४७

मद्भक्तः ९-३४, ११-५५, १२-१४, १२-१६, १३-१८, १८-६५

मद्भक्ताः ७-२३

मद्भक्तिम् १८-५४

मद्भक्तेषु १८-६८

मद्भावम् ४-१०, ८-५, १४-१९

मद्भावाः १०-६

मद्भावाय १३-१८

मद्याजिनः ९-२५

मद्याजी ९-३४, १८-६५

मद्योगम् १२-११

मद्यव्यपाश्रयः १८-५६

मधुसूदन १-३५, २-४, ६-३३, ८-२

मधुसूदनः २-१

मध्यम् १०-२०, १०-३२, ११-१६

मध्ये १-२१, २-१०, ८-१०, १४-१८

मनः १-३०, २-६०, २-६७, ३-४०, ३-४२, ५-१९, ६-१२, ६-१४, ६-२५, ६-२६, ६-३४, ६-३५, ७-४, ८-१२, १०-२२, ११-४५, १२-२, १२-८, १५-९, १७-११, १७-१६

मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः १८-३३

मनःषष्ठानीन्द्रियाणि १५-७

मनवः १०-६

मनवे ४-१

मनसः ३-४२

मनसा ३-६, ३-७, ५-११, ५-१३, ६-२४, ८-१०

मनीषिणः २-५१, १८-३

मनीषिणाम् १८-५

मनुः ४-१

मनुष्यलोके १५-२

मनुष्याः ३-२३, ४-११

मनुष्याणाम् १-४४, ७-३

मनुष्येषु ४-१८, १८-६९

मनोगतान् २-५५
 मनोरथम् १६-१३
 मन्तव्यः ९-३०
 मन्त्रः ९-१६
 मन्त्रहीनम् १७-१३
 मन्दान् ३-२९
 मन्मनाः ९-३४, १८-६५
 मन्मया: ४-१०
 मन्यते २-१९, ३-२७, ६-२२, १८-३२
 मन्यन्ते ७-२४
 मन्यसे २-२६, ११-४, १८-५९
 मन्ये ६-३४, १०-१४
 मन्येत ५-८
 मम १-७, १-२९, २-८, ३-२३, ४-११, ७-१४,
 ७-१७, ७-२४, ८-२१, ९-५, ९-११, १०-
 ७, १०-४०, १०-४१, ११-१, ११-७, ११-
 ४९, ११-५२, १३-२, १४-२, १४-३, १५-६,
 १५-७, १८-७८
 मया १-२२, ३-३, ४-३, ४-१३, ७-२२, ९-४,
 ९-१०, १०-१७, १०-३९, १०-४०, ११-२,
 ११-४, ११-३३, ११-३४, ११-४१, ११-४७,
 १५-२०, १६-१३, १६-१४, १६-१५, १८-६३,
 १८-७३
 मयि ३-३०, ४-३५, ६-३०, ६-३१, ७-१, ७-७,
 ७-१२, ८-७, ९-२९, १२-२, १२-६, १२-७,
 १२-८, १२-९, १२-१४, १३-१०, १८-५७,
 १८-६८
 मरणात् २-३४

मरीचिः १०-२१
 मरुतः ११-६, ११-२२
 मरुताम् १०-२१
 मर्त्यलोकम् ९-२१
 मर्त्येषु १०-३
 मलेन ३-३८
 महतः २-४०
 महता ४-२
 महति १-१४
 महतीम् १-३
 महत् ११-२३, १४-३, १४-४
 महत्पापम् १-४५
 महर्षयः १०-२, १०-६
 महर्षिसिद्धसङ्घाः ११-२१
 महर्षीणाम् १०-२, १०-२५
 महात्मनः ११-१२, १८-७४
 महात्मन् ११-२०, ११-३७
 महात्मा ७-१९, ११-५०
 महात्मानः ८-१५, ९-१३
 महानुभावान् २-५
 महान् ९-६, १८-७७
 महापाप्मा ३-३७
 महाबाहुः १-१८
 महाबाहो २-२६, २-६८, ३-२८, ३-४३, ५-३, ५-
 ६, ६-३५, ६-३८, ७-५, १०-१, ११-२३,
 १४-५, १८-१, १८-१३

महाभूतानि १३-५
 महायोगेश्वरः ११-९
 महारथः १-४, १-१७
 महारथाः १-६, २-३५
 महाशङ्खम् १-१५
 महाशनः ३-३७
 महिमानम् ११-४१
 महीकृते १-३५
 महीक्षिताम् १-२५
 महीपते १-२१
 महीम् २-३७
 महेश्वरः १३-२२
 महेष्वासाः १-४
 मा २-३, २-४७, ११-३४, ११-४९, १६-५, १८-६६
 माता ९-१७
 मातुलाः १-३४
 मातुलान् १-२६
 मात्रास्पर्शाः २-१४
 माधव १-३७
 माधवः १-१४
 मानवः ३-१७, १८-४६
 मानवाः ३-३१
 मानसम् १७-१६
 मानसाः १०-६

मानापमानयोः ६-७, १२-१८, १४-२५
 मानुषम् ११-५१
 मानुषीम् ९-११
 मानुषे ४-१२
 मामकम् १५-१२
 मामकाः १-१
 मामिकाम् ९-७
 माम् १-४६, २-७, ३-१, ४-९, ४-१०, ४-११, ४-१३, ४-१४, ५-२९, ६-३०, ६-३१, ६-४७, ७-१, ७-३, ७-१०, ७-१३, ७-१४, ७-१५, ७-१६, ७-१८, ७-१९, ७-२३, ७-२४, ७-२५, ७-२६, ७-२८, ७-२९, ७-३०, ८-५, ८-७, ८-१३, ८-१४, ८-१५, ८-१६, ९-३, ९-९, ९-११, ९-१३, ९-१४, ९-१५, ९-२०, ९-२२, ९-२३, ९-२४, ९-२५, ९-२८, ९-२९, ९-३०, ९-३२, ९-३३, ९-३४, १०-३, १०-८, १०-९, १०-१०, १०-१४, १०-२४, १०-२७, ११-८, ११-५३, ११-५५, १२-२, १२-४, १२-६, १२-९, १३-२, १४-२६, १५-१९, १६-१८, १६-२०, १७-६, १८-५५, १८-६५, १८-६६, १८-६७, १८-६८
 मायया ७-१५, १८-६१
 माया ७-१४
 मायाम् ७-१४
 मारुतः २-२३
 मार्गशीर्षः १०-३५
 मार्दवम् १६-२
 मासानाम् १०-३५
 माहात्म्यम् ११-२
 मित्रद्रोहे १-३८

मित्रारिपक्षयोः १४-२५

मित्रे १२-१८

मिथ्या १८-५९

मिथ्याचारः ३-६

मिश्रम् १८-१२

मुक्तः ५-२८, १२-१५, १८-७१

मुक्तम् १८-४०

मुक्तसङ्गः ३-९, १८-२६

मुक्तस्य ४-२३

मुक्तवा ८-५

मुखम् १-२९

मुखानि ११-२५

मुखे ४-३२

मुख्यम् १०-२४

मुच्यन्ते ३-१३, ३-३१

मुनयः १४-१

मुनिः २-५६, ५-६, ५-२८, १०-२६

मुनीनाम् १०-३७

मुनेः २-६९, ६-३

मुमुक्षुभिः ४-१५

मुहुः १८-७६

मुद्घति २-१३, ८-२७

मुद्घन्ति ५-१५

मूढः ७-२५

मूढग्राहेण १७-१९

मूढयोनिषु १४-१५

मूढाः ७-१५, ९-११, १६-२०

मूर्तयः १४-४

मूर्धि ८-१२

मूलानि १५-२

मृगाणाम् १०-३०

मृगेन्द्रः १०-३०

मृतम् २-२६

मृतस्य २-२७

मृत्युः २-२७, ९-१९, १०-३४

मृत्युम् १३-२५

मृत्युसंसारवर्त्मनि ९-३

मृत्युसंसारसागरात् १२-७

मे १-२१, १-२९, १-३०, १-४६, २-७, ३-२, ३-२२, ३-३१, ३-३२, ४-३, ४-५, ४-९, ४-१४, ५-१, ६-३०, ६-३६, ६-३९, ६-४७, ७-४, ७-५, ७-१८, ९-५, ९-२६, ९-२९, ९-३१, १०-१, १०-२, १०-१३, १०-१८, १०-१९, ११-४, ११-५, ११-८, ११-१८, ११-२१, ११-४५, ११-४७, ११-४९, १२-२, १२-१४, १२-१५, १२-१६, १२-१७, १२-१९, १२-२०, १३-३, १६-६, १६-१३, १८-४, १८-६, १८-१३, १८-३६, १८-५०, १८-६४, १८-६५, १८-६९, १८-७०, १८-७७

मेधा १०-३४

मेधावी १८-१०

मेरुः १०-२३

मैत्रः १२-१३

मोक्षकाङ्गभिः १७-२५

मोक्षपरायणः ५-२८

मोक्षम् १८-३०

मोक्षयिष्यामि १८-६६

मोक्ष्यसे ४-१६, ९-१, ९-२८

मोघकर्मणः ९-१२

मोघज्ञानाः ९-१२

मोघम् ३-१६

मोघाशाः ९-१२

मोदिष्ये १६-१५

मोहः ११-१, १४-१३, १८-७३

मोहकलिलम् २-५२

मोहजालसमावृताः १६-१६

मोहनम् १४-८, १८-३९

मोहम् ४-३५, १४-२२

मोहयसि ३-२

मोहात् १६-१०, १८-७, १८-२५, १८-६०

मोहितम् ७-१३

मोहिताः ४-१६

मोहिनीम् ९-१२

मौनम् १०-३८, १७-१६

मौनी १२-१९

मियते २-२०

य

यः २-१९, २-२१, २-५७, २-७१, ३-६, ३-७,
३-१२, ३-१६, ३-१७, ३-४२, ४-९, ४-१४,
४-१८, ५-३, ५-५, ५-१०, ५-२३, ५-२४,
५-२८, ६-१, ६-३०, ६-३१, ६-३२, ६-३३,
६-४७, ७-२१, ८-५, ८-९, ८-१३, ८-१४,
८-२०, ९-२६, १०-३, १०-७, ११-५५, १२-
१४, १२-१५, १२-१६, १२-१७, १३-१, १३-३,
१३-२३, १३-२७, १३-२९, १४-२३, १४-२६,
१५-१, १५-१७, १५-१९, १६-२३, १७-३,
१७-११, १८-११, १८-१६, १८-५५, १८-
६७, १८-६८, १८-७०, १८-७१

यक्षरक्षसाम् १०-२३

यक्षरक्षांसि १७-४

यक्ष्ये १६-१५

यजन्तः ९-१५

यजन्ति ९-२३

यजन्ते ४-१२, ९-२३, १६-१७, १७-१, १७-४

यज्ञुः ९-१७

यज्ञः ३-१४, ९-१६, १६-१, १७-७, १७-११, १८-५

यज्ञक्षपितकलमषाः ४-३०

यज्ञतपःक्रियाः १७-२५

यज्ञतपसाम् ५-२९

यज्ञदानतपःकर्म १८-३, १८-५

यज्ञदानतपःक्रियाः १७-२४

यज्ञभाविताः ३-१२

यज्ञम् ४-२५, १७-१२, १७-१३
 यज्ञविदः ४-३०
 यज्ञशिष्टामृतभुजः ४-३१
 यज्ञशिष्टाशिनः ३-१३
 यज्ञाः ४-३२, १७-२३
 यज्ञात् ३-१४, ४-३३
 यज्ञानाम् १०-२५
 यज्ञाय ४-२३
 यज्ञार्थात् ३-९
 यज्ञे ३-१५, १७-२७
 यज्ञेन ४-२५
 यज्ञेषु ८-२८
 यज्ञैः ९-२०
 यतः ६-२६, १३-३, १५-४, १८-४६
 यतचित्तस्य ६-१९
 यतचित्तात्मा ४-२१, ६-१०
 यतचित्तेन्द्रियक्रियः ६-१२
 यतचेतसाम् ५-२६
 यततः २-६०
 यतता ६-३६
 यतताम् ७-३
 यतति ७-३
 यतते ६-४३
 यतन्तः ९-१४, १५-११

यतन्ति ७-२९
 यतमानः ६-४५
 यतयः ४-२८, ८-११
 यतवाक्यायमानसः १८-५२
 यतात्मवान् १२-११
 यतात्मा १२-१४
 यतात्मानः ५-२५
 यतीनाम् ५-२६
 यतेन्द्रियमनः ५-२८
 यत् १-४५, २-६, २-७, २-८, २-६७, ३-२१,
 ४-१६, ४-३५, ५-१, ५-५, ५-२१, ६-२१,
 ६-४२, ७-२, ८-११, ८-१७, ८-२८, ९-१,
 ९-२७, १०-१, १०-१४, १०-३९, १०-४१,
 ११-१, ११-७, ११-२७, ११-४१, ११-४२,
 ११-४७, ११-५२, १३-२, १३-३, १३-११, १३-
 १२, १४-१, १५-६, १५-८, १५-१२, १७-३,
 १७-१०, १७-१२, १७-१५, १७-१८, १७-
 १९, १७-२०, १७-२१, १७-२२, १७-२८,
 १८-८, १८-९, १८-१५, १८-२१, १८-२२,
 १८-२३, १८-२४, १८-२५, १८-३७, १८-
 ३८, १८-३९, १८-४०, १८-५९, १८-६०
 यत्र ६-२०, ६-२१, ८-२३, १८-३६, १८-७८
 यथा २-१३, २-२२, ३-२५, ३-३८, ४-११, ४-३७,
 ६-१९, ७-१, ९-६, ११-३, ११-२८, ११-२९,
 ११-५३, १२-२०, १३-३२, १३-३३, १८-४५,
 १८-५०, १८-६३
 यथाभागम् १-११
 यथावत् १८-१९
 यदा २-५२, २-५३, २-५५, २-५८, ४-७, ६-४,
 ६-१८, १३-३०, १४-११, १४-१४, १४-१९

यदि १-३८, १-४६, २-६, ३-२३, ६-३२, ११-४,
 ११-१२
 यद्वच्छया २-३२
 यद्वच्छालाभसन्तुष्टः ४-२२
 यद्वत् २-७०
 यन्त्रारूढानि १८-६१
 यमः १०-२९, ११-३९
 यम् २-१५, २-७०, ६-२, ६-२२, ८-६, ८-२१
 यया २-३९, ७-५, १८-३१, १८-३३, १८-३४, १८-
 ३५
 यशः १०-५, ११-३३
 यष्टव्यम् १७-११
 यस्मात् १२-१५, १५-१८
 यस्मिन् ६-२२, १५-४
 यस्य २-६१, २-६८, ४-१९, ८-२२, १५-१, १८-
 १७
 यस्याम् २-६९
 या २-६९, १८-३०, १८-३२, १८-५०
 याः १४-४
 यातयामम् १७-१०
 याति ६-४५, ८-५, ८-८, ८-१३, ८-२६, १३-२८,
 १४-१४, १६-२२
 यादव ११-४१
 यादसाम् १०-२९
 याद्वक् १३-३
 यान् २-६

यान्ति ३-३३, ४-३१, ७-२३, ७-२७, ८-२३, ९-
 ७, ९-२५, ९-३२, १३-३४, १६-२०
 याभिः १०-१६
 याम् २-४२, ७-२१
 यावत् १-२२, १३-२६
 यावान् २-४६, १८-५५
 यास्यसि २-३५, ४-३५
 युक्तः २-३९, २-६१, ३-२६, ४-१८, ५-८, ५-१२,
 ५-२३, ६-८, ६-१४, ६-१८, ७-२२, ८-१०,
 १८-५१
 युक्तचेतसः ७-३०
 युक्तचेष्टस्य ६-१७
 युक्ततमः ६-४७
 युक्ततमाः १२-२
 युक्तस्वभावबोधस्य ६-१७
 युक्तात्मा ७-१८
 युक्ताहारविहारस्य ६-१७
 युक्ते १-१४
 युक्तैः १७-१७
 युक्त्वा ९-३४
 युगपत् ११-१२
 युगसहस्रान्ताम् ८-१७
 युगे ४-८
 युज्यते १०-७, १७-२६
 युज्यस्व २-३८, २-५०
 युञ्जतः ६-१९

युज्जन् ६-१५, ६-२८, ७-१

युज्जीत ६-१०

युज्ज्यात् ६-१२

युद्धम् २-३२

युद्धविशारदाः १-९

युद्धात् २-३१

युद्धाय २-३७, २-३८

युद्धे १-२३, १-३३, १८-४३

युधामन्युः १-६

युधि १-४

युधिष्ठिरः १-१६

युध्य ८-७

युध्यस्व २-१८, ३-३०, ११-३४

युयुत्सवः १-१

युयुत्सुम् १-२८

युयुधानः १-४

ये १-७, १-२३, ३-१३, ३-३१, ३-३२, ४-११, ५-२२, ७-१२, ७-१४, ७-२९, ७-३०, ९-२२, ९-२३, ९-२९, ९-३२, ११-२२, ११-३२, १२-१, १२-२, १२-३, १२-६, १२-२०, १३-३४, १७-१, १७-५

येन २-१७, ३-२, ४-३५, ६-६, ८-२२, १०-१०, १२-१९, १८-२०, १८-४६

येषाम् १-३३, २-३५, ५-१६, ५-१९, ७-२८, १०-६

योक्तव्यः ६-२३

योगः २-४८, २-५०, ४-२, ४-३, ६-१६, ६-१७, ६-२३, ६-३३, ६-३६

योगक्षेमम् ९-२२

योगधारणाम् ८-१२

योगबलेन ८-१०

योगभ्रष्टः ६-४१

योगमायासमावृतः ७-२५

योगम् २-५३, ४-१, ४-४२, ५-१, ५-५, ६-२, ६-३, ६-१२, ६-१९, ७-१, ९-५, १०-७, १०-१८, ११-८, १८-७५

योगयज्ञाः ४-२८

योगयुक्तः ५-६, ५-७, ८-२७

योगयुक्तात्मा ६-२९

योगवित्तमाः १२-१

योगसंज्ञितम् ६-२३

योगसंसिद्धः ४-३८

योगसंसिद्धिम् ६-३७

योगसन्ध्यस्तकर्माणम् ४-४१

योगसेवया ६-२०

योगस्थः २-४८

योगस्य ६-४४

योगात् ६-३७

योगाय २-५०

योगारूढः ६-४

योगारूढस्य ६-३

योगिनः ४-२५, ५-११, ६-१९, ८-१४, ८-२३, १५-११

र

योगिनम् ६-२७
 योगिनाम् ३-३, ६-४२, ६-४७
 योगिन् १०-१७
 योगी ५-२४, ६-१, ६-२, ६-८, ६-१०, ६-१५, ६-२८, ६-३१, ६-३२, ६-४५, ६-४६, ८-२५, ८-२७, ८-२८, १२-१४
 योगे २-३९
 योगेन १०-७, १२-६, १३-२४, १८-३३
 योगेश्वर ११-४
 योगेश्वरः १८-७८
 योगेश्वरात् १८-७५
 योगैः ५-५
 योत्स्यमानान् १-२३
 योत्स्ये २-९, १८-५९
 योद्घव्यम् १-२२
 योद्गुकामान् १-२२
 योधमुख्यैः ११-२६
 योधवीरान् ११-३४
 योधाः ११-३२
 योनिः १४-३, १४-४
 योनिम् १६-२०
 योनिषु १६-१९
 योनीनि ७-६
 यौवनम् २-१३

रक्षांसि ११-३६
 रजः ३-३७, १४-५, १४-७, १४-९, १४-१०, १७-१
 रजसः १४-१६, १४-१७
 रजसि १४-१२, १४-१५
 रणसमुद्यमे १-२२
 रणात् २-३५
 रणे १-४६, ११-३४
 रताः ५-२५, १२-४
 रथम् १-२१
 रथोत्तमम् १-२४
 रथोपस्थे १-४७
 रमते ५-२२, १८-३६
 रमन्ति १०-९
 रविः १०-२१, १३-३३
 रसः २-५९, ७-८
 रसनम् १५-९
 रसवर्जम् २-५९
 रसात्मकः १५-१३
 रस्याः १७-८
 रहसि ६-१०
 रहस्यम् ४-३
 राक्षसीम् ९-१२
 रागद्वेषविमुक्तैः २-६४

रागद्वेषौ ३-३४, १८-५१
रागात्मकम् १४-७
रागी १८-२७
राजगुह्यम् ९-२
राजन् ११-९, १८-७६, १८-७७
राजर्षयः ४-२, ९-३३
राजविद्या ९-२
राजसः १८-२७
राजसम् १७-१२, १७-१८, १७-२१, १८-८, १८-२१, १८-२४, १८-३८
राजसस्य १७-९
राजसाः ७-१२, १४-१८, १७-४
राजसी १७-२, १८-३१, १८-३४
राजा १-२, १-१६
राज्यम् १-३२, १-३३, २-८, ११-३३
राज्यसुखलोभेन १-४५
राज्येन १-३२
रात्रिः ८-२५
रात्रिम् ८-१७
रात्र्यागमे ८-१८, ८-१९
राधनम् ७-२२
रामः १०-३१
रिपुः ६-५
रुद्धा ४-२९
रुद्राणाम् १०-२३

रुद्रादित्याः ११-२२
रुद्रान् ११-६
रुधिरप्रदिग्धान् २-५
रूपः ११-४८
रूपम् ११-३, ११-९, ११-२०, ११-२३, ११-४५, ११-४७, ११-४९, ११-५०, ११-५१, ११-५२, १५-३, १८-७७
रूपस्य ११-५२
रूपाणि ११-५
रूपेण ११-४६
रोमहर्षः १-२९
रोमहर्षणम् १८-७४

ल

लघ्वाशी १८-५२
लब्धम् १६-१३
लब्धा १८-७३
लब्ध्वा ४-३९, ६-२२
लभते ४-३९, ६-४३, ७-२२, १८-४५, १८-५४
लभन्ते २-३२, ५-२५, ९-२१
लभस्व ११-३३
लभे ११-२५
लभेत् १८-८
लभ्यः ८-२२
लाघवम् २-३५

लाभम् ६-२२

लाभालाभौ २-३८

लिङ्गः १४-२१

लिप्यते ५-७, ५-१०, १३-३१, १८-१७

लिम्पन्ति ४-१४

लुप्तिण्डोदकक्रियाः १-४२

लुब्धः १८-२७

लेलिह्यसे ११-३०

लोकः ३-९, ३-२१, ४-३१, ४-४०, ७-२५, १२-१५

लोकक्षयकृत् ११-३२

लोकत्रयम् ११-२०, १५-१७

लोकत्रये ११-४३

लोकमहेश्वरम् १०-३

लोकम् ९-३३, १३-३३

लोकसञ्ज्ञहम् ३-२०, ३-२५

लोकस्य ५-१४, ११-४३

लोकाः ३-२४, ८-१६, ११-२३, ११-२९

लोकात् १२-१५

लोकान् ६-४१, १०-१६, ११-३०, ११-३२, १४-१४, १८-१७, १८-७१

लोके २-५, ३-३, ४-१२, ६-४२, १०-६, १३-१३, १५-१६, १५-१८, १६-६

लोकेषु ३-२२

लोभः १४-१२, १४-१७, १६-२१

लोभोपहतचेतसः १-३८

व

वः ३-१०, ३-११, ३-१२

वक्तुम् १०-१६

वक्राणि ११-२७, ११-२८, ११-२९

वक्ष्यामि ७-२, ८-२३, १०-१, १८-६४

वचः २-१०, १०-१, ११-१, १८-६४

वचनम् १-२, ११-३५, १८-७३

वज्रम् १०-२८

वद ३-२

वदति २-२९

वदनैः ११-३०

वदन्ति ८-११

वदसि १०-१४

वदिष्यन्ति २-३६

वयम् १-३७, १-४५, २-१२

वर ८-४

वरुणः १०-२९, ११-३९

वर्णसङ्करः १-४१

वर्णसङ्करकारकैः १-४३

वर्तते ५-२६, ६-३१, १६-२३

वर्तन्ते ३-२८, ५-९, १४-२३

वर्तमानः ६-३१, १३-२३

वर्तमानानि ७-२६

वर्ते ३-२२
 वर्तत ६-६
 वर्तयम् ३-२३
 वर्त्म ३-२३, ४-११
 वर्षम् ९-१९
 वशम् ३-३४, ६-२६
 वशात् ९-८
 वशी ५-१३
 वशे २-६१
 वश्यात्मना ६-३६
 वसवः ११-२२
 वसूनाम् १०-२३
 वसून् ११-६
 वहामि ९-२२
 वहिः ३-३८
 वा १-३२, २-६, २-२०, २-२६, २-२७, ६-३२,
 ८-६, १०-४१, ११-४१, १५-१०, १७-१९,
 १७-२१, १८-१५, १८-२४, १८-४०
 वाक् १०-३४
 वाक्यम् १-२१, २-१, १७-१५
 वाक्येन ३-२
 वाङ्मयम् १७-१५
 वाचम् २-४२
 वाच्यम् १८-६७
 वादः १०-३२

वादिनः २-४२
 वायुः २-६७, ७-४, ९-६, ११-३९, १५-८
 वायोः ६-३४
 वार्ण्ण्य १-४१, ३-३६
 वासः १-४४
 वासवः १०-२२
 वासांसि २-२२
 वासुकिः १०-२८
 वासुदेवः ७-१९, १०-३७, ११-५०
 वासुदेवस्य १८-७४
 विकम्पितुम् २-३१
 विकर्णः १-८
 विकर्मणः ४-१७
 विकारान् १३-१९
 विकारि १३-३
 विक्रान्तः १-६
 विगतः ११-१
 विगतकल्पः ६-२८
 विगतज्वरः ३-३०
 विगतभीः ६-१४
 विगतस्पृहः २-५६, १८-४९
 विगतेच्छाभयक्रोधः ५-२८
 विगुणः ३-३५, १८-४७
 विचक्षणाः १८-२
 विचालयेत् ३-२९

विचाल्यते ६-२२, १४-२३

विचेतसः ९-१२

विजयः १८-७८

विजयम् १-३२

विजानतः २-४६

विजानीतः २-१९

विजानीयाम् ४-४

विजितात्मा ५-७

विजितेन्द्रियः ६-८

विज्ञातुम् ११-३१

विज्ञानम् १८-४२

विज्ञानसहितम् ९-१

विज्ञाय १३-१८

वितताः ४-३२

वित्तेशः १०-२३

विदधामि ७-२१

विदितात्मनाम् ५-२६

विदित्वा २-२५, ८-२८

विदुः ४-२, ७-२९, ७-३०, ८-१७, १०-२, १०-४, १३-३४, १६-७, १८-२

विद्धि २-१७, ३-१५, ३-३२, ३-३७, ४-१३, ४-३२, ४-३४, ६-२, ७-५, ७-१०, ७-१२, १०-२४, १०-२७, १३-२, १३-१९, १३-२६, १४-७, १४-८, १५-१२, १७-६, १७-१२, १८-२०, १८-२१

विद्मः २-६

विद्यते २-१६, २-३१, २-४०, ३-१७, ४-३८, ६-४०, ८-१६, १६-७

विद्यात् ६-२३, १४-११

विद्यानाम् १०-३२

विद्याम् १०-१७

विद्याविनयसम्पन्ने ५-१८

विद्वान् ३-२५, ३-२६

विधः ११-५३, ११-५४

विधानोक्ताः १७-२४

विधिदृष्टः १७-११

विधिहीनम् १७-१३

विधीयते २-४४

विधेयात्मा २-६४

विनङ्गसि १८-५८

विनद्य १-१२

विनश्यति ४-४०, ८-२०

विनश्यत्सु १३-२७

विना १०-३९

विनाशः ६-४०

विनाशम् २-१७

विनाशाय ४-८

विनियतम् ६-१८

विनियम्य ६-२४

विनिवर्तन्ते २-५९

विनिवृत्तकामाः १५-५

विनिश्चितैः १३-४

विन्दिति ४-३८, ५-२१, १८-४५, १८-४६
 विन्दते ५-४
 विन्दामि ११-२४
 विपरिवर्तते ९-१०
 विपरीतम् १८-१५
 विपरीतानि १-३१
 विपरीतान् १८-३२
 विपश्चितः २-६०
 विभक्तम् १३-१६
 विभक्तेषु १८-२०
 विभावसौ ७-९
 विभुः ५-१५
 विभुम् १०-१२
 विभूतिभिः १०-१६
 विभूतिमत् १०-४१
 विभूतिम् १०-७, १०-१८
 विभूतीनाम् १०-४०
 विभूतेः १०-४०
 विमत्सरः ४-२२
 विमुक्तः ९-२८, १४-२०, १६-२२
 विमुक्ता: १५-५
 विमुच्य १८-५३
 विमुञ्चति १८-३५
 विमुह्यति २-७२

विमूढः ६-३८
 विमूढभावः ११-४९
 विमूढाः १५-१०
 विमूढात्मा ३-६
 विमृश्य १८-६३
 विमोक्षाय १६-५
 विमोक्ष्यसे ४-३२
 विमोहयति ३-४०
 विराटः १-४, १-१७
 विलग्ना: ११-२७
 विवस्वतः ४-४
 विवस्वते ४-१
 विवस्वान् ४-१
 विविक्तदेशसेवित्वम् १३-१०
 विविक्तसेवी १८-५२
 विविधाः १७-२५, १८-१४
 विविधैः १३-४
 विवृद्धम् १४-११
 विवृद्धे १४-१२, १४-१३
 विशते १८-५५
 विशान्ति ८-११, ९-२१, ११-२१, ११-२७, ११-२८,
 ११-२९
 विशालम् ९-२१
 विशिष्टाः १-७
 विशिष्यते ३-७, ५-२, ६-९, ७-१७, १२-१२
 विशुद्धया १८-५१

विशुद्धात्मा ५-७
 विश्वतोमुखः १०-३३
 विश्वतोमुखम् ९-१५, ११-११
 विश्वमूर्ते ११-४६
 विश्वम् ११-१९, ११-३८, ११-४७
 विश्वरूप ११-१६
 विश्वस्य ११-१८, ११-३८
 विश्वे ११-२२
 विश्वेश्वर ११-१६
 विषमे २-२
 विषम् १८-३७, १८-३८
 विषयप्रवाला: १५-२
 विषया: २-५९
 विषयान् २-६२, २-६४, ४-२६, १५-९, १८-५९
 विषयेन्द्रियसंयोगात् १८-३८
 विषादम् १८-३५
 विषादी १८-२८
 विषीदन् १-२८
 विषीदन्तम् २-१, २-१०
 विष्टभ्य १०-४२
 विष्ठितम् १३-१७
 विष्णुः १०-२१
 विष्णो ११-२४, ११-३०
 विसर्गः ८-३

विसृजन् ५-९
 विसृजामि ९-७, ९-८
 विसृज्य १-४७
 विस्तरः १०-४०
 विस्तरशः ११-२, १६-६
 विस्तरस्य १०-१९
 विस्तरेण १०-१८
 विस्तारम् १३-३०
 विस्मयः १८-७७
 विस्मयाविष्टः ११-१४
 विस्मिताः ११-२२
 विहाय २-२२, २-७१
 विहारशाय्यासनभोजनेषु ११-४२
 विहिताः १७-२३
 विहितान् ७-२२
 वीक्षन्ते ११-२२
 वीतरागभयक्रोधः २-५६
 वीतरागभयक्रोधाः ४-१०
 वीतरागाः ८-११
 वीर्यवान् १-५, १-६
 वृकोदरः १-१५
 वृजिनम् ४-३६
 वृष्णीनाम् १०-३७
 वेगम् ५-२३
 वेत्ता ११-३८

वेत्ति २-१९, ४-९, ६-२१, ७-३, १०-३, १०-७,
 १३-१, १३-२३, १४-१९, १८-२१, १८-३०
 वेत्थ ४-५, १०-१५
 वेद २-२१, २-२९, ४-५, ७-२६, १५-१
 वेद्यज्ञाध्ययनैः ११-४८
 वेदवादरता: २-४२
 वेदवित् १५-१, १५-१५
 वेदविदः ८-११
 वेदा: २-४५, १७-२३
 वेदानाम् १०-२२
 वेदान्तकृत् १५-१५
 वेदितव्यम् ११-१८
 वेदितुम् १८-१
 वेदे १५-१८
 वेदेषु २-४६, ८-२८
 वेदैः ११-५३, १५-१५
 वेद्यः १५-१५
 वेद्यम् ९-१७, ११-३८
 वेपथुः १-२९
 वेपमानः ११-३५
 वैनतेयः १०-३०
 वैराग्यम् १३-८, १८-५२
 वैराग्येण ६-३५
 वैरिणम् ३-३७

वैश्यकर्म १८-४४
 वैश्याः ९-३२
 वैश्वानरः १५-१४
 व्यक्तमध्यानि २-२८
 व्यक्तयः ८-१८
 व्यक्तिम् ७-२४, १०-१४
 व्यतिरिष्यति २-५२
 व्यतीतानि ४-५
 व्यथन्ति १४-२
 व्यथयन्ति २-१५
 व्यथा ११-४९
 व्यथिष्ठाः ११-३४
 व्यदारयत् १-१९
 व्यपाश्रित्य ९-३२
 व्यपेतभीः ११-४९
 व्यवसायः १०-३६, १८-५९
 व्यवसायात्मिका २-४१, २-४४
 व्यवसितः ९-३०
 व्यवसिताः १-४५
 व्यवस्थितान् १-२०
 व्यवस्थितौ ३-३४
 व्यात्ताननम् ११-२४
 व्यासम् ११-२०
 व्याप्य १०-१६
 व्यामिश्रेण ३-२
 व्यासः १०-१३, १०-३७

व्यासप्रसादात् १८-७५

व्याहरन् ८-१३

व्युदस्य १८-५१

व्यूढम् १-२

व्यूढाम् १-३

व्रज १८-६६

व्रजेत २-५४

श

शंससि ५-१

शक्रोति ५-२३

शक्रोमि १-३०

शक्रोषि १२-९

शक्यः ६-३६, ११-४८, ११-५३, ११-५४

शक्यम् ११-४, १८-११

शक्यसे ११-८

शङ्करः १०-२३

शङ्खम् १-१२

शङ्खा: १-१३

शङ्खान् १-१८

शङ्खौ १-१४

शठः १८-२८

शतशः ११-५

शत्रुः १६-१४

शत्रुत्वे ६-६

शत्रुम् ३-४३

शत्रुवत् ६-६

शत्रून् ११-३३

शत्रौ १२-१८

शनैः ६-२५

शब्दः १-१३, ७-८, १७-२६

शब्दब्रह्म ६-४४

शब्दादीन् ४-२६, १८-५१

शमः ६-३, १०-४, १८-४२

शमम् ११-२४

शरणम् २-४९, ९-१८, १८-६२, १८-६६

शरीरम् १३-१, १५-८

शरीरयात्रा ३-८

शरीरवाङ्मनोभिः १८-१५

शरीरविमोक्षणात् ५-२३

शरीरस्थः १३-३१

शरीरस्थम् १७-६

शरीराणि २-२२

शरीरिणः २-१८

शरीरे १-२९, २-२०, ११-१३

शर्म ११-२५

शशाङ्कः ११-३९, १५-६

शशिसूर्यनेत्रम् ११-१९

शशिसूर्ययोः ७-८

शारी १०-२१
 शाश्वत् ९-३१
 शास्त्रपाण्यः १-४६
 शास्त्रभूताम् १०-३१
 शास्त्रसम्पाते १-२०
 शास्त्राणि २-२३
 शास्त्राः १५-२
 शाधि २-७
 शान्तः १८-५३
 शान्तरजसम् ६-२७
 शान्तिः २-६६, १२-१२, १६-२
 शान्तिम् २-७०, २-७१, ४-३९, ५-१२, ५-२९,
 ६-१५, ९-३१, १८-६२
 शारीरम् ४-२१, १७-१४
 शाश्वतः २-२०
 शाश्वतधर्मगोत्ता ११-१८
 शाश्वतम् १०-१२, १८-५६, १८-६२
 शाश्वतस्य १४-२७
 शाश्वताः १-४३
 शाश्वतीः ६-४१
 शाश्वते ८-२६
 शास्त्रम् १५-२०, १६-२४
 शास्त्रविधानोक्तम् १६-२४
 शास्त्रविधिम् १६-२३, १७-१
 शिखण्डी १-१७

शिखरिणाम् १०-२३
 शिरसा ११-१४
 शिष्यः २-७
 शिष्येण १-३
 शीतोष्णसुखदुःखदाः २-१४
 शीतोष्णसुखदुःखेषु ६-७, १२-१८
 शुक्लः ८-२४
 शुक्लकृष्णे ८-२६
 शुचः १६-५, १८-६६
 शुचिः १२-१६
 शुचीनाम् ६-४१
 शुचौ ६-११
 शुनि ५-१८
 शुभान् १८-७१
 शुभाशुभपरित्यागी १२-१७
 शुभाशुभफलैः ९-२८
 शुभाशुभम् २-५७
 शूद्रस्य १८-४४
 शूद्राः ९-३२
 शूद्राणाम् १८-४१
 शूराः १-४, १-९
 शृणु २-३९, ७-१, १०-१, १२-२, १६-६, १७-२,
 १७-७, १८-४, १८-११, १८-२९, १८-३६,
 १८-४५, १८-६४
 शृणुयात् १८-७१

शृणोति २-२९
 शृण्वतः १०-१८
 शृण्वन् ५-८
 शैब्यः १-५
 शोकम् २-८, १८-३५
 शोकसंविग्नमानसः १-४७
 शोचति १२-१७, १८-५४
 शोचितुमर्हसि २-२६
 शोचितुम् २-२७, २-३०
 शोषयति २-२३
 शौचम् १३-७, १६-३, १६-७, १७-१४, १८-४२
 शौर्यम् १८-४३
 श्याला: १-३४
 श्रद्धानाः १२-२०
 श्रद्धः १७-३
 श्रद्धया ६-३७, ७-२१, ७-२२, ९-२३, १२-२, १७-१, १७-१७
 श्रद्धा १७-२, १७-३
 श्रद्धामयः १७-३
 श्रद्धाम् ७-२१
 श्रद्धावन्तः ३-३१
 श्रद्धावान् ४-३९, ६-४७, १८-७१
 श्रद्धाविरहितम् १७-१३
 श्रिताः ९-१२

श्रीः १०-३४, १८-७८
 श्रीमताम् ६-४१
 श्रीमत् १०-४१
 श्रुतम् १८-७२
 श्रुतवान् १८-७५
 श्रुतस्य २-५२
 श्रुतिपरायणाः १३-२५
 श्रुतिमत् १३-१३
 श्रुतिविप्रतिपन्ना २-५३
 श्रुतौ ११-२
 श्रुत्वा २-२९, ११-३५, १३-२५
 श्रेयः १-३१, २-५, २-७, २-३१, ३-२, ३-११, ३-३५, ५-१, १२-१२, १६-२२
 श्रेयान् ३-३५, ४-३३, १८-४७
 श्रेष्ठः ३-२१
 श्रोतव्यस्य २-५२
 श्रोत्रम् १५-९
 श्रोत्रादीनि ४-२६
 श्रोष्यसि १८-५८
 श्वपाके ५-१८
 श्वशुराः १-३४
 श्वशुरान् १-२७
 श्वसन् ५-८
 श्वेतैः १-१४

षण्मासाः ८-२४, ८-२५

स

संज्ञार्थम् १-७

संयतेन्द्रियः ४-३९

संयमताम् १०-२९

संयमाग्निषु ४-२६

संयमी २-६९

संयम्य २-६१, ३-६, ६-१४, ८-१२

संयाति २-२२, १५-८

संवादम् १८-७०, १८-७४, १८-७६

संवृत्तः ११-५१

संशयः ८-५, १०-७, १२-८

संशयम् ४-४२, ६-३९

संशयस्य ६-३९

संशयात्मनः ४-४०

संशयात्मा ४-४०

संशितब्रताः ४-२८

संशुद्धकिल्बिषः ६-४५

संश्रिताः १६-१८

संसारेषु १६-१९

संसिद्धिम् ३-२०, ८-१५, १८-४५

संसिद्धौ ६-४३

संस्तम्य ३-४३

संस्पर्शजाः ५-२२

संस्मृत्य १८-७६, १८-७७

संहरते २-५८

सः १-१३, १-१९, १-२७, २-१५, २-२१, २-७०,
२-७१, ३-६, ३-७, ३-१२, ३-१६, ३-२१,
३-४२, ४-२, ४-३, ४-९, ४-१४, ४-१८,
४-२०, ५-३, ५-५, ५-१०, ५-२१, ५-२३,
५-२४, ५-२८, ६-१, ६-२३, ६-३०, ६-
३१, ६-३२, ६-४४, ६-४७, ७-१७, ७-१८,
७-१९, ७-२२, ८-५, ८-१०, ८-१३, ८-
१९, ८-२०, ८-२२, ९-३०, १०-३, १०-७,
११-१४, ११-५५, १२-१४, १२-१५, १२-१६,
१२-१७, १३-३, १३-२३, १३-२७, १३-२९,
१४-१९, १४-२५, १४-२६, १५-१, १५-१९,
१६-२३, १७-३, १७-११, १८-८, १८-९,
१८-११, १८-१६, १८-१७, १८-७१

सक्तः ५-१२

सक्तम् १८-२२

सक्ताः ३-२५

सखा ४-३, ११-४१, ११-४४

सखीन् १-२६

सख्युः ११-४४

सगद्गदम् ११-३५

सङ्करः १-४२

सङ्करस्य ३-२४

सङ्कल्पप्रभवान् ६-२४

सङ्ख्ये १-४७, २-४

सङ्गः २-४७, २-६२

सङ्गम् २-४८, ५-१०, ५-११, १८-६, १८-९
 सङ्गरहितम् १८-२३
 सङ्गवर्जितः ११-५५
 सङ्गविवर्जितः १२-१८
 सङ्गात् २-६२
 सङ्ग्रहेण ८-११
 सङ्ग्रामम् २-३३
 सङ्गातः १३-६
 सचराचरम् ९-१०, ११-७
 सचेताः ११-५१
 सज्जते ३-२८
 सज्जन्ते ३-२९
 सञ्जनयन् १-१२
 सञ्जय १-१
 सञ्जयति १४-९
 सञ्जायते २-६२, १३-२६, १४-१७
 सतः २-१६
 सततम् ३-१९, ६-१०, ८-१४, ९-१४, १२-१४,
 १७-२४, १८-५७
 सततयुक्ताः १२-१
 सततयुक्तानाम् १०-१०
 सति १८-१६
 सत् ९-१९, ११-३७, १३-१२, १७-२३, १७-२६,
 १७-२७
 सत्कारमानपूजार्थम् १७-१८

सत्त्वम् १०-३६, १०-४१, १३-२६, १४-५, १४-६,
 १४-९, १४-१०, १४-११, १७-१, १८-४०
 सत्त्ववताम् १०-३६
 सत्त्वसंशुद्धिः १६-१
 सत्त्वसमाविष्टः १८-१०
 सत्त्वस्थाः १४-१८
 सत्त्वात् १४-१७
 सत्त्वानुरूपा १७-३
 सत्त्वे १४-१४
 सत्यम् १०-४, १६-२, १६-७, १७-१५, १८-६५
 सदसद्योनिजन्मसु १३-२१
 सदा ५-२८, ६-१५, ६-२८, ८-६, १०-१७, १८-
 ५६
 सद्वशः १६-१५
 सद्वशम् ३-३३, ४-३८
 सद्वशी ११-१२
 सदोषम् १८-४८
 सद्घावे १७-२६
 सनातनः २-२४, ८-२०, ११-१८, १५-७
 सनातनम् ४-३१, ७-१०
 सनातनाः १-४०
 सन् ४-६
 सन्तः ३-१३
 सन्तरिष्यसि ४-३६
 सन्तुष्टः ३-१७, १२-१४, १२-१९
 सन्दर्शयन्ते ११-२७

| | |
|------------------------------------|-------------------------------------|
| सन्नियम्य १२-४ | समदुःखसुखः १२-१३, १४-२४ |
| सन्निविष्टः १५-१५ | समदुःखसुखम् २-१५ |
| सन्ध्यसनात् ३-४ | समधिगच्छति ३-४ |
| सन्ध्यस्य ३-३०, ५-१३, १२-६, १८-५७ | समन्ततः ६-२४ |
| सन्ध्यासः ५-२, ५-६, १८-७ | समन्तात् ११-१७, ११-३० |
| सन्ध्यासम् ५-१, ६-२, १८-२ | समबुद्धयः १२-४ |
| सन्ध्यासयोगयुक्तात्मा ९-२८ | समबुद्धिः ६-९ |
| सन्ध्यासस्य १८-१ | समम् ५-१९, ६-१३, ६-३२, १३-२७, १३-२८ |
| सन्ध्यासिनाम् १८-१२ | समलोष्टाशमकाञ्चनः ६-८, १४-२४ |
| सन्ध्यासी ६-१ | समवस्थितम् १३-२८ |
| सन्ध्यासेन १८-४९ | समवेताः १-१ |
| सपत्नान् ११-३४ | समवेतान् १-२५ |
| सप्त १०-६ | समाः ६-४१ |
| समः २-४८, ४-२२, ९-२९, १२-१८, १८-५४ | समागताः १-२३ |
| समक्षम् ११-४२ | समाचर ३-९, ३-१९ |
| समग्रम् ४-२३, ७-१, ११-३० | समाचरन् ३-२६ |
| समग्रान् ११-३० | समाधातुम् १२-९ |
| समचित्तत्वम् १३-९ | समाधाय १७-११ |
| समता १०-५ | समाधिस्थस्य २-५४ |
| समतीतानि ७-२६ | समाधौ २-४४, २-५३ |
| समतीत्य १४-२६ | समाप्नोषि ११-४० |
| समत्वम् २-४८ | समारम्भाः ४-१९ |
| समदर्शनः ६-२९ | समासतः १३-१८ |
| समदर्शिनः ५-१८ | समासेन १३-३, १३-६, १८-५० |
| | समाहर्तुम् ११-३२ |
| | समाहितः ६-७ |

समितिज्ञयः १-८
 समिद्धः ४-३७
 समीक्ष्य १-२७
 समुद्धर्ता १२-७
 समुद्रम् २-७०, ११-२८
 समुपस्थितम् १-२८, २-२
 समुपाश्रितः १८-५२
 समृद्धम् ११-३३
 समृद्धवेगाः ११-२९
 समे २-३८
 समौ ५-२७
 सम्पत् १६-५
 सम्पदम् १६-३, १६-४, १६-५
 सम्पद्यते १३-३०
 सम्पश्यन् ३-२०
 सम्प्रकीर्तिः १८-४
 सम्प्रतिष्ठा १५-३
 सम्प्रवृत्तानि १४-२२
 सम्प्रेक्ष्य ६-१३
 सम्पुतोदके २-४६
 सम्बन्धिनः १-३४
 सम्बवः १४-३
 सम्भवन्ति १४-४
 सम्भवामि ४-६, ४-८

सम्भावितस्य २-३४
 सम्मोहः २-६३
 सम्मोहम् ७-२७
 सम्मोहात् २-६३
 सम्यक् ५-४, ८-१०, ९-३०
 सरसाम् १०-२४
 सर्गः ५-१९
 सर्गाणाम् १०-३२
 सर्गे ७-२७, १४-२
 सर्पणाम् १०-२८
 सर्व ११-४०
 सर्वः ३-५, ११-४०
 सर्वकर्मणाम् १८-१३
 सर्वकर्मफलत्यागम् १२-११, १८-२
 सर्वकर्माणि ३-२६, ४-३७, ५-१३, १८-५६, १८-५७
 सर्वकामेभ्यः ६-१८
 सर्वकिल्बिषैः ३-१३
 सर्वक्षेत्रेषु १३-२
 सर्वगतः २-२४
 सर्वगतम् ३-१५, १३-३२
 सर्वगुह्यतमम् १८-६४
 सर्वज्ञानविमूढान् ३-३२
 सर्वतः २-४६, ११-१६, ११-१७, ११-४०, १३-१३
 सर्वत्र २-५७, ६-२९, ६-३०, ६-३२, १२-४, १३-२८, १८-४९

सर्वत्रगः ९-६
 सर्वत्रगम् १२-३
 सर्वत्रावस्थितः १३-३२
 सर्वथा ६-३१, १३-२३
 सर्वदुःखानाम् २-६५
 सर्वदुर्गाणि १८-५८
 सर्वदेहिनाम् १४-८
 सर्वद्वाराणि ८-१२
 सर्वद्वारेषु १४-११
 सर्वधर्मान् १८-६६
 सर्वपापेभ्यः १८-६६
 सर्वपापैः १०-३
 सर्वभावेन १५-१९, १८-६२
 सर्वभूतस्थम् ६-२९
 सर्वभूतस्थितम् ६-३१
 सर्वभूतहिते ५-२५, १२-४
 सर्वभूतात्मभूतात्मा ५-७
 सर्वभूतानाम् २-६९, ५-२९, ७-१०, १०-३९, १२-१३, १४-३, १८-६१
 सर्वभूतानि ६-२९, ७-२७, ९-४, ९-७, १८-६१
 सर्वभूताशयस्थितः १०-२०
 सर्वभूतेषु ३-१८, ७-९, ९-२९, ११-५५, १८-२०
 सर्वभूत् १३-१४

सर्वम् २-१७, ४-३३, ४-३६, ६-३०, ७-७, ७-१३, ७-१९, ८-२२, ८-२८, ९-४, १०-८, १०-१४, ११-४०, १३-१३, १८-४६
 सर्वज्ञानाम् ९-२४
 सर्वयोनिषु १४-४
 सर्वलोकमहेश्वरम् ५-२९
 सर्ववित् १५-१९
 सर्ववृक्षाणाम् १०-२६
 सर्ववेदेषु ७-८
 सर्वशः १-१८, २-५८, २-६८, ३-२३, ३-२७, ४-११, १०-२, १३-२९
 सर्वसङ्कल्पसञ्चासी ६-४
 सर्वस्य २-३०, ७-२५, ८-९, १०-८, १३-१७, १५-१५, १७-३, १७-७
 सर्वहरः १०-३४
 सर्वा: ८-१८, ११-२०, १५-१३
 सर्वाणि २-३०, २-६१, ३-२०, ४-५, ४-२७, ७-६, ९-६, १२-६, १५-१६
 सर्वान् १-२७, २-५५, २-७१, ४-३२, ६-२४, ११-१५
 सर्वारम्भपरित्यागी १२-१६, १४-२५
 सर्वारम्भाः १८-४८
 सर्वार्थान् १८-३२
 सर्वाश्रव्यमयम् ११-११
 सर्वे १-६, १-९, १-११, २-१२, २-७०, ४-१९, ४-३०, ७-१८, १०-१३, ११-२२, ११-२६, ११-३२, ११-३६, १४-१

सर्वेन्द्रियगुणभासम् १३-१४
 सर्वेन्द्रियविवर्जितम् १३-१४
 सर्वेभ्यः ४-३६
 सर्वेषाम् १-२५, ६-४७
 सर्वेषु १-११, २-४६, ८-७, ८-२०, ८-२७, १३-२७, १८-२१, १८-५४
 सर्वैः १५-१५
 सविकारम् १३-६
 सविज्ञानम् ७-२
 सव्यसाचिन् ११-३३
 सशारम् १-४७
 सह १-२२, ११-२६, १३-२३
 सहजम् १८-४८
 सहदेवः १-१६
 सहयज्ञाः ३-१०
 सहसा १-१३
 सहस्रकृत्वः ११-३९
 सहस्रबाहो ११-४६
 सहस्रयुगपर्यन्तम् ८-१७
 सहस्रशः ११-५
 सहस्रेषु ७-३
 सा २-६९, ६-१९, ११-१२, १७-२, १८-३०, १८-३१, १८-३२, १८-३३, १८-३४, १८-३५
 साक्षात् १८-७५
 साक्षी ९-१८

सागरः १०-२४
 साङ्घ्यम् ५-५
 साङ्घ्ययोगौ ५-४
 साङ्घ्यानाम् ३-३
 साङ्घ्ये २-३९, १८-१३
 साङ्घ्येन १३-२४
 साङ्घ्यैः ५-५
 सात्त्विकः १७-११, १८-९, १८-२६
 सात्त्विकप्रिया: १७-८
 सात्त्विकम् १४-१६, १७-१७, १७-२०, १८-२०, १८-२३, १८-३७
 सात्त्विकाः ७-१२, १७-४
 सात्त्विकी १७-२, १८-३०, १८-३३
 सात्यकिः १-१७
 साधर्म्यम् १४-२
 साधिभूताधिदैवम् ७-३०
 साधियज्ञम् ७-३०
 साधुः ९-३०
 साधुभावे १७-२६
 साधुषु ६-९
 साधूनाम् ४-८
 साध्याः ११-२२
 साम ९-१७
 सामर्थ्यम् २-३६
 सामवेदः १०-२२
 सामासिकस्य १०-३३

साम्नाम् १०-३५
 साम्ये ५-१९
 साम्येन ६-३३
 साहङ्कारेण १८-२४
 सिंहनादम् १-१२
 सिद्धः १६-१४
 सिद्धये ७-३, १८-१३
 सिद्धसङ्घाः ११-३६
 सिद्धानाम् ७-३, १०-२६
 सिद्धिः ४-१२
 सिद्धिम् ३-४, ४-१२, १२-१०, १४-१, १६-२३,
 १८-४५, १८-४६, १८-५०
 सिद्धौ ४-२२
 सिद्ध्यसिद्ध्योः २-४८, १८-२६
 सीदन्ति १-२९
 सुकृतदुष्कृते २-५०
 सुकृतम् ५-१५
 सुकृतस्य १४-१६
 सुकृतिनः ७-१६
 सुखदुःखसंज्ञैः १५-५
 सुखदुःखानाम् १३-२०
 सुखदुःखे २-३८
 सुखम् २-६६, ४-४०, ५-३, ५-१३, ५-२१, ६-
 २१, ६-२७, ६-२८, ६-३२, १०-४, १३-६,
 १६-२३, १८-३६, १८-३७, १८-३८, १८-३९

सुखसङ्गेन १४-६
 सुखस्य १४-२७
 सुखानि १-३२, १-३३
 सुखिनः १-३७, २-३२
 सुखी ५-२३, १६-१४
 सुखे १४-९
 सुखेन ६-२८
 सुखेषु २-५६
 सुघोषमणिपुष्पकौ १-१६
 सुदुराचारः ९-३०
 सुदुर्दर्शम् ११-५२
 सुदुर्लभः ७-१९
 सुदुष्करम् ६-३४
 सुनिश्चितम् ५-१
 सुरगणाः १०-२
 सुरसङ्घाः ११-२१
 सुराणाम् २-८
 सुरेन्द्रलोकम् ९-२०
 सुलभः ८-१४
 सुविरुद्धमूलम् १५-३
 सुसुखम् ९-२
 सुहृत् ९-१८
 सुहृदः १-२७
 सुहृदम् ५-२९

सुहन्मित्रार्थुदासीनमध्यस्थदेष्यबन्धुषु ६-९
 सूक्ष्मत्वात् १३-१५
 सूतपुत्रः ११-२६
 सूत्रे ७-७
 सूयते ९-१०
 सूर्यः १५-६
 सूर्यसहस्रस्य ११-१२
 सृजति ५-१४
 सृजामि ४-७
 सृती ८-२७
 सृष्टम् ४-१३
 सृष्टा ३-१०
 सेनयोः १-२१, १-२४, १-२७, २-१०
 सेनानीनाम् १०-२४
 सेवते १४-२६
 सेवया ४-३४
 सैन्यस्य १-७
 सोहुम् ५-२३, ११-४४
 सोमः १५-१३
 सोमपाः ९-२०
 सौक्ष्म्यात् १३-३२
 सौभद्रः १-६, १-१८
 सौमदत्तिः १-८
 सौम्यत्वम् १७-१६

सौम्यम् ११-५१
 सौम्यवपुः ११-५०
 स्कन्दः १०-२४
 स्तब्धः १८-२८
 स्तब्धाः १६-१७
 स्तुतिभिः ११-२१
 स्तुवन्ति ११-२१
 स्तेनः ३-१२
 स्त्रियः ९-३२
 स्त्रीषु १-४१
 स्थाणुः २-२४
 स्थानम् ५-५, ८-२८, ९-१८, १८-६२
 स्थाने ११-३६
 स्थापय १-२१
 स्थापयित्वा १-२४
 स्थावरजङ्गमम् १३-२६
 स्थावराणाम् १०-२५
 स्थास्यति २-५३
 स्थितः ५-२०, ६-१०, ६-१४, ६-२१, ६-२२, १०-४२, १८-७३
 स्थितधीः २-५४, २-५६
 स्थितप्रज्ञः २-५५
 स्थितप्रज्ञस्य २-५४
 स्थितम् ५-१९, १३-१६, १५-१०
 स्थिताः ५-१९
 स्थितान् १-२६

स्थिति: २-७२, १७-२७

स्थितिम् ६-३३

स्थितौ १-१४

स्थित्वा २-७२

स्थिरः ६-१३

स्थिरबुद्धिः ५-२०

स्थिरमतिः १२-१९

स्थिरम् ६-११, १२-९

स्थिराः १७-८

स्थिराम् ६-३३

स्थैर्यम् १३-७

स्त्रिगधाः १७-८

स्पर्शनम् १५-९

स्पर्शान् ५-२७

स्पृशन् ५-८

स्पृहा ४-१४, १४-१२

स्म २-३

स्मरति ८-१४

स्मरन् ३-६, ८-५, ८-६

स्मृतः १७-२३

स्मृतम् १७-२०, १७-२१, १८-२८

स्मृता ६-१९

स्मृतिः १०-३४, १५-१५, १८-७३

स्मृतिभ्रंशात् २-६३

स्मृतिविभ्रमः २-६३

स्यन्दने १-१४

स्यात् १-३६, २-७, ३-१७, १०-३९, ११-१२, १५-२०, १८-४०

स्याम १-३७

स्याम् ३-२४, १८-७०

स्युः ९-३२

संसते १-३०

सोतसाम् १०-३१

स्वकम् ११-५०

स्वकर्मणा १८-४६

स्वकर्मनिरतः १८-४५

स्वचक्षुषा ११-८

स्वजनम् १-२८, १-३१, १-३७, १-४५

स्वतेजसा ११-१९

स्वधर्मः ३-३५, १८-४७

स्वधर्मम् २-३१, २-३३

स्वधर्मे ३-३५

स्वधा ९-१६

स्वनुष्ठितात् ३-३५, १८-४७

स्वपन् ५-८

स्वभम् १८-३५

स्वबान्धवान् १-३७

स्वभावः ५-१४, ८-३

स्वभावजम् १८-४२, १८-४३, १८-४४

स्वभावजा १७-२

स्वभावजेन १८-६०
 स्वभावनियतम् १८-४७
 स्वभावप्रभवैः १८-४१
 स्वम् ६-१३
 स्वयम् ४-३८, १०-१३, १०-१५, १८-७५
 स्वया ७-२०
 स्वर्गतिम् ९-२०
 स्वर्गद्वारम् २-३२
 स्वर्गपराः २-४३
 स्वर्गम् २-३७
 स्वर्गलोकम् ९-२१
 स्वल्पम् २-४०
 स्वस्ति ११-२१
 स्वस्थः १४-२४
 स्वस्याः ३-३३
 स्वाध्यायः १६-१
 स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः ४-२८
 स्वाध्यायाभ्यसनम् १७-१५
 स्वाम् ४-६, ९-८
 स्वे १८-४५
 स्वेन १८-६०

ह

ह २-९

हतः २-३७, १६-१४
 हतम् २-१९
 हतान् ११-३४
 हत्वा १-३१, १-३६, १-३७, २-५, २-६, १८-१७
 हनिष्ये १६-१४
 हन्त १०-१९
 हन्तारम् २-१९
 हन्ति २-१९, २-२१, १८-१७
 हन्तुम् १-३५, १-३७, १-४५
 हन्यते २-१९, २-२०
 हन्यमाने २-२०
 हन्युः १-४६
 हयैः १-१४
 हरति २-६७
 हरन्ति २-६०
 हरिः ११-९
 हरेः १८-७७
 हर्षम् १-१२
 हर्षशोकान्वितः १८-२७
 हर्षमर्षभयोद्भेगैः १२-१५
 हविः ४-२४
 हस्तात् १-३०
 हस्तिनि ५-१८
 हानिः २-६५

हि १-११, १-३७, १-४२, २-५, २-८, २-१५, २-२७, २-३१, २-४१, २-४९, २-५१, २-६०, २-६१, २-६५, २-६७, ३-५, ३-८, ३-१२, ३-१९, ३-२०, ३-२३, ३-३४, ३-४१, ४-३, ४-७, ४-१२, ४-१७, ४-३८, ५-३, ५-१९, ५-२२, ६-२, ६-४, ६-५, ६-२७, ६-३४, ६-३९, ६-४०, ६-४२, ६-४४, ७-१४, ७-१७, ७-१८, ७-२२, ८-२६, ९-२४, ९-३०, ९-३२, १०-२, १०-१४, १०-१६, १०-१८, १०-१९, ११-२, ११-२०, ११-२१, ११-२४, ११-३१, १२-५, १२-१२, १३-२१, १३-२८, १४-२७, १८-४, १८-११, १८-४८

हिंसात्मकः १८-२७

हिंसाम् १८-२५

हितकाम्यया १०-१

हितम् १८-६४

हित्वा २-३३

हिनस्ति १३-२८

हिमालयः १०-२५

हुतम् ४-२४, ९-१६, १७-२८

हृतज्ञानाः ७-२०

हृत्स्थम् ४-४२

हृदयदौर्बल्यम् २-३

हृदयानि १-१९

हृदि ८-१२, १३-१७, १५-१५

हृदेशो १८-६१

हृद्याः १७-८

हृषितः ११-४५

हृषीकेश ११-३६, १८-१

हृषीकेशः १-१५, १-२४, २-१०

हृषीकेशम् १-२१, २-९

हृष्टरोमा ११-१४

हृष्यति १२-१७

हृष्यामि १८-७६, १८-७७

हे ११-४१

हेतवः १८-१५

हेतुः १३-२०

हेतुना ९-१०

हेतुमद्धिः १३-४

हेतोः १-३५

हियते ६-४४

हीः १६-२

